नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—२५

दीनदयालगिरि-ग्रंथावली

श्यामसुन्दरदास बी० ए० संपादित
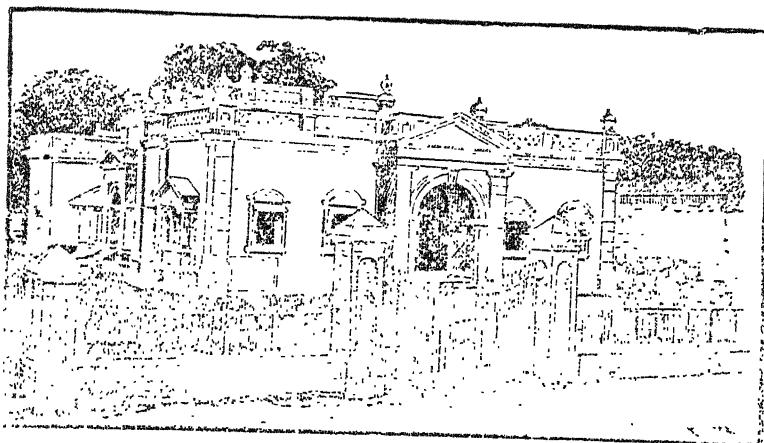
और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा प्रकाशित।

संवत् १९७६

Printed by Apurva Krishna Bose, at the Indian Press, Allahabad.

भूमिका ।

दीनदयाल गिरिजी के केवल तीन ग्रंथ अब तक प्रकाशित हुए थे—अनुरागबाग, दृष्टांततरंगिणी और अन्योक्तिकल्पद्रुम । इनमें से पहला अब दुष्प्राप्य है। इनके ग्रंथों को देखने से ही यह पता लग जाता है कि ये हिंदी के उच्च श्रेणी के कवि थे । इनकी रचना-शैली मनोहर और रसपूर्ण है। सबसे बढ़कर बात तो इनकी कविता में यह है कि इनकी भाषा बहुत चलती हुई और स्वच्छ है, उसमें व्यर्थ शब्दों की भरमार नहीं है। जितने शब्द भावनिर्वाह के लिये आवश्यक हैं उतने ही का प्रयोग हुआ है।

इनके जीवन के संबंध में लोगों को इसके अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं है कि ये काशी-निवासी थे। शिवसिंह सरोजकार ने इनके विषय में केवल इतना लिखा है कि "ये कवि बड़े महान् पंडित संस्कृत के थे और भाषा साहित्य में अन्योक्तिकल्पद्रुम नाम ग्रंथ बहुत ही सुंदर बनाया है और अनुरागबाग और बागबहार ये दो ग्रंथ भी इनके बहुत विचित्र हैं"। अन्योक्तिकल्पद्रुम की भूमिका में पं० विजयानंद त्रिपाठी ने लिखा है कि "ये काशीपुरी के पश्चिम द्वार देहली-विनायक पर रहते थे*। २५ वर्ष के लगभग इनको

*इतना परिचय कवि ने स्वयं अनुरागबाग में दिया है।

सुखद देहली पै जहाँ बसत विनायक देव।
पश्चिम द्वार उदार है कासी को सुर सेव॥

अन्योक्तिकल्पद्रुम में केवल इतना ही लिखा है—सोभित तेहि औसर विषे बसि कासी सुखधाम।

काशीवास पाए हुआ।" यह भूमिका सं० १९४७ की लिखी हुई है अतः इसके अनुसार इनकी मृत्यु सं० १९२२ के लगभग हुई। इसके अतिरिक्त इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं था।

त्रिपाठी जी ने काशी में इनका ठिकाना जो बतलाया उससे इनके संबंध में खोज करने में बड़ी सहायता मिली। यदि वे इतना न लिख देते तो किसी बात का पता चलना कठिन ही था। इस सूत्र को पाकर मैंने इनके संबंध में कुछ खोज की जिससे और कई बातें विदित हुई। बहुत कुछ पता पं० भोलानाथ मिश्र से लगा जो देहली-विनायक के पास हरिहरा गाँव में रहते हैं और ७५ वर्ष के हैं। इन्होंने बाबा दीनदयाल गिरि को देखा था।

यह तो प्रसिद्ध ही है कि ये गृहस्थ नहीं थे, दसनामी संन्यासियों में थे। इनके जन्मकाल का कुछ पता नहीं चलता। जाति का भी ठीक निश्चय नहीं, इतना अवश्य निश्चित है कि बनारस के आस पास के किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय कुल में इनका जन्म हुआ था। वहीं से इनके गुरु ने इन्हें प्राप्त किया। इनके गुरु कुशागिरि सेंगरे (मालदा के पास) से देहली-विनायक आए और वहाँ जमींदारी लेकर बस गए। कुशागिरि के तीन शिष्य थे—दीनदयालगिरि, स्वयंवरगिरि (एकाक्ष) और रामदयालगिरि। कुशागिरि बहुत ऋण छोड़ कर मरे थे। इससे उनकी मृत्यु के उपरांत देहली-विनायक के पास की सारी जमीन नीलाम हो गई। यह जमीन अब काशीवासी गोकुलदास विट्ठलदास (गुजराती) के घराने में है। बरना के तट पर जो प्रसिद्ध रामेश्वर मंदिर है उसमें भी देहली-विनायक के महंत का कुछ अंश था। कुशागिरि के मरने के पीछे तीनों चेलों में अनबन हुई और वे बहुत दिनों तक लड़ते रहे। लड़ानेवाले आस-पास के जमींदार थे जो बची खुची जमीन हड़प करना चाहते थे। दीनदयाल गिरिजी को इस बात का बड़ा दुःख रहता था। जमींदारी आदि बिक जाने

पर इन्हें बहुत खिन्न देख अमेठी के तत्कालीन राजा साहब ने इन्हें अपने यहाँ चलकर रहने के लिये कहा। पर ये स्वतंत्र वृत्ति के मनुष्य थे, इन्होंने इसे स्वीकार न किया। इनका यह पद्य उसी समय का कहा हुआ है—

पराधीनता दुख महा सुख जग में स्वाधीन।
सुखी रमत सुक बन विषै कनक पींजरे दीन॥

देहली-विनायक के पास मटौली गाँव में इनका मठ था जहाँ ये बराबर रहे। यह मठ अब गिरकर खंडहर हो गया है। इस मठ की एक दीवार पर इनका एक चित्र गेरू से बना हुआ था पर अब उस दीवार ही का पता नहीं है, तब चित्र कहाँ! केवल एक कुँआ अब रह गया है।

यद्यपि ये मठधारी शैव संन्यासी थे, पर साम्प्रदायिक दुराग्रह इनमें नहीं था। ये बहुत सहृदय और उदार थे, इससे कृष्ण की भक्ति का संस्कार भी इनमें पूरा पूरा था जैसा कि इनकी रचनाओं से प्रकट होता है। भारतेंदुजी के पिता बाबू गोपालचंदजी के साथ इनका बहुत कुछ सौहार्द्र था, इससे हिंदी काव्य की ओर इनकी रुचि हुई। इन्होंने काशी में आकर संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया, पर किससे और कहाँ यह ज्ञात नहीं। कविता इनकी दिन दिन प्रौढ़ होती गई।

स्वभाव इनका अत्यंत सरल और विनोदप्रिय था। ये बात बात में लोकोक्तियों तथा श्लेष का प्रयोग करके लोगों को हँसाते थे। दया भी इनमें बड़ी थी। दूसरे का दुःख ये नहीं देख सकते थे। एक बार अकाल में इनके यहाँ एक बहुत दीन और दुखी मनुष्य आया। इनके पास धन आदि तो रहा नहीं, पर उसे इन्होंने अच्छी तरह भोजन कराया और घर में जो कुछ मिला सब उसे दे दिया। आत्माभिमान इनमें इतना था कि कितने ही दुःख में रहने पर भी ये किसी

से कुछ याचना नहीं करते थे। काशीनरेश तथा और राजा महाराजा जो इनकी विद्या और गुणों से परिचित थे प्रच्छन्न रूप से इनकी सहायता समय समय पर करते थे। ये जैसे गुणी थे वैसे ही गुणग्राही भी थे। कवियों का आना जाना इनके यहाँ बराबर लगा रहता था और ये उनका यथोचित आदर-सम्मान करते थे। इनकी आर्थिक दशा अच्छी न रहने का एक कारण यह भी था। पर और मठधारी महंतों के समान कुमार्ग में इन्होंने एक पैसा नहीं लगाया। इनका चरित्र बहुत निर्मल था। ये प्रायः घोड़े पर चढ़कर निकलते थे और गेरुए रंग की कत्तनी दार पगड़ी बांधते थे। घोड़े की पहचान इन्हें अच्छी थी।

काशी से इन्हें बहुत प्रेम था। ये काशी छोड़ना नहीं चाहते थे। राजा अमेठी आदि के बुलाने पर इनके न जाने का एक कारण यह भी था। वैराग्यदिनेश में काशी के प्रति इनकी प्रीति और भक्ति टपकी पड़ती है। अस्तु, कहा जाता है कि मृत्युपर्यंत ये काशी में ही रहे। यहीं मणिकर्णिका घाट के निकट छप्पन-विनायक पर इनका परलोकवास हुआ। कुछ लोग कहते हैं कि पिछले दिनों में ये मेंगरे चले गए और वहीं परम धाम को प्राप्त हुए पर यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि ये बहुत वृद्ध होकर मरे। वृद्धावस्था का इन्होंने चित्र भी अच्छा खींचा है। अस्तु, पंडित विजयानंद त्रिपाठी ने इनका मृत्युकाल जो सं० १९२२ के लगभग बतलाया है वह निश्चित समझना चाहिए।

इस संग्रह में इनके पांच ग्रंथ दिए हैं। पहला ग्रंथ "अनुरागबाग" है, जो संवत् १८८८ में बना। दूसरा ग्रंथ दृष्टांत-तरंगिणी है जो संवत् १८७९ में बनी। तीसरा ग्रंथ अन्योक्ति-माला है। इसके निर्माण-काल का पता नहीं चलता। चौथा ग्रंथ वैराग्यदिनेश है जो संवत् १९०६ में बना। अंतिम ग्रंथ अन्योक्ति-

कल्पद्रुम है। इसका निर्माण काल संवत् १९१२ है। पहले चारों ग्रंथ एक हस्तलिखित पुस्तक से लिए गए हैं जिसका लिपि-काल संवत् १९०६ है। जिन महाशय के पास से यह हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई है उनका कहना है कि यह दीनदयालगिरि के हाथ की ही लिखी हुई है। अन्योक्तिकल्पद्रुम को अन्योक्तिमाला का परिवर्द्धित और संशोधित संस्करण मानना चाहिए। अन्योक्तिकल्पद्रुम एक हस्त-लिखित प्रति तथा भारतजीवन प्रेस की छपी प्रति के आधार पर संपादित हुआ है। इस हस्तलिखित प्रति में कोई संवत् नहीं दिया है। इस विवरण से यह प्रगट होता है कि दीनदयालगिरि का कविता-काल संवत् १८७९ में प्रारंभ और संवत् १९१२ में समाप्त होता है। दृष्टांततरंगिणी की रचना को देखकर यह मानना पड़ता है कि यह कवि की आरंभिक कविता नहीं है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि कवि ने कविता लिखने का अभ्यास कम से कम १०, १५ वर्ष पहले प्रारंभ किया था। शिवसिंहसरोज में इनके एक और ग्रंथ "बागबहार" का नाम दिया है। पर ऐसे किसी ग्रंथ का अबतक पता नहीं चला है। मेरी समझ में "अनुरागबाग" और "बागबहार" एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं, ये दो स्वतंत्र ग्रंथ नहीं हैं।

निम्नलिखित छंद भारतेंदु बा० हरिश्चंद्र के दौहित्र बाबू व्रज-रत्नदास से प्राप्त हुए हैं। उनका कहना है कि ये अनुराग बाग के अंश हैं।

सखी व्यंगोक्ति लच्छिता ते

चैत की चाँदनी चारु चमेली को जीति लई मुसुकानि तिहारी। डारति चंदहि मंद किए मुख की सुखमा प्रगटी अति भारी॥ दाडिम बीजन कों रद पै दुति पै दुति दामिन की गहवारी। खंजन कंजन के मदगंजन नैन लसे यह चैन कहा री॥ १०३. अ.

दूती वचन रूपगर्विता ते

गौन विलोकतही गजरात लजैं मृगराज लखे करि हाँके। कंजन खंजन सेत बनै न पिया मनरंजन हैं मद छाके॥ तो मुखचंद निरीछन कों ललचैं चख चारु चकोर लला के। दूती के बैन प्रवीन तिन्हैं सुनि बाल के लाल भए दृग बांके॥ १०३. आ.

अथ सवैया

तीखन तेज पिता जम के तिनके कुल मैं सियनाथ सुहावत। बाळलहूं की सिया पै किया अति हेत हिया मैं हुते दुख पावत॥ स्याम सुधा करके कुल ते कढ़ि काहे वियोग विषागि बढावत। ऊधव जू छलहीन हमैं लखि दीन कहा दुख पीन सहावत॥ २९६. अ.

नीरधि नाँघि गए हनुमान अँदेस नसाय सँदेस लै आए। सों सुनि कै विलखाय सियाबर वारिधि बांधि कै व्याकुल धाए॥ ऊधव जू हति कै अरि को अति प्रान प्रिया के वियोग बहाए। हा अपसोस परोस द्वै कोस पै लेत नहीं सुधि स्याम कहाए॥ २९६. आ.

खंडिता कथन कृष्ण प्रति

आए हो सकारे स्याम अमित हमारे धाम प्यारे अभिराम भौन भीतर पधारिए। कीजिए सैन सेज सारस नयन यह मंद मंद गौन पैं गयंद कोरि वारिए॥ निगुन कहाओ किन त्रिगुन धरे हो हार वेद पर पुरुष बखानत विचारिए। व्रज के बिहारी तुम रसिक अपूरब हो जाऊं बलिहारी लाल मुकुर निहारिए॥ १०२. आ

पीत वास लसे स्याम भ्रमत निकुंजन मैं कहूं प्रात कहूं निसि निवसो न एक डार। लाल गति रावरी अनेक पद रावरे हैं कहूं कोक-नद फँसे जाय बसे करि प्यार॥ सोन जुही छवि पैं छबीले छकि रहो क्यों न लालची हो रस कों बिलोकि होत बेकरार। चंपक-

बरनि मोंहि काहे कों निहारो तुम सेवती है तासों किन माधव करो विहार ॥ १०२. आ

श्लेष

पग छाप सुभाल मैं लाल कहा हिय कों अहो माल दई गुन हीनी। पल पीक की लीक रची असुची बलि मैं नखरेख खची दुखभीनी ॥ यह स्याम लता अधरान धरी सो करी घनस्याम सुनीति प्रवीनी। मुख ही तो अलीक रचे हैं लला तुम काहे सजाय समीपिन कीनो ॥ १०२ इ

भोर मिले घनस्याम कों बाम मिली मुसुकाय ॥
अँगुठा भूखन दृगन के सन्मुख रही दिखाय ॥ १०२. ई
रससिँगार के ईस हो अरु रसनिधि ब्रजराज ॥
उमगो आवत सो सुखद अधर कूल तें आज ॥ १०२. उ

सुंदर गोल कपोलन पैं अनमोल सुकुंडल डोलनि प्यारी। ही हलकैं दुति मोहन की झलकैं सुथरी अलकैं घुघरारी ॥ वा मुसकानि बिलोकत ही कुलकानि सबै तजि होत विदारी। लागि जौ जाहिं तो कीजै कहा सखि ए अँखियाँ रिझवारि हमारी ॥ ९५. अ

है अति भीति चवाइन की हँसिहैं अरि पापिन दै करतारी। लाज गही ब्रजराज विलोकत आज लों मैं कुलकानि सँभारी ॥ आवत जात सदा यहि गैल सुछैल छबील निकुंजबिहारी। लागि जो जाहिं तो कीजै कहा सखि ए अँखियाँ रिझवारि हमारी ॥ ९५. आ ॥

देति सदा सिख तू सजनी अरु मैंहू विचारति हों हितकारी। मान किए गुनमान कहैं सनमान बढै फिरि है हित भारी ॥ मोहनी मूरति मोहन को अवलोकत लोक रिझावन हारी। लागि जो जाहिं तो कीजै कहा सखि ए अँखियाँ रिझवारि हमारी ॥ ९५. इ ॥

लीन रहैं नित रूप पयोनिधि मीन कहैं कवि वुद्धि विचारी।

दीन अधीन रहैं बिनु देखत देखत तो खल हैं न सदा री ॥ बानि परी प्रिय पेखन की कुलकानि बिसारि दई इन सारी। लागि जो जाहिं तो कीजै कहा सखि ए अँखियाँ रिझवारि हमारी ॥ ८५. ई ॥

मैं इन छंदों के विषय में कुछ मत प्रगट नहीं कर सकता। संभव है कि ये दीनदयाल जी के ही लिखे हों। इसमें संदेह नहीं कि ये छंद अत्यंत सुंदर भाषा में किसी प्रौढ़कवि की लेखनी से लिखे गए हैं।

मैं पंडित केदारनाथ पाठक का अत्यंत अनुगृहीत हूँ कि उन्होंने बाबा दीनदयालगिरि के जीवन संबंधी बातों के जानने में मेरी बहुत सहायता की। साथ ही पंडित वटुकनाथजी और पंडित शिवशंकरजी त्रिपाठी को गिरिजी के ग्रंथों की अपनी अपनी हस्तलिखित प्रतियाँ देकर इस कार्य में सहायता करने के लिये मैं धन्यवाद देता हूँ।

लखनऊ
३०-११-१९

[illegible]।

ग्रंथ सूची ।

दीनदयाल गिरि की ग्रन्थावली ।

——:०:——

अनुरागबाग ।

——:०:——

दोहा ।

श्री [illegible] पद पदुम प्रनवौं परम पुनीत ।
मंगल रूप अनूप छवि कवि बरदानि सुगीत ॥१॥

कवित्त ।

विनसें विघन वृंद छंद पद वंदत ही मालि अरविंद जो मिलिंद सरसत हैं । ध्यावत अगिंद गुन गावत कविंद जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं ॥ भागैं कुरभाग अंगराग देखि दीनदयाल पूरन प्रताप पाप पुंज धरसत हैं । ज्यों ज्यों ही [illegible] वक्रतुंड झांकी परैं त्यों त्यों कविता के झुंड बांके दरसत हैं ॥२॥

छप्पै ।

किन्नर नर सुर निकर जासु किंकर नर मुनिवर ।
दरन चरन तर अधर दंड धर डरत जाहि डर ॥
वासर करत आदि गगन चर जा सरजी चल ।
दृग इन्दीवर तरल फरक में फिरत चतुर फल ॥
अति समरथ है गुन अकथ प्रभु अचर सचर चर अचर कर ।
तजि कै चिर दीनदयाल गिर मधुर धराधर धरहिँ धर ॥३॥

नटवर वर जस करन सरन भय हरन चरन धन ।
सरद कमल वत अमल दरद परसत न रहत तन ॥
सकल अमर गन चहत लहत न कहत यह अचरज ।
स्वन भगत मन भवन दवन कलमष पद रज भज ॥
मन कत छन छन भरमत मरत मरकट वत भव सयल पर ।
यह तज अब सठ हठ कपट पटल पट अपट तर कलप तर ॥४॥

[इति एक स्वर चित्रम् अथ लघ्वक्षर चित्रम्]

कवित्त ।

सुवरन वरन लसत कटि तट पट मुकुट लटक छबि कहि न परति अति। मुरि मुसुकनि चल चितवनि जुरि जुरि करति विकल वह हृदय हरति गति ॥ अलक झलक करि खलक करत छबि मनु अलि अवलि वरहि मिलि विहरति । वदन सरद ससि मदन चकित लखि जकुपनि दुति निति विचरति अति मति ॥५॥

मालिनी छन्द ।

चरन कमल राजैं मंजु मंजीर बाजैं ।
गमन लखि लजावैं हंसऊ नाहिं पावैं ॥
विसद कदम छाहीं क्रीड़ते कुँज माहीं ।
लखि लखि हरि सोभा संभु को चित्त लोभा ॥६॥
कनक बरन काछे काछनी धेनु पाछे ।
विहरत बनवारी गोप के वेष धारी ॥
ललित लकुट हाथे मोर के पच्छ माथे ।
सकल जगत स्वामी भानुजा तीर गामी ॥७॥
विहरत जमुना के तीर में कृष्ण राजैं ।
निरखि सुभग सोभा कोटि कंदर्प लाजैं ॥

अधर मधुर बंसी बाजती चित्त हारी ।
सुनत धुनि न मोहैं कौन हैं देहधारी ॥८॥
सजल जलद नीके स्याम तें होत फीके ।
पट तड़ित विनिंदैं भूषि सोहैं गोविंदैं ॥
विलसति बनमाला वैजयंती विसाला ।
चलत गति रसाला मोहते नंद लाला ॥९॥
कुटिल अलक सोहै सीस चीरा लसो है ।
मदन मन फसो है स्याम अंगै बसो है ॥
सफल नयन ताके भक्त के मे पताके ।
निमिषहुं जिन ताके धन्य ताके पिता के ॥१०॥

[ग्रंथवाटिका रूपक]

दोहा ।

मंगलमय जो प्रथम कर, कविताई कमनीय ।
सो सुभूमिका भूमिका, धरम परम रमनीय ॥११॥
काव्य कलानि प्रवीन कवि, हरि छबि जिनके हीय ।
ते माली यह बाग में, गुनसाली गननीय ॥१२॥
कवित उभय उत्थानि के, तेई अंकुर जानि ।
विरचे दीनदयाल गिर, थिर मति अति सुखदानि ॥१३॥
कहि जे वत्सल भाव की, जननी जसुमति बानि ।
भरी सुधारस बापिका, तेई हैं सुखदानि ॥१४॥
कवित सुमाधव ध्यानमय, रचे प्रथम जो सोधि ।
तेई सुखद द्रुमावली, रहीं सुमन अवरोधि ॥१५॥
स्यामा ते सखि को कथन, मोहन मृदु मुसुकानि ।
तेई यामें सुमन हैं, मन सुमनस सुखदानि ॥१६॥

कथन प्रिया को सखिन सों , मोहन सोहन बैन ।
ते कोकिल किल अखिल हैं , यामैं अति सुखदैन ॥१७॥

दरसन जे चहुं भाँति के , हरि के बरनन कीन ।
ते बँगले यामैं भले , चहुँ दिसि लसैं नवीन ॥१८॥

राधा हरि जोरी सुखद , होरी खिरची चाहि ।
ते यामैं हैं मंजरी , भरी माधुरी माहि ॥१९॥

राधा माधव झूलिबो , अलि को अलि प्रति बैन ।
तेई दोल अनमोल हैं , लोल लसैं सुखदैन ॥२०॥

कवित कलित वक्रोक्ति के , प्रश्नोत्तरहिं समोइ ।
ते यामैं लपटीं लता , ललित लहलही होइ ॥२१॥

मंडन खंडन वेनु के , जे कीन्हें गोपीन ।
ते यह उपवन सारिका , मन हारिका प्रवीन ॥२२॥

लीला अंतर्धान की , विनय अंगहू अन्य ।
ते सुबाग अनुराग के , हैं लालित लावन्य ॥२३॥

दोहा द्वादस मास के , गोपी बिरह अनूप ।
बरने ते यह बाग मैं , मोहन मनिमय कूप ॥२४॥

ऊधव प्रति नँदराय ने , कहे जे मधुरे बैन ।
ते सुक हैं यह बाग मैं , बोलत मृदु दिन रैन ॥२५॥

रितु बरनन बहु अरथ के , बरने जे यहि माहिँ ।
ते षट रितु पुनि पुनि लसैं , बसैं कहूं दुख नाहिँ ॥२६॥

खंडन निरगुन जोग के , मंडन मोहन प्रेम ।
ते यामैं मकरंद हैं , करत सगुन प्रिय छेम ॥२७॥

ऊधव सों अभिलाषि निज , कथन किये ब्रज तीय ।
ते यह सोभित बाग मैं , हैं पराग रमनीय ॥२८॥

ऊधव मुख प्रभु तें कथन , बिरह दसा बृज केरि ।
ते बर बागनुराग में , हैं सुगंध की ढेरि ॥२९॥
पुनि ऊधव प्रभु पें कहे , राधा तन्मय भाव ।
ते फल हैं यह बाग में , मधुर पुनीत सुहाव ॥३०॥
जोऽभिलाष प्रभु चरन को , बरन्यो निज अनुराग ॥
अघक नासक कष्ट को , सो ह्यां विनय तड़ाग ॥३१॥
ग्रंथकार विनती विविध , प्रभुले धारं बारु ॥
कुंडलिका मय मानिए , सो सीतलता चारु ॥३२॥
पुनि बनमाली तें विनय , कविताली कुल कीय ।
हैं पट ते पटपद सबै , इतै परम रमनीय ॥३३॥
अपर कवित बहु भांति जे , बरने विविध प्रसंग ।
ते पथ हैं यह बाग में , जिन लखि होत उमंग ॥३४॥

[माली वर्णन]

कवित्त ।

मूरुख मतंग ढिग आवन न देत क्योंहूँ पापी पसु पामर को करत किनारे हैं । धूरि मद कंटक को दूरि करि यातें भूरि ईरिषा कुसन खनि बाहिर निसारे हैं ॥ सूकर कुचाली नीच निंदक विदारक जे बाटिका विरोधी तिन्हें दंड दै बिडारे हैं । धारे बनमाली अनुराग घट प्रेमसाली माली यह बाग के सुकवि रखवारे हैं ॥३५॥

सुमति कुदारी गहि गोडत जुगुति क्यारी छोड़त न सुमन प्रसाद फल धारे हैं । सुनि धुनि सरस विविध विधि मोद मृदु गुनि गुनि उमगैं हरष हिय भारे हैं ॥ सीचैं नैन नीरनि सों मुदिता लता समाय अति पुलकाय वर बाटिका विहारे हैं । धारे बनमाली अनुराग घट प्रेमसाली माली यह बाग के सुकवि रखवारे हैं । ॥३६॥

[उत्थानिकांकुर]

कवित की जाति बहु भाँति गुनि रीत धुनि लच्छना कहां लों वाच्य विंजना जनाओ मैं। भूषन अनेक विधि दूषन न गिने जाहिं छंद के प्रबंधन कों किमि कै जनाओ मैं॥ रसके न छूटैं नवरस के कविन पाहिं परे तिन बस के कहांतें पार पाओ मैं। प्रभु रूप जस कों बरनि मति करों सेत मन मुद हेत घनस्याम गुन गाओ मैं ॥३७॥

कीजै छल छाँड़ि सेव राखिये न हिये भेव वही भलो देव जापें जाहि की प्रतीति है। तान सुर ग्राम कों न काम अनुरागैं जौन जासों मन पागै तौन लागै भली गीति है॥ साँची रुचिराई मति राची अति जिन्हैं पाई तेई सुखदाई चलि आई यह रीति है। और सब फीको राधापी को रूप ही को गह्यो सोई लगै नीको जग जापें जाकी प्रीति है॥३८॥

[वात्सल्य-रस-वापी]

सेवन करत बिधि आदि सनकादि जासु भेव न लहत सब देवन को पति है। कालऊ को काल जगजाल को बिसाल नट जाहि दीनद्याल संभु सेस करैं नति हैं॥ नेति नेति गाया वेद भेदहु न पाया तासु माया पासु छाया अरु दाया जासु गति है। ताहि सुख पावै लहि नाच कीं नचावै गहि मानि मोद गोद लै खेलावै जसुमति है॥३९॥

कबधौं पहिरि पीरे झगा कों सजैगो लाल कबधौं धरनि धीर ढैक पद राखिहै। रगरि रगरि करि अँचरा गहै गो हरि कब डरि झगरि झगरि करि माषिहै॥ मेरे अभिलाषन को पूरि कर साखन सों दाखन के संग कब माखन को चाखिहै। भैया भैया बोलि बल भैया सों कहैगो कब मैया मोहि को कन्हैया कब भाषिहै॥४०॥

मनि अँगनाई में निरखि प्रतिबिम्ब निज बार बार ताहि चाहि गहिबे कों धावै री। बाजति पैंजनी के चकित होत धुनि सुनि पुनि पुनि

मोद गुनि पाँयन हलावै री ॥ साँझ समै दीपक कों बिलोकि फल जानि कोऊ लेवै को चहत दोऊ कर कों उठावै री । बैयाँ बैयाँ डोलत कन्हैया की बलैयाँ जाँउ मैया मैया बोलत जुन्हैया को लखावै री ॥४१॥

वृज की लुगाई हैं चवाई कैसी लखो माई आवहिं सदाई इतै करि करि कोटि व्याज । कहैं लँगराई करै कान्ह है तिहारो बंक लावत कलंक इन्हैं आवति न संक लाज ॥ बारो है दुलारो मेरो चलिबो न सीख्यो चाल अबहीं न लाल कों पहिरि आवै बाल साज । हालने लगी हैं घुघुरारी लट नेकु नेकु पालने ते लालने उतरि पग धार्‌यो आज ॥४२॥

किलकि किलकि कान्ह हिलकि हिलकि उठै नेकु नहिं मानत कितेकु समझायो री । रोदन कों ठानत न खात दधि ओदन कों गोदन में गिरो परै करै मन भायो री ॥ चौंकि चौंकि उठै पलना तें परै कल नाहिं पलकु न पारै पल एको मेरा जायो री । गयो हुतो चारन गो ग्वारन के संग आज खरिका में खेलत भो लरिका डरायो री ॥४३॥

गरे मुंडमाल धरे सीस पै मयंक बाल लाल के बिलोकन कों जोगी एक आवै री । भोगी लपटाये अंग अंगन में खाए भंग गंग जूट में बहावै री ॥ नजरि बचावों बेरि बेरि मैं छिपावों वातें ताहि देखि कै बिसेखि डावरो डरावै री । लाखन उपाय करि हारी सारी रैन कान्ह दाखन न छियै नेकु माखन न भावै री ॥४४॥

[यशोदा वचन कृष्ण प्रति]

लाखन हैं गैया गेह तेरे हेत हे कन्हैया चाहिए जितेकु ते तो माखन कों खाय रे । चोरि नवनीत कित भाजत गुपाल पर्‌यैं डरैं जनि लाल लोने मेरे ढिग आय रे ॥ पालन मैं झूलि घरैं खेलि प्रिय बालन मैं लालन अजिर तजि बाहिरैं न जाय रे । तापित मही है हाय तपिहै सरोज पाय माय बलि जाय ऐसी धूप मैं न धाय रे ॥४५॥

चारु चकई लै घुनघुना लट्टू कंचन को खेलि घरैं लाल बाल सखन बुलाय रे। पूरि अभिलाषन कों चाखन कै माखन लै दाखन मधुर धरे महर मँगाय रे॥ बाजती धौं कैसी यह बाँसुरी बजाय गाय मोद कों बढ़ाय धाय मेरी गोद आय रे। आयो ब्रज बीच हाऊ बूझि बलदाऊ जाय माय बलि जाय कान्ह बाहिरैं न जाय रे॥४६॥

ध्यानद्रुमावली [illegible]]

जमु ना करत पीर जमुना के तीर गये अमुना प्रकार धीर कहत पुकारि कै। तमु ना रहै सरीर भ्रमु ना तू करै बीर नीर भव भीर भीम भेदत प्रचारि कै॥ सोहत तमाल तरु तरैं हरैं हरैं चाल जहाँ दीनदयाल लाल रहे हैं बिहारि कै। त्यागि मन बांक कों निसांक कलि तासु तीर डारि दै मनाक सुमनाक सुख वारि कै॥४७॥

बीर कालिंदी के तीर नीर बीच निरख्यो मैं नीरद नवल एक करत कलोल री। करत बिहाल चित चोरि लेत दीनद्याल चमकैं चहूँघां चारु चपला अडोल री॥ जागि रही चहूँ ओर चंद की अमंद कला ता में चल खंजन द्वै नाचत अमोल री। रही ना निचोल सुधि जब तें वा सुने बोल सोभा बरषाय मति कीन्हीं अति लोल री॥४८॥

बेलि फूलि फैल रहीं मंजु कुंज गैल माँह नील मणि शैल बिज्जु छाँह चलो आवै री। तापर आनन्द कंद चंदन चढ़ो है अमंद लीने निज गोद द्वंद खंजन खेलावै री॥ दीनद्याल तिते मीन नाचत हैं द्वै बिसाल रूप है रसाल पर साल उपजावै री। मोरनि की कोर हैं छपाकर के छोर लगीं मो चित चकोर बरजोर देखि धावै री॥४९॥

चपला अडोल पैं अमोल पिक बोलैं बोल राजति भुजंगनि मैं कंजनि की लाली री। सरसी गँभीर भीर हंसनि की जासु तीर तहाँ उदय ह्वै रहीं विचित्र नखताली री॥ कुहूँ रैनि राकापति संग सजै

दीनद्याल तामें उभय भानु लोल नचैं चारु चाली री। एक ही तमाल पर मिले एक काल आज अजब तमासा लख्यो कुंज बीच आली री॥५०॥

विकसे बनज वृंद विमल बिसाल छबि गुंजत मधुप धुनि माधुरी सुहाई री। अवली मरालन की सजैं सर पै दयाल उड़गन गनहूँ की दुति अधिकाई री॥ खंजन करत मनरंजन तरल गति भंजन करति ताप चंद की जुन्हाई री। एरी मेरी बीर आज कुंज के कदंब तल ग्रीषम के माँह में सरद लखि आई री॥५१॥

चंचरीक चंचल ह्वै गुंजत निकुंज जहाँ चहूँ चारु चमकैं चमेली फूलि फूलि कै। तहाँ एक दीनद्याल सांवरो लख्यो रसाल आवत मतंग चाल चलो झूमि झूमि कै॥ मंद मुसुकानि बीच एरी चित खींचि लियो नाहिँ ठहरात जात गात भूलि भूलि कै। ई छन छै तीछन निरीछन की कोर बाँकी उठैं बरजोर मेरे हिये हूलि हूलि कै॥५२॥

जा दिन तें मो तन कलिंदी तट जात छैल इंदीवर दृगनि तैं देख्यो मुरि मुरि कै। ता दिन ते पीर दीनद्याल किमि धरों धीर बिरहागि दहे अंग रहे चुरि चुरि कै॥ अरी भटू गड़ी है कटीली वह दीठि माहिं सुपने लखाति फिरि जाति दुरि दुरि कै। वाके मैन ठगन ठगोरी डारि भोरी करि मेरो चित वित लूटि लीनो जुरि जुरि कै॥५३॥

जमुना के छोर आज लख्यो री किसोर तासु सोभा बरजोर मनो बाहिर ह्वै छलकैं। बोलनि हँसनि वाकी अति अनमोलनि हैं कुंडल की डोलनि कपोलनि मैं झलकैं॥ दामिनि सी दमकैं दसन दुति दूनी ताहि मेरे दृग दीनद्याल देखिवे को ललकैं। पलकैं न लगैं लखि कलगी सुमार वारी हलकैं हिये मैं वे मरोरवारी अलकैं॥५४॥

जाती हुती जल कों कलिंद-नंदिनी के तीर लख्यो री गोविंद अरविंद कर मैं लिये। निंदत सरद इंदु आनन सों दीनद्याल रोचन को बिंदु मन मोचन मनो किये॥ मंद मंद मुसुकानि माधुरी मरीचिनि सों लोचन

चकोर मो अघात नाँहि री पिये। ललकैं बिलोकन कों पलकैं लगति नाहिं अलकैं सुबंक वे निसंक हलकैं हिये ॥५५॥

गई धौं कहाँ तें कालिंदी के कूल फूल लेन हूलसी लगति नाहिं छबि उतरति है। मूरति अनूप एक आय कै अचानक मैं चानक लगाय अजों हिय कों हरति है॥ जुलफ मैं कुलुफ करी है मति मेरी छलि एगी अलि कहा करों कल ना परति है। जब जब वाकी करों सुधि बुधि दीनद्याल तब तब मेरी सब सुधि बिसरति है॥५६॥

कालिंदी के कूल गई फूल लेन तहाँ एक छैल लखि मेरी मति धीरज न धारती। एड़िन की देखि दबि जाति कला रवि की है किमि कैसो दीनद्याल भनै कवि भारती॥ कहूँ मैं कहाँ लों मनु सोभा तिहुँ लोकनि की आनि आनि ताकी सब आरती उतारती। तूरति न बनै कली मोहि सुनि अली रही मूरति सी ठाढ़ी वह सूरति निहारती ॥५७॥

नंद के कुमार सुकुमार मारहूँ ते अति सुखमा सुमार कौन कहै तिहि काल की। देखे बन जात बनजात से चरन आली हँस की लजाति चाली लखि लाल की॥ आलसी हिये मैं वह आलसी चितौनि चारु कहा कहौं दीनद्याल सोभा बनमाल की। भाल की बिसाल छबि देखि ससी हँसी होय बसी करबसी लसी मूरति गुपाल की॥५८॥

बसन न पावै चित बसन बिलोकि वाको बस न हमारो कछु चलै आजु माई री। गई एक कूल कों दुकूल भूलि आई तहँ दुख मा हो परी देखि सुखमा सुहाई री॥ अहो यह दाव मैं ठगाई भूलने सुभाव वाको लखि पाव मन अपनो दे आई री। मोहन कहत वहि किमि कै उचाटन कों अहो दीनद्याल देखो जग विपरीत धाई री॥५९॥

परी दुखफंद नंदनंद को बिलोकि अरी मंद मंद चाल नहिं भूलै पटु मन तें। माधव विपति डारे बन को सिधारे हाय स्याम

बिरहागि जल भई सेत तन तें ॥ वाके मुखचंद लखे नैन अरबिंद हू ते उठैं चाह दाह मेरे हिये छन छन तें । भई हौं बिहाल बिन लखे अहो दीनद्याल निगुन मुकुन्द मोहिं बाँध्यो री गुनन तें ॥६०॥

सुमन गई ही लैन आई हौं सुमन खोय दुसुमन मेरी ता पै बोलै हैं चवाई री । कहा करों बीर अब आवत न मोहि धीर साँवरो सरीर देखि पीर सरसाई री ॥या छबि के सिंधु आज लाज की जहाज मेरी बूड़ि गई कछू नाहिं चलत उपाई री । पथी दृग ए विसाल होय के विहाल वाके रहे हैं दुकूलनि के कूलनि मैं जाई री ॥६१॥

[सिंहाऽवलोकन]

गायगो री मोहनी सुराग बंसुरी के बीच कानन सुहाय मार मंत्र को सुनायगो । नायगो री नेह डोरी मेरे गर में फँसाय हृदय थल बीच चाय बेलि को बँधायगो ॥ धायगो री रूप वाको अति ही अनूप हिये दीनद्याल आय आय चित को चलायगो । लायगो री रोरी बरजोरी मति भोरी करि तबहीं तें हाय लाय बिरह लगायगो ॥६२॥

कारे हैं तरल सितवारे रतनारे नैन लगैं अति प्यारे कौन विधि ने सँवारे हैं । वारे हैं सुभारे कविता पैं तिहूँ लोक छबि सुपने जो इक बारे प्रभा को निहारे हैं ॥ हारे हैं सुढूँढि ढूँढि उपमा बिचारे तासु जिनके किनारे कोटि अधम उधारे हैं । धारे हैं ई छन इमि नंद के दुलारे अलि आवत वे दीनद्याल कबधौं सकारे हैं ॥६३॥

[सवैया-शाखा]

गाय गयो सुर सों मुरली मधि मो चित चाय चलाय गयो है ।
लाय गयो सर मैन को सैननि नैननि पैंन बनाय गयो है ॥
नाय गयो बिरहानल मैं मति प्रीति की बेलि बधाय गयो है ।
धाय गयो है सरीर मैं बीर सो पीर अहीर जगाय गयो है ॥६४॥

कलगी वह मंजुल मोरनि की अजहूँ हित सो हिय हालति है ।
वह डोलनि चंचल कुंडल की बिरहानल मैं मुहिं डालति है ॥
वह चाल रसाल मरालन सी चित दीनदयाल सुचालति है ।
लखि मोहन मूरति मालति मैं सखि सो मति मैं अति सालति है ॥६५॥

बन गैलनि छैल लख्यो इक मैं तिहि की दुति मो हिये हूलति है ।
दिये दीनदयाल तिहूँ पुर की उपमा लघु ह्वै नहिं तूलति है ॥
कल नाहिं परै बिनु देखे अभा मति कौं पलना करि झूलति है ।
जबहीं जब वा सुधि होय हिये तबहीं सबहीं सुधि भूलति है ॥६६॥

गुंजत पुंज अलीगन के बहु राजत लंब कदंब दली है ।
ताहि थली इक छैल बली सिर सो हलि पच्छन की अवली है ॥
माल लसै धवली गर मैं कर दीनदयाल रली मुरली है ।
कुंज गली मैं अचानक ही भली भाँति अली उन मोहि छली है ॥६७॥

मद जौं धरैं लालन चालन को गज हंसन की कहु का गति है ।
दवि जाति कला रवि की छबि तैं तरवा तर जोति सी जागति है ॥
दुति देखत दीनदयाल भले रतिनायक की मति पागति है ।
मनमोहन मोहन मूरति री गउ गोहन सोहन लागति है ॥६८॥

कटि के तट मैं पट पीत लसै बिलसै बनमाल हिये टटकी ।
चटकील लला के ललाट लसी वह केसरि जासु कला छटकी ॥
घट की सुधि भूलि गई लटकी कुल लाज लखे छबि वा नट की ।
अटकी वट मैं मति देखि भटू सुभई री लटू न हटै हटकी ॥६९॥

मुरिकै मुसुकानि लख्यो जबतें मम मो तबते कुलकानि नसी ।
कछु भावत है नहिँ ताहि बिना वह रैन दिना दुति आनि बसी ॥
गति प्रीति की जानत कोउ नहीँ सब लोग करैँ उतपात हँसी ।
वह लालन कुन्तल जालन मैं मति मो हरिनी अब जाय फँसी ॥७०॥

कहुँ काह अली रस रासि रली मुरली मधुराधर बाजति है ।
हरि बोलनि मोलनि लै चित कौं चल कुँडल डोलनि छाजति है ॥
वह दीनदयाल विसाल प्रभा अजहूँ मन मंदिर राजति है ।
लखि मोहन मूरति कौं अति सैं रति के पति की दुति लाजति है ॥७१॥
अरुने द्रुग कोरनि डोरनि मैं मन को मनिका मनु पोवतु है ।
नहिं छूटन पावतु है कबहूँ दिन रैनि वहै सँग जोवतु है ॥
वह दीनदयाल लखाय भ्रुवैं कवि की उपमा सब गोवतु है ।
जनु पंकज पै परभात अली दुहूँ पंख पसारित सोवति है ॥७२॥
लाल देखि सखी उनि कुंजनि मैं मनि मालिन लालन साजतु है ।
सुनिये नित दीनदयाल भले मृदु किंकिनि को कल बाजतु है ॥
नव नील मनोहर मूरति पैँ अति पीत दुकूल बिराजतु है ।
जनु नूतन नीरद स्यामल पैँ सुरनायक को धनु छाजतु है ॥७३॥
सजि दीनदयाल विसाल प्रभा तजि बाल सखा सब गोहन के ।
बिलोकति मो ढिग मैं छलि आय गयो मिस दोहन के ॥
[illegible] गहैँ गहि कै चितयो सुमरोरनि भौंहन के ।
सखि सोचन बीच परी लखि कै मन मोचन लोचन मोहन के ॥७४॥

कवित्त ।

जा दिन सें दुही गाय मेरी धूमरी कौं मोहि धूमरी सी आवै नहिं रह्यो जाय घर मैं । ता दिन ते उठत चवाइन के उतपात सगरी सिहात बात सगरी नगर मैं ॥ कहूँ कहा हाल या बिहाल अब अपनो मैं ढूँढति गुपाल कौं फिरति हूँ डगर । दोहनी हमारी दै हमारे कर माँह प्यारी लै गयो मुरारी मन मेरो करि कर मैं ॥७५॥

किधौं जुग दीनद्याल वारिजात हैं विसाल किधौं खंजरीट बाल मुद के दयन हैं । किधौं अनुराग लीन छवि के तड़ाग मीन जुगल कला प्रवीन करत चयन हैं । किधौं कोकनद पै समद द्वै अलिन सो-

हैं मोहैं करि गदगद रूप के अयन हैं। किधौं अनियारे सर सम रस-वारे आली किधौं रतनारे बनमाली के नयन हैं ॥७६॥

आज मैं निहारे कारे कान्ह को सुपन बीच उठि के सकारे जमुना पैँ जल कों गई। तबहीं तैं दीनद्याल ह्वै रही मनीषा लटू एरी भटू मेरी भटभेरी मग मैं भई ॥ नंदनंद मो तन विलोकि मंद मंद कह्यो एरी चंदमुखी आई कित तैं इतै नई। कल न परति आली ललन लख्यो न भले चलन समैं मैं चल पलन दगा दई ॥७७॥

हँसि हँसि बोलनि की माधुरी रही हैं बसि कुँडल की डोलनि कपोलनि की झलकैँ। ललकैँ बिलोकि ललना के गन कल नाहिं हालन लगी हैं स्याम लालन की अलकैँ ॥ कोटिन अनंग छबि संग अंग अंगन के सुखमा तरंग ये हिये मैं आनि हलकैँ। रूप के निधानैं नैन जानैं क्यों बखानैं बैन जानैं जड़ ताहि को विधानैं जानैं पलकैँ ॥७८॥

नीलमनि सैल सी सुप्रभा जासु फैल रही सो गुविंद छैल गैल गही आनि गागरी। आलस भरे जम्हात ह्वै रहे सिथिल गात मंद मुसुकात प्रात मिले बड़े भाग री ॥ भले जू बने हो बृजराज आज बानक सों कह्यो सजे लाज तुम झूठी बृज नागरी। बानी अटपटी सुनें लागी छटपटी मोहि पेखि लटपटी पाग जाग्यो अनुराग री ॥७९॥

पीत पट कसे लसे भूषन सो अंग अंग हास रस रसे सखा संग प्रभा नई है। आनि कै अचानक या बानक सों घनस्याम कुंज बन धाम मति मेरी हरि लई है ॥ सिसकी पुकार करौं रिस की लहरि उठै सिसकी भरति मैं बिरोगताप तई है। रही हौं विमोहि जोहि अली कहा तोहि डीठि वा तिरीछी मोहि बीछी डंक भई है ॥८०॥

लीन्हौं गुथि मेरो मन मनिका बिलोकतही आपने ही गुन मैं रसाल बनमाल ने। सजैँ सुख दैन अलकावली के बीच नैन घेरि लियो उभै मीन मनौ मैनजाल ने ॥ भूलै न मराली वह चाली चित

चुभी चारु झूलै बनमाली दुति आली हिय पालने । हरी हरी लतिका मैं परी हरी डीठि अरी लीन्हे कर लाल करी छरी मति लाल ने ॥८१॥

परी डीठि आज री अचानक या बानक सौं कैसी रुचि करी उर मोलसरी माल ने। चटकीली खौरि सजैं मटकीली भौंह पैं दीन-दयाल मोह्यो द्रग लटकीली चाल ने ॥ बोलि अनमोल बोल लियो मन मेरो मोल लोल लोल लोयन सों लख्यो लोने लाल ने । भूलति न एरी मेरी बीर बलबीर छबि झूलति दिवस निसि चढ़ी चित पालने ॥८२॥

पीत पट धरे करे अंग को त्रिभंग खरे कोटिन अनंग छरे छवि लखि माल की । कुंज की गली में वृषभान की लली के पाँह गहे गलबाँह छाँह कजैं हैं तमाल की ॥ कुंडल की डोलनि कपोलनि अमोल लसैं कौन कहै हाल हँसि बोलनि रसाल की । भई हों निहाल वा बिलोकि दुति दीनदयाल भूलति न बाल री प्रभा गुपाल लाल की ॥८३॥

कहा कहौं हेली मैं अकेली गई कुंज गैल फूली ही चमेली छैल तहाँ बेनु टेरो रे । पीत पट धरैं हरैं हरैं आय गरैं गह्यो मोतिन की लरैं लखि कंज. करैं फेरी रे । कटि को लचाय कै नचाय भौंह नैनन कों सैनन सों कियो चित चंचल को चेरो रे । कुंज की गली में अली आचक सों आय छली चुनति कली ही चुनि लियो मन मेरो रे ॥८४॥

सजनी ह्वै रजनी सी नंद को किसोर पेखि कुंडल बिसेख सजैं मनो भानु भोर तें । लोल लटकैं हैं लट कंज से कपोलन पैं मनो भौंर भीर घेरि आई चहूँ ओर तें ॥ कुटिल कटाछन की देखि छबि छकी बाल भई हों बिहाल हाल भृकुटी मरोर तें । गई मैं अकेली हेली चुनन चमेली आज वेली बीच चितै चित चुभ्यो चित चोर तें ॥८५॥

प्रभा पुंज लसैं मंजु मंजरी निकुंजनि मैं चुनन चमेली गई हेली उठि प्रात री । तहाँ एक मंद मंद गुंजत मिलिंद लख्यो सोन जुही संग मैं उमंगि मडरात री ॥ हेरि हेरि चूमत रसीलो रस रासिन कों वेरि

बेरि झूमत झपत लपटात री। परैं ख्याल दीनद्याल वाके वे रसाल जब तब तबहीं बिहाल मन पछतात री ॥८६॥

एरी जगप्रान प्रानपति को बखान कियो जात नाहिं हियो रम्यो देखि तेहि साज कों। हरयो सब ताप कों मिलाप करि मेरे संग अंबर उघारत रही मैं गहि लाज कों। सीतल सुभाव महा सुमना सनेह सानो हिये लपटानो कहा कहौं सुख आज कों। मंद मंद गैान सों मिल्यो है कुंज भैान आय कैान हो बताय प्यारी पैांन रितुराज को ॥८७॥

जीवन के दानि आलि ताप के कलाप हरे चपला हिये में धरे स्यामल सुतन है। जा दुति उदोति नीलकंठ कों हरष होत और द्विज गोत लखैं मोद मानि मन है॥ माल है बिसाल बकुलावली की एरी बाल झूमि झूमि चाल वाकी भूलै नाहिं छन है। मंद मंद रस बरसाय तरसाय गयो कहा घन स्याम हैं री ना घन सघन है ॥८८॥

कहा कहौं कुंज तीर आज की बहार बीर मेटि कै सिंगार हार दूरि कियो चीर है। परसि नसाई है ललाई अधरान हूँ की बिथुरी अलक बढ़ो पुलक सरीर है॥ मेट्यो चारु चंदन को पंक अंक मैं लगाय गरैं लपटाय हरैं हरयो ताप पीर है। देख तरसाली छबिसाली प्रीति की कटाली कहा बनमाली आली कालिंदी को नीर है ॥८९॥

सुख के तरंग री उठैं हैं अंग स्यामल मैं सोहैं कंज मंजु गुंज भौरन की भीर है। द्विजन की श्रेनी मुद देनी कै रहीं प्रकास जाके आस पास बहै सुरभि समीर है। सिसकी भरी ससंक अंक जाय तिसकी मैं अंजन मिटाय कियो रंजन न थीर है। देखत रसाली छबिसाली प्रीति की कटाली कहा बनमाली आली कालिंदी को नीर है ॥९०॥

प्रजा पुंज भरयो मंजु गुंजत निकुंजन मैं रंजन करत अवलोकतही मति को। पीतवास धरे करे लोल चाल दीनद्याल देखि गरैं माल राह रोके वार कति को॥ नेरे चलि आय छलि मेरे मुख पंकज कों

परसै निसंक नहि संक करै रति को। कान्ह हैं बतावरी क्यों बावरी बकावै मोहि भाँवरी भरत भौंर साँवरी सुरति को ॥९१॥

ल्यावरी मिलाव मोहिं कौन हो बतावरी तूँ भाँवरी भरत भौंर गति मेरी मति कों। लावरी न मोहि घनसार कहै बार बार भाँवरी सी ह्वै रही उसासैं भरै कति कों॥ नींद न विभावरी मैं घाबरी बरी सी परी रावरी सों कहों नहिं धीर धरै रति कों। आवरी दिखाऊँ तोहि डावरी गई है सूखि बावरी विलोक्यो कहूँ साँवरी सुरति कों ॥९२॥

भुजग भुजा तेरी सकारे कारे कान्हर ने गह्यो वहि हिये उठै ता छिन तें लहरें। अंग अंग थहरैं अनंग तें त्रिभंग लखे जहरैं चढ़ति ज्यों ज्यों पीत पट फहरैं॥ छूटीं घुघुरारी लट लूटी हैं वधूटी वट टूटी चट लाज ते न जूटीं परी कहरैं। कहरैं करति आली छहरैं छटा सी छबि लखिबे कों हहरैं न नेकु नैन ठहरैं ॥९३॥

पीत पट कसी बसी स्याम की सुरति लसी तोलों कुल फाँसन सी गाँस कों सहति है। आनै नहि नेक एक प्रीति की परी है टेक करिकै अनेक कला लला कों चहति है॥ कबधों मिलैगो वह साँवरो कुँवर मोहि लाख लाख यहै अभिलाप कों गहति है। खिरिकी के माहिँ खरी हिरिकी हरी कों हेरै घरी घरी फिरिकी लों थिरिकी रहति है ॥९४॥

छोड़्यो गृह काज कुल लाज को समाज सबै एक ब्रजराज सों कियो री प्रीतिपन है। रहत सदाई सुखदाई पद पंकज मैं चंचरीक नाईं भई छांड़ै नाहिँ छन है॥ रतिपति मूरति विमोहनि को नेम धरि लिखै प्रेम रंग भरि मति के सदन है। कुँवर कन्हाई की लुनाई लखि माई मेरो चेरो भयो चित औ चितेरो भयो मन है ॥९५॥

घूँघट की ओट गहैं कबहूँ रहैं छपाय फेरि प्रगटाय प्रभा लहैं पीत पट की। धाय बरजोर चलैं मोर के मुकट ओर लटकैं पकरि छोर

घुघुरारी लट की ॥ ई छन तिरीछे आछे मल्लन तेँ जाय भिरैं बरत बनाय फरैं बनमाल टटकी। नटवर जू की रुचिराई देखि दिना रैन माई मेरे नैन एक रहैं कला नट की ॥९६॥

बीरबल बीरहि बिलोकि जमुना के तीर जा दिन तें आनि मन मंदिर बसायो री। ता दिन ते दहत दुसह विरहानल में लाजहि खसायो सब लोगन हँसायो री ॥ अलक झलक लखि पलक न लागैं वह कुटिल बडिस द्रग मीनन फँसायो री। परति न जानि अब ह्वै है धौं कवन हानि वाकी मुसुकानि कुल कानि भौ नसायो री ॥९७॥

गई बीर नीर काज लख्यो ब्रजराज आज हंसऊ लजात देखि वाकी गति मंद तें। नैनन की कोर करी मेरी ओर सैनन सों सोभा बरजोर रही उमँगि अनंद तें॥ माधुरी अधर की न पावै सुधा दाख लाख लेत मन मोल बोल मीठे लगैं कंद तें। दमकैं दसन मंद मंद मुसकानि सजें झरति चमेली हेली मानो चारु चंद तें ॥९८॥

तूँ तो स्यामा वे तो स्याम दोऊ छबि अभिराम आठो जाम घनस्याम नाम ब्रत लयो है। छकी है छबीले के रसीले प्रेम छाकनि सौं चोरि चित तेरो मोरिनहीं उन दयो है॥ छपै है छपाकर छपाये कहूँ कर ओट मुकरै री कहा जोट तेरो भलो भयो है। प्यारो बलभैया बन-वेनु को बजैया आय अबही कन्हैया तेरी गैया दुहि गयो है ॥ ९९ ॥

[वर्तमानानुरागमय कवित्त]

मोर को मुकुट धरे ललित लकुट करे चलत चपल रुख पाय वल भाय के। गिरिपति गहि सुरपति को मथे हैं मान एई सुखदाय अति जसुमति माय के॥ गाँयन को पोखे भली भाँयन सँजोखे अली कुँजन की गली तैँ कली लीन्हे हरषाय के। संग कुँवरेटे पीतपट कौं लपेटे अंग गोरज धुरेटे ऐहैं बेटे नंदराय के ॥ १०० ॥

गरैं गुंजमाल धरैं मंजु मंजरी रसाल बोलत बचन लाल बालक सुभाय के। हिलि मिलि एक ठौरी गावैं गुनि राग गौरी लै लै धौरी धूमरी पुकारैं नाम गाय के॥ देखो दुखमोचन सकोचन को तजि आली लोचन सफल करो दाय यह पाय के। संग कुँवरेटे पीतपट कों लपेटे अंग गोरज धुरेटे ऐहैं बेटे नंदराय के॥ १०१॥

पायो नहिँ सोध कहूँ निगम पुराननि में जाकी सुधि सोधि सोधि सुधी रहे हारि कै। संजमादि साधनि कै सिद्ध जपैं जाकों नित जाके हित जोगी चित राखत सुधारि कै॥ सोई अरुझान्यो है भगति जाल दीनद्याल देखिये निहारि कहे देत है पुकारि कै। पसुन के संग ह्वै उमंग▮बन बीच रमैं अर्थ उपनिषद को कंठ गहे ग्वारि कै॥ १०२॥

यह अनुराग सुबाग मैं, सुखद प्रथम केदार।
विरच्यो दीनदयालु गिरि, बनमाली सु बिहार॥ १०३॥

[मंदस्मित सुमनावली]

बैठी है पचासनन सजी विविकीकी पर आइ इक तीती तिति श्रीपति के तीर सों। बोली दस खीखी पंच चालिस लिलीरी सुनि साजि लै सिँगार कों पचास ररधीर सों॥ रसनन गामिनि तूँ रसना कों डारि चलि जामिनि उजेरी तन ढाँकि सित चीर सों। लजैं सिसि तेरह या तीनि विवि तेरी परी देरी तजि परी करि गमन समीर सों॥१०४॥

एरी बीर धीर धारि गुरु जन भीर वारि आई तब तीर हों छपाई काहू मिसि मैं। देरी सों बिलोकै छैल खरो कुंज तेरी गैल एरी एन नैनिन बितावै रैनि रिसि मैं॥ मंद मुसुकानि चलि देखि नंदनंदन की चाँदनी चढ़ी है री निकुंज कुहू निसि मैं। चहूँ ओर तें चकोर कोर बाँधि घेरि मुद सों कुमुद फूलि रहे दिसि दिसि मैं॥ १०५॥

सुरसरि धार किधौं सारद अधर संग भारद करति कला सारद के चंद की। किधौं हिमि लाई झरि मानिक मही के माहिँ किधौं सुधा-

सिन्धु बीच बीचि है अनंद की ॥ किधौं कुंद कलिका रही हैं फँबि छबि बाग रचना करत काम किधौं फूल फंद की। किधौं चंद जोति तें अमंद फूल बूंद झरैं किधौं मंद मंद मुसुकानि नंदनंद की ॥ १०६ ॥

किधौं बीर छीर सिन्धु लहरी लहकि रही किधौं बहो गंग नीर धार सुखदानि है। दंत छन छटा संग सारद घटा उमंग सारद को अंग किधौं पारदि की खानि है ॥ किधौं लर मोतिन की बिहरति उर पर करति प्रभा कों वर परति न जानि है। किधौं कामदूती मति गोहन लगाय लेति किधौं मनमोहन की मंद मुसकानि है ॥ १०७ ॥

किधौं अलकावली निसा के बीच है मरीचि चंद की चहूँघाँ चारु रहीं रुचि तानि है। किधौं सुखमा के सर हंसन की श्रेनी बर किधौं घनसार रह्यो विद्रुम सों सानि है ॥ चमकैं चमेली किधौं अधर जपा के संग मोहनी को अंग कहे कवि न बषानि है। किधौं कामदूती मति गोहन लगाय लेति किधौं मनमोहन की मंद मुसकानि है ॥१०८॥

[वाणी कीर्ति कोकिला]

आनन सुधाकर ते श्रवति सुधा है जनु कानन सुखद हरि बानी रस की भरी। जाकी इरिषा ते द्रग राते जरि सोहैं स्याम घन बातें की करैं हैं न बराबरी ॥ फूल सी झरति अलि अनुराग बागन में भागन तें आनि आज मेरे कान मैं परी। हरी मति मेरी हरी गिरा मोहि चेरी करी अरी अधमरी परी सोचति घरी घरी ॥१०९॥

मंद मृदु मधुर ढरनि मुखचंद पास करति अनंद हास मोल मन मो लियो। तजि निज नाटन उचाटन भयो है बसि हँसि हरि वचन के ठाटन हरयो हियो ॥ सुनत बसीकर रीसी कर रह्यो है फसि मारनउ सुने जेहि मरि मरि कै जियो। मंद मुसु कानि छलि लियो मन गोहन मैं मोहन की बानी नै विमोहन विजै कियो ॥११०॥

कंद तैं दुचंद नंद नंदन की मीठी बात करति अनंद गात मुद दानि जन की। रंभाऊ अचंभा मानि फलै नहिँ दूजी बार मोहैं रति-रम्भा सुनि जाकी नेकु भनकी॥ मिसरी कठोर की सरिसरी कहौं मैं कहाँ बिसरी सुनत सुधि परी बीर तन की। लाखन उपाय करि दाप-न लही न सरि भापन की माधुरी धुरी न स्याम घन की॥१११॥

पाई नहिँ रंचकउ मधु मधुराई जासु बोलत कन्हाई सुखदाई जब बात हैं। भाव को प्रकास हास को विलास जामैं कहुँ कोकिल के कल सम कैसे कहि जात हैं॥ बीन की प्रवीनता कौं लीन करि राखै गुनि सारद विसारद श्रौर नारद लजात हैं। भूषन लगति ब्रजभूषन बचन सुनि ऊपन पियूषन मैं दूषन दिखात हैं॥११२॥

[चतुर्विधि दर्शनालय॥ श्रवणदर्शन]

जा दिन ते कान्ह कथा काहू तैँ परी है कान ता दिन तैँ कानन मैं आन न सुनति री। कैसे मिलै साँवरो सुजान पटपीत वारो भाँवरो भयो तन सीसहि धुनति री॥ लगो है बसीकर सो दीनदयाल जासु नाम आठौ जाम बैठी गुन गन कौं गुनति री। रंच न परति कल कंचन महल माँह स्याम विरहानल मैं हृदय हुनति री॥११३॥

[स्वप्नदर्शन]

ओढे पट पीत सिर सजनी सुपन बीच साँवरो सलोनो एक देख्यो आज रैन कौं। जानो नहिँ कौन हो कहाँ से आयो मेरे ढिग लै गयो छबीलो छलि घेरे चित चैन कौं॥ कंजन से कर मन रंजन करत आली अंजन लगायो मेरे पंजन से नैन कौं। कहौं करि जोरि तोसैं आनि री मिलाय मोसैं मोहि अपसोसैं दै भरोसै निज बैन कौं॥११४॥

[चित्रदर्शन]

नंद के कुमार कौं सवार हौं मिलाऊँ तोहि वार वार सौ प्रकार सौं बुझाय हारी मैं। कहा उपचार करौं कछू न विचार चले चार ओर

ढूँढति दयाल गिरधारी मैं ॥ सूखि गयो सरीर चीर की न सुधि बीर पीवै नहि नीर धरयो रहै तीर भारी मैं । मित्र स्याम के विचित्र चित्र को विलोकि बाल बैठि रही चित्र सी विचित्र चित्रसारी मैं ॥११५॥

[प्रत्यक्ष दर्शन]

वा दिन की बात नहि मों पै कही जात छैल छपि कै छबीलो गैल घेरयो रंग घोरि कै । मंद मंद मुसुकाय कह्यो कछु नेरे आय जोरि दृग देख्यो मोहि भैांहन मरोरि कै ॥ करि चतुरायन कों आपने सुभायन सों रही मैं सजग ह्वै उपायन करोरि कै । डारत अबीर एरी बीर बल बीर हथाहथी लै गयो अनेरो चित चोरि कै ॥११६॥

[होरी मंजरी]

उततें कन्हाई लरिकाई के सखन लीन्हे करि चतुराई केलि होरी मचाई है । इत वृषभान की कुमारी सुकुमारी प्यारी आली गन आली मैं रसाली सी सुहाई है ॥ ललना गुलालन की लालन पैं डारैं मूठि चलैं पिचकारी सुखकारी दुहुँ घाईं है ॥ केसर साने सुरँग नेह सरसाने डारैं मानो बरसा ने बरसाने झर लाई है ॥११७॥

होरी होरी करत अबीर भरि झोरी लीन्हे पोरी पोरी फिरैं ग्वाल बाल समुदाई है । तामैं नंदलाल लाल चीरा जरीदार धरे गरे भा विसाल बनमाल की सुहाई है ॥ कीरति किसोरी संग गोरी जूथ जूथ मिलि भरी अनुराग फाग स्याम सों मचाई है । केसर साने सुरंग नेह सरसाने डारैं मानो बरसा ने बरसाने झर लाई है ॥११८॥

आज नंदनंद जू अनंद भरे खेलैं फाग कोटि चंद ते दुचंद भाल दुति लाल की । आभरन हीरन पैं मानिक ललाई आई तैसी छवि छाई है विसाल बनमाल की ॥ अबीर उड़ावै मूठि मूठि सी चलावै माई देखिए लुनाई नट नागर गुपाल की । सजै पीत पट पर मुरली लकुट मोर के मुकुट पर गरद गुलाल की ॥११९॥

कीरति किसोरी संग स्यामैं लखि भई भोरी होरी देखि आई आजु प्यारे बल बीर की ॥ सारी जरतारी की किनारी मैं गुलाल राजै तैसी छबि छाजै उत कासमीर चीर की ॥ हरैं हरैं आवैं मंद मंद सुर गावैं दोउ मिलि मुसुकावैं दुति धावैं री सरीर की । नैन कोर ओर पर बरुनी के छोर पर मोहनी मरोर पर ओप है अबीर की ॥१२०॥

[दोलावली]

फुही फुही बूँद झरैं बीर बारि बाहन तैं कुहू कुहू सुनी परैं कूँक कोकिलानि की । ताही समय स्यामा स्याम झूलत हिँडोर चढ़े वारौं छवि कोटिन मैं रति पंचबान की ॥ कुंडल लटक सोहैं भृकुटी मटक मोहैं अटकी चटक पट पीत फहरान की । झूलति समै की सुधि भूलति न हूलति री उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजान की ॥१२१॥

झाँवरे लगत सुर जासु की झलक झाँकि सुखमा सराहौं कहा साँवरे सुजान की। झूलिवे की चाह करि चढ़े झूलने पैं दोऊ कोऊ नहिं सकै कहि उपमा झुलान की॥ कट की लचनि मचकनि चारु जंघनि की अचकनि गहनि वैं झूम झूम कान की। झूलति समै की सुधि भूलति न हूलति री उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजान की॥१२२॥

हालरैं हिँडोर झवा जाय मिलैं डारनि सौं झालरैं झुलति चारु गज मुकुतान की। चुनति प्रसूनन की कलिका चपल लाल आनि देति भेट प्रिया प्रथम मिलान की॥ दुहूँ ओर दृगन की कोर बरजोर चलैं भौंहैं की मरोर मोहैं दारा देवातन की। झूलति समै की सुधि भूलति न हूलति री उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजानि की॥ १२३॥

आनंद के कंद नंदनंद की अमंद छवि बरनी न जाय मंद मंद मुसुकानि की। ललना के संग चढ़े झूलना झूलत लाल कल ना परति बिनु देखे दसा मान की॥ लोल लोल लोयन के कोयन बिलोकि बालक

कहां गहै मान रहै सुधि न सयान की। झूलति समै की सुधि भूलति न हूलति री उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजान की ॥१२४॥

सजैं श्रम सीकर कपोलनि पैं लोल लोल बोलत अमोल बोल लजैं कोकिलान की। उठत उमंग के तरंग अंग अंगनि मैं फैली धुनि कानन अजौं मलार तान की॥ लाल ने बिलोक्यो प्रिया हालने श्रमित भई दीनद्याल बिनै करैं सीरे पवमान की। झूलति समै की सुधि भूलति न हूलति री उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजान की ॥ १२५ ॥

[वक्रोक्तिलता]

सवैया।

हम तो बिलखाहिँ कदंब तले तुम हो कुलटा यह बैन कहावै।
तुम तो नर हो नागी नाहिं लखो कित जाहिँ चले तिय रूप लखावैं॥
हम तो न चहैं तुमपैं हठ जू भली बात नचो केहि को नहि भावै।
हरि अंबर देहु हमैं कर मैं गहिये किन सुंदरि जौं कर आवै ॥१२६॥

कबित्त।

लौल फुलवारी यह कापैं कौन मुद पाय नहीं जू निवारी है करत कहा हे प्रिये। माधवी है माधव दहति क्यों न सौति देखि सेवती है सुनो स्याम काकों अपने हिये॥ जाय कहै जदुनंद को न को जपै है जाप जपा है जसोदा सुत केते जप कों किये। कुंद है मुकुंद लखो तीछन कै लीजै कि नवेला वर दीनद्याल कौंन तीन मैं तिये॥ १२७ ॥

न रहो निकुंज माँह नारिन कों गहो नांह जाहिँ चले किते रन रीतिहूँ न लई है। रहो जू हमारो तुम आचरन गहो लाल ठाढ़े हम कब तें तूँ आचारज भई है॥ हम तो हैं वाम स्याम काहे को भिरत आनि हमहूँ त्रिभंगी यह बात भली छई है। हम व्रजबाला हैं जू हमहूँ हैं ग्वाल बाल ऊतर की माल इमि नंदलाल दई है ॥१२८॥

चाहत नवीन स्याम हमतो अधीन रूप किमि कै कुरूप जरा हमैं जानि

लई है। ऐसे जनि बोलो हम सबरी हैं लाजवती जाहु चली कानन में कहा हानि भई है॥ हम ब्रज की हैं नारी सुनिए सुजान कान्ह कौन कहैं एक ही की बात यह छई है। एजू हम गोप-बधू बाहिर फिरति हो कहा ऊतर की माल इमि नंदलाल दई है॥ १२९॥

एहो नँदलाल तुम साँची कहो बातें कछु गाहक हैं प्यारी तव रूप के रतन कौं। नागरी सनेह सने माधव नटत कहाँ सेवत हैं प्रिया तव जोबन के बन कौं॥ पीपर कौं भरें अंक हमहूँ तिहारे लागि काहे बनि कुलटा कलंक लावो तन कौं। मति को पकरि स्याम हमैं घर जान कहो जाहु धाम गोप वाम मोरि निज मन कौं॥ १३०॥

[बंसीसारिका]

किधौं है बसीकर की सी करि करति कैद जान नहिँ देत कहूँ मन के मतंग को। किधौं है उच्चाटन भुलावै घाट बाटन तें हाटन तें धावैं बधू छोड़ि सब संग कौं॥ किधौं नेह घटा छजै दंत छन छटा छोर एरी बीर बरसै सर सरस रंग कौं। किधौं यह मोहन की बाँसुरी विमोहन है सोहन लगति लिये गोहल अनंग कौं॥ १३१॥

भई हैं वियोगी बाल भोगी होत हैं विहाल ता रस के भोगी भये जोगी तजि कै तुरी। तपन सुता को री लगो है ज्यों तपन तीर भूलि कै अपनपो कौं गति वेग सें मुरी॥ सारद विसारद की भारद भई है सुनि बीन को दुराय के प्रवीन दरी मैं दुरी। भुलैं सब बाँसुरी सुनैं हैं जब बाँसुरी को आँसुरी न रोकि सकैं आसुरी हूँ औ सुरी॥ १३२॥

जनी जड़ बंस ते अधर अवतंस बनी गनी है असारन में है हिये की खाली री। हरै मन धन कौं करै है माधुरी सों बात उठैं उतपात याके कुल तें दवाली री॥ छिद्रन कौं लिये हिये गाठि सें भरी कठोर बोलै मुह जोर बरजोर ए कुचाली री। काली के दमन कहु कैसे प्रीति पाली याते कहैं बनमाली जग में प्रवीन आली री॥ १३३॥

सही सीत भीत बरषातप की उतपात राति दिन याने बहु भाँति तप कौं किया। जनम तें बाढ़ी प्रीति एक पग ठाढ़ी रही डाढ़ी गई गाढ़ी नहिँ नेकु कसक्यो हिया॥ कीजै नहिँ रोष यापै दीजै नहिँ दोष बीर देह कौं सुखाय धीर नेहू व्रत को लिया। परखि सुलाषि ताय लीन्ही वृजराय याकों ताते यहु बंसी आय भई स्याम की प्रिया॥ १३४॥

बंसी ने कियो अधीन गह्यो स्याम मन मीन रचैं वसुजाम लीन लचैं भले भाय री। अंग को त्रिभंग करे एक पग सेवैं खरे अति से उमंग भरे जासु संग पाय री॥ रीझै हैं कलापैं याकी लला पैं न रह्यो जाय तप के कलापैं याके कापैं कहि जाय री। सेज अधारन पैं सोआय कै सनेह लाय नितहीं पलोटैं पाय जाके जदुराय री॥ १३५॥

[अंतर्द्धानलीला लावण्य]

न लहै रती रती कु छवि कौं बिलोकि जिन्हैं नील अलकावली विमोहती बदन पैं। चली महावीर सम प्रेम रन जीतिवे कौं किंकिनी सुकंठ गहे अंगद पदन पैं॥ जामवंत जात छिन जिन्हें घनस्याम बिन पंजन नयन टीको अंजन रदन पैं। जाके रूप अभिराम लच्छन विनोद धाम ग्राम तें चलीं हैं वाम कुंजन के सदन पै॥ १३६॥

आई तुम कैसे हमैं बाँसुरी बुलाई स्याम कहो कौन काम छविधाम तो सरन को। तात मात भ्रात तुम्हें हैं सनेही किधौं नाहिं साँवरे सुना तो हमैं रावरे चरन को॥ पति के तजे तें गति होय न बड़ो है दोस श्रीपति भरोस अपसोस न तरन को। लोक वेद मरजाद तजी क्यों प्रमाद परि जानै न विवाद गह्यो प्रेम के परन को॥ १३७॥

बाजत मृदंग मुरचंग बीन औ उपंग तातथई तातथई करत उमंग मैं। मेलि कै भुजान को सुजान नृत्यकला कान्ह बीच बीच नाचै मिलि गोपिन के संग मैं॥ भृकुटी मटक पट पीत की चटक चारु कुंडल झलक

छजै छबि के तरंग में। पद की पटक पाँनि झटक सुमुसकानि ग्रीवा की लटक सजै सोभा अंग अंग मैं ॥ १३८ ॥

देखि गति ढीली श्याम बिनवैं रसीली मति भई गरबीली अति आदर को पाय कै । भावत है मद मदमोचन कों नेकऊ न रहैं दीन के अधीन कहैं बेद गाय के ॥ अंतरित भए कान्ह अंतर को देखि मानि रहति निरंतर जो हिय मैं समाय के। ताहि बन बूझहि नवेली बेली साषिन सों षिन षिन आँखिन मैं रह्यो है जु छाय के ॥ १३९ ॥

हे असोक सोक हरि हरि कों मिलाय मोहि तोहि कों सपथ करि साचो निज नाम को। हे पलास आस पूरि दूरि करि निज नाम अहे पारिजात करि पूरो मम काम को ॥ हे रसाल लाल को लखाइए रसाल रूप हे तमाल धरे हो सरूप तुम स्याम को। तातें तुम्हें जानिए गुपाल मिले दीनद्याल काहे को बिहाल हाल देखियत बाम को ॥१४०॥

अहे कुंद वे मुकुंद कहूँ तुम लखे जात कहाँ पाई तात दुति लाल के दसन की। दाडिम दुसह दुख दूरि कै दिखाय हमैं तुमहूँ सीखी है रीति स्याम के हँसन की ॥ सोन जुही जुही है सकल छबि तेरे पाहीं मानों परछाहीं परी प्यारे के बसन की। सब मिलि कै मिलाय देहु हरि मूरति कों सूरति न भूलै वह काछनी कसन की ॥१४१॥

बदरी तूँ बदरी विलोक्यो कहूँ घनस्याम काहे को बतावै साँचो नाम याको बेरी है। कहि री निवारी तोहि कान्ह ने निवारी कहा देति न दिखाय अब काहे करै देरी है ॥ पहो करवीर कर बीर उपकार धीर हमैं वर बीर कों बताय आस तेरी है। करन कुसुम हे करन करि दीन बच हरि के जताये ह्वै हरन पीर मेरी है ॥१४२॥

सेवती चरन चारु सेवती हमारे जान ह्वै रही डहडही लही अनंद कंद कौं। माधव तज्यो है तोहि माधवी बताय मोहि ता वियोग ढारै मनो आँसू मकरंद कौं ॥ सालती हमारे हिए बिरह कटारी भारी

मालती दिखाय कहूँ देखे नंदनंद कौं। केला हो अकेला सब जग में मधुर महा वेला तूँ बताय यह वेला वृज चंद कौं ॥१४३॥

एरी बीर चीरचोर बूझिए कदंब पाहि याके अवलंब माहिं कहूँ ह्वै है दुरि कै। अली चली जाति किते कुंज गली सोक रली बूझि छली कान्ह कों मधु द्रुम तें मुरि कै॥ तनिका भरोस भटू मानो जानो गलिका को चलो बूझिए री यह जापक तें जुरि कै। सोधि सोधि रहीं मिलो रूप को पयोधि नहीं जाय जाय बूझें बोधि साखि तें बहुरि कै ॥१४४॥

बूझति है कहा कुरबक से मधुर बानी जानी नहिं याकी गति एरी मेरी आली री। अबला तूँ बूझति सैलूख तें लला को कहा याकी कला माहिं छले सुक औ कपाली री॥ कि तव बतैहे नाहिं कितव कन्हैया गैल बूझि श्रेयसी सो बोलि बतियाँ रसीली री। जानति वैदेही नीके पी के विरहानल को बूझि सबही के हो के प्रिय बनमाली री ॥१४५॥

देखि हरि नीके नैन देखे हरनी के इन लागे तृन फी के पीके मग कों निहारहीं। नंद के कुमार छलि गये इनहूँ को अलि तासे यह बार बार आँसू धार डारहीं॥ ठाढे पति सोहैं नहिं जोहैं संग रूप राची चलति आगोहैं सरसोहैं ध्यान धारहीं। बूझि इन पाहीं ए ऊबि रही भुलै है नाहीं चलि गलबाँही धरि हरि सो बिहारहीं ॥१४६॥

आए हो सुगंधसने जाने हरि मिले तुम्हें कहो प्रिया संग के अकेले बन में रमैं। कहै जगप्रान प्रानप्यारे कों मिलावो जबै नहीं तो प्रभंजन जनात हमैं या समैं॥ काहे जम दिसि तें या निसि मैं चले हो तुम जानो प्रान प्रिय बिन बिना प्रान की हमैं। मिले जब दीनाद्यल तब ही निहाल होहिं लखिकै बिहाल हाल चूक बाल की छमैं ॥१४७॥

कहैं सब ठौर तेरी गति की है दौर पौन मौन कहा ह्वै रहे लखाओ वहि बल कों। गये हैं रमेस केहि देस है अँदेस हमैं कहिओ सँदेस जाय अबला बिकल कों॥ त्यागि कुलकाँनि सब व्याकुल विलोकैं हम मानति

कलप हरि बिना एक पल कों। आठो जाम लीन अब दीनं भयो मनमीनं छाड़ि बचै किमि कै छबीले छजि जल कों ॥१४८॥

अबहीं बिलोक्यो बल बीर तीर तेरे खड़े हाहा तूँ बताय वह मूरति किते गई। ऊतर न ऊभरै कबूतरसी कला करै सान्वी जम अनुजा बिरंचि रचना ठई ॥ अंक भरै सोहि वे निसंक नित आय आय तेहूं बंक तारि प्रीति करति नई नई। राखति बसाय वसु जाम हिय धाम ठाम स्याम रंग रंगी ताते स्याम मई तूँ भई ॥१४९॥

मोहन तजे गो तब रूसै मति मोहन सों मानिनी गुमान छाड़ि बरज्यो मैं बेरि बेरि। मानी नहीं रंचऊ बिरंच बल बानी मम जाते दहै हियो याते कियो सोई फेरि फेरि ॥ तजी है गुपाल बाल भई है बिहाल हाल हरी हरी करिके मुरछि परी टेरि टेरि। छकी है छबीली छबि छैल छोह छाकनि सों लगी धकधकी थकी कुँजनि मैं हेरि हेरि ॥१५०॥

भई हैं बिहाल बाल लाल के बिछोह काल सॉवरो सनेह देह दसा भूलि गई हैं। जागि मुरछा ते करै आतो घनस्याम ही की पिया पिया चातकी सी हिया रट लई हैं ॥ अहे प्राननाथ हाथ दीजिये हमारे साथ साथ दे न तजो बिरहागि ताप तई हैं। दुरति न क्यो हूँ प्रभा फुरति हिए मैं नई स्याम की सुरति करि भई स्याममई हैं ॥१५१॥

हटकैं लकुट गहि गायन गुपाल होय एक धौरी धूमरी पुकारैं लै लै नाम को। एक बाल बनी दधिचोर नंद को किसोर एक बरजोर धरि ल्याई नंद धाम को ॥ एक जसुमति बनि ऊषल सो बाँधि रही एक तो छुड़ावे रूप धरे बलराम को। लीला अभिराम करैं कुँज ठाम सबै वाम हरैं मन स्याम को धरैं हैं स्वाँग स्याम को ॥१५२॥

भूलैं हम कैसे वह स्याम को सुजान कान्ह गह्यो मन तुम्हैं ज्ञान रह्यो न अपर को। गोरज सुहात गात पीत पट फहरात देखि ललचात चित हित देवहर को ॥ धरै सिर मोरपपा लिए सब सखा संग अति

ही उमंग अंग जात समै घर को। आवत नचावत हेई छन तिरीछे आछै गैयन के पाछे स्वाँग काछे नटवर को ॥१५३॥

अलक अँधेरी में लियो है मन धन चोरि अब तो हमारे कान्ह तलफैं विकल प्रान। लीजै न कलंक हमैं बेधि कै वियोग अनी बनी है निसंक बंक भृकुटी तनी कमान॥ अनल उच्चाट रूप लाट में तचाई भारी कारीगर काम ने सुधारी अभिराम सान। चाह सो चितोनि कोर चुभी चित बीच मेरे एरे चितचोर तेरे लोचन अचूक बान ॥१५४॥

मुनिन के मन अलि पुंज जहँ गुंजत हैं सोई पद कंज मंजु हमैं परसाइये। नीलकंठ सुखधाम एहो घनस्याम देव मंद मंद मुसुकानि बूँद बरसाइये ॥ गोप की किसोरी भोरी चितवै चकोरी चारु ताको तिन ओरी नाह नाहिँ तरसाइये। छोड़ि छलछंद ब्रजचंद निज जान हमैं आनँद को कंद मुखचंद दरसाइये ॥१५५॥

व्याल तें उबारी गिरिधारी टारी है दवारी अबलों मुरारी भारी संकट विषे रखे। तकैं तव ओरी किमि तजैं मुखचंद पूर कैसे ए चकोरी धीर धरैं धूर के भषे ॥ अहे गोपवंस अवतंस राज-हंस तुम मम मन मानस रमन कित गे सपे। आवरे लपाव हमैं साँवरे सलोने तन जुग से बिहाय छन रावरे बिना लपे ॥१५६॥

बिरह पयोधि तें कृपा के सिन्धु दीनबंधु कीजै पार निराधार हिय के जहाज कों। प्रेम नेम लोप धीर पथी ह्वै अधीर रहे एहो बलबीर लपो बिकल समाज को ॥ गोकुल के गोकुल कों व्याकुल उबारे प्यारे हुते जब वारे धारे धराधरराज कों॥ स्वामी सिरताज मेरे टेरे किन सुनो आज एरे ब्रजराज तेरे काज तजी लाज को ॥१५७॥

सुनि मम बानी दीन द्रवैं पवि पाहन हूँ रोवैं तरु मेली जड़ वे कुंज बन की। कृपासिंधु दीनबन्धु बरनैं बिरद वेद होत नहिँ खेद तुम्हें देखे दसा जन की॥ हा हा उन दिन की सुरति तुम भूले

नाह करो अनुकूले ह्वै हमारे सब मन की। छाजै छन छन छन छटा छबि छैल तेरी मेरी मति घटा में धरी है रीति पन की ॥१५८॥

तकि तकि चहूँ ओर जकि सी रही हैं थकि बकि बकि उठैं छकि छैल की लगन मैं। हा हा बलबीर कों बताय मेरी बीर एरी धाय धाय बूझति है कुंज के मगन मैं ॥ नंद के किसोर चितचोर कित खड़े ह्वैहैं गड़े ह्वैहैं कहूँ कुस कंटक पगन में। अजहूँ न आये बन-माली कित गये आली बोलीं चटकाली लाली लहकी गगन में ॥१५९॥

प्रगटे गुपाल लाल बालन को देखि हाल लपटी तमाल हरि तन में लता सी ह्वै। एक गरे धरे बाँह नाँह सो भिगारि रही एक पद पाँह परीं बिनवति दासी ह्वै ॥ एक बाम बाम भुज गहे अति अभिराम स्याम घन अंग संग सजैं चपला सी ह्वै। एक ब्रजचंद की पिछौरी पीत गहे गोरी एक तो चकोरी सम चितवत प्यासी ह्वै ॥१६०॥

[गोपिकाओं के वचन।]

अवली रदन की बदन में बिराजैं जनु सुखमा के दार रहे विज्जु बीज गसि कै। नैन मन रंजन ए कंज मदगंजन हैं खेलै जुग खंजन ज्यों ससि में निकसि कै ॥ कुंडल की डोलनि अमोलनि कपोलनि मैं अहो दीनद्याल हिए हालति हैं धसि कै। आनंद के कंद ब्रजचंद नंदनंद नेक मेरी ओर देखिये जू मंद मंद हँसि कै ॥१६१॥

चंद ते दुचंद मुखचंद की चमाकैं रुचि चंदमौलि चित्त ह्वै चकोर रह्यो फसि कै। चोरि लेत चेत चख चंचल चितौनि चारु रुही दीनद्याल बनमाल गरैं लसि कै ॥ केसर ललाट दिए गात को त्रिभंग किए रहो हिये मेरे यह बानक सों बसि कै ॥ आनंद के कंद ब्रजचंद नंदनंद नेक मेरी ओर देखिये जू मंद मंद हँसि कै ॥१६२॥

जाय हर सीस गंग भृकुटी कुटी के तट जटाजूट कानन में तप कों बढ़ायो है। मिल्यो मारतंड के प्रचंड तेज कुंड तहाँ तातैं

छवि झुंड बरदान पाय आयो है ॥ पूरन पियूष धरे अस्वन पैं च.ढ्यो आनि तऊ न मयंक रंक समता कों पायो है। आनन तिहारो हरि कोटि चंद तें दुचंद चंदमुख बीच मनो मेचक लगायो है ॥१६३॥

[जलकेलि ।]

करैं जलकेलि स्याम भुज तें भुजान मेलि मनो हेम बेलि रही लपटि तमाल सों। एक अंक भरें लै निसंक ह्वै मयंक मुखी एक अंक नैन के बतावैं सैन लाल सों ॥ एक छुटि धावैं एक पकरि ले आवैं जुटि एक नीर नावैं पानि पल्लव रसाल सों। महिमा विसाल नहिं जानैं वेद जासु ख्याल परो प्रेमजाल जो छुटावै जग जाल सों ॥१६४॥

यह अनुराग सुबाग मैं, सुखद दुतिय केदार।
बिरच्यो दीनदयाल गिरि, बनमाली सु बिहार ॥१६५॥

[मधुपुरी गमन समय वात्सल्य-रस-पूरित यशोदा-वाक-सारणी]

कवित्त ।

प्रान के अधारे मेरे वारे ए पधारे चहैं भूप के अखारे जहाँ भारे सजैं सूरमैं। पीर बढ़ी है सरीर बूड़ति बियोग नीर धीर धरों कैसे करों आँखिन के दूर मैं ॥ डारो बरु कंस कारागार मैं जँजीर भरि एरी बीर जाहु जरि धन धाम धूर मैं। जोपै ए कन्हैया बल भैया दोऊ लाल मेरे खेलै कहि मैया बैन नैन के हजूर मैं ॥१६६॥

चकई नचावै सीखै धावै पौरि आँगन लौं आवै दौरि गोद मेरे मानि कै डरन कों। पहिरि न सकै चीर छिनै छिन छकै चीर छोड़ै नहिं बीर छोटे छोह छोहरन कों। कहों काहि गोप पाहिं सुनै कोऊ मेरी नाहिं गये सभा माहिं याहि कहा है करन कों। मीत कुलघालक कहैं न नीतिपालक सों कान्ह अजों बालक चरावै बछरन कों ॥१६७॥

जाय जनि प्रान के पियूष मोहि माँगन दै कौन अनुरागन सों आँगन बिहारिहै। अरि कै मथानी धारि माखन को खैहै कौन भौन बीच लाखन खिलौन को सुधारिहै॥ एरे मेरे छैया तूँ कन्हैया मैं बलैया जाउँ मैया मैया टेरि कौन मोहि को पुकारिहै। कंस धूत दूत को सँदेसो सुनि चले पूत कौन पुरुहूत धार धराधर धारिहै॥१६८॥

दारुन दुख दव दया के हैं करम कूर कहत अकूर पूर बाँकुरो ठगन मैं। लाय कै ठगोरी दोरि गोरी मन मोहन लै भोरी रहीं गोरी सब सोचति मगन मैं॥ करति पुकार हाय बर जोरे बार जाय धरति न धीर धाय परति पगन मैं। मात बिलषाति भूरि जीवन की मूरि हरे दूरि रथ जात धूरि पूरित गगन मैं॥१६९॥

[द्वादस मास दोहा—मणिमय कूप वर्णन]

मधुसूदन गे मधुपुरी, पुरी न आँवन आस।
मास जरावन अब लगे, प्रिय विन बारह मास॥१७०॥
चैत चंद की चाँदनी, मंद मंद यह वाय।
लागति नाहि पसंद मुहिँ, मनो फंद दुखदाय॥१७१॥
माधव मास बिकास भे, नव पलास चहुँ पास।
पास न हृदय निवास जो, तो ये पावक पास॥१७२॥
तपति चिता ज्यों जेठ दिन, ऊपर हेठ समान।
खसखाने खाने चहैँ, कोन करै अब त्रान॥१७३॥
भे अषाढ लखि गाढ़ दुख, ज्यों ज्यों बाढत ताल।
कूल हूल से लगत पिक, कूक हूक की जाल॥१७४॥
साँवन मनभावन विना, लगत सुहावन नाहिँ।
आवन की कछु नहिँ लिख्यो, पावन पाती माहिँ॥१७५॥
भादव भा दव के समो, तुम विन हे प्रिय प्रान।
चपला पावक पुंज सी, धुरवा धूम समान॥१७६॥

मनरंजन आये नहीं, खंजन आये क्वार ।
मो मति अति गंजन करै, विकसे बनज उदार ॥१७७॥
कातिक घातिक सुमन ये, साजे सुरँग समान ।
सस्यन के अंकुर लगैं, प्रिय बिनु बान समान ॥१७८॥
अगहन से दरसात ये, सरसों सुमन सुहात ।
हृदय गहन आयो नहीं, अगहन गहन बिहात ॥१७९॥
प्रान दान कों चहत हैं, पूस लिये कर कूस ।
धिक जलूस प्रिय बिरह में, जरत देह बिनु फूस ॥१८०॥
जारत माघ निदाघ सो, प्रिय बिनु सुख दुख साल ।
करन लगी बैारी हमैं, बैारी डार रसाल ॥१८१॥

कुंडलिका ।

मन मोहन आये नहीं आयो फागुन मास ।
वधिक विकासित वाटिका सोहत मानो पास ॥
सोहत मानो पास पलास हुतास चहूँ दिस ।
लायो तिहूँ समीर तीर से पीर कहूँ किस ॥
याके बन प्रिय सषादु के कूकैं गिरि खोहन ।
क्यों बचि है मति मृगीन गोहन हैं मनमोहन ॥१८२॥

[नंदयशोदा परास्परानुकथन]

कवित्त ।

कहिये महर बात सहर तजे पैं प्रात कहा कह्यो तात जब तुमकों बिदा कियो । आई सुधि नाहिँ तुम्हें कोसलेस हूँ की कछु पविते कठोर बरजोर ह्व रह्यो हियो ॥ जियें नहिँ एक पल जल तें बिहीन मीन क्यों प्रवीन होय खोय प्रानप्रिय कों जियो । धन्य तुम नाथ कहा कहौं मैं तिहारी गाथ आपनो अमोल लाल ग्रैार हाथ मैं दियो ॥१८३॥

जानी न कन्हाई प्रभुताई मति मंद मैं तो कहै नँदराई चूक परी सेवकाई री। कुंजन के पुंज बीच मंजु कंज पायन सों गायन कृपा करतें हम चरवाई री॥ तैं हूँ दधि काज ब्रजराज कों उलूषल मैं छाड़ि लाज बाँधि पास आँखिन रोवाई री। भूपनि की सभा बैठि नातो मानि दीनद्याल अजहूँ कृपाल करै नंद की दुहाई री॥१८४॥

नन्द बिलखात कहि सुनि री महरि बात नात लिये जात हम भूले न कृपाल कों। अजहूँ कहावैं गिरधारी बनवारी उत जानै हैं हमारी सुधि देवकी के लाल कों॥ भूपनि की सभा में सिखावैं वृद्ध राजनीत सेवैं नवनीत आप गोकुल की चाल कों। मोती मनि लाल नग सोहत बिसाल जऊ तऊ न कृपाल तजैं गुंजन की माल कों॥१८५॥

[शुकावली—नंदनंदन कथन उद्धवप्रति]

कवित्त।

कहैं जदुबीर सुनो सखा मम धीर ऊधो हरो वृज पीर जाय जोगहि जगाय जू। बीतत अलप पल कलप समान जिन्हैं तिन्हैं ज्ञान को बिधान आइये बुझाय जू॥ कीजिये उरिन हमैं गोपिन के रिन बाढ़े आप बिन गाढ़े दिन करै को सहाय जू॥ चले सिर नाय स्याम सूरति बनाय रथ पथ हरषाय गए जहाँ नंदराय जू॥१८६॥

[उद्धव वचन नंद प्रति]

रहिए अनंद मांहि गुनिए अँदेस नाहिँ सुनिये सँदेस नंद निज प्रान धन को। कह्यो पाय लागन बड़ेई अनुरागन सों भूलियो कन्हैया बल भैया हूँ न छन को॥ कोऊ न बलैया लेत मैया बिनु मोहिँ इतै होहिँ दूबरी न गैया कीजियो जतन को। माखन कियो है नाहि चाखत हों तबहीं तै जबहीं तें आयो तजि आपने वतन को॥१८७॥

[नंद-यशोदा वचन उद्धव प्रति]

सवैया।

बूझत नंद जसोमति बात कहो कुसलात उतै दोउ भाई।
आवहिँ ये कब प्रान निवास उदास सखा सब लोग लुगाई॥
पीत पटी सिर लै लकुटी कर या जमुना की तटी सुखदाई।
फेरि कहो कब देखिहौं ऊधव या बन चारत धेनु कन्हाई॥१८८॥

लालन गे जब तें तब तें बिरहानल जालन ते मन डाढ़े।
पालत हे ब्रज गायन ग्वाल हुतो जब आवत संकट गाढ़े॥
स्याम बिना सुख धाम नहीं छिनही छिन जात महा दुख बाढ़े।
फेरि कहो कब देखिहों ऊधव माधव माखन माँगत ठाढ़े॥१८९॥

डोलत बाल मराल कि चाल सों खेलत लाल फिरै ब्रजखोरी।
मोहत माल बिसाल हिये पर सोहत नील सुपीत पिछोरी॥
साथ सखा सिर मोरपखा धरि हाथ नचावत है चक डोरी।
फेर कहो कब देखिहों ऊधव स्याम लला बलिराम कि जोरी॥१९०॥

सोवत ढांकि हुते पटपीत सों भोर भये मुख-पंकज खोलत।
दै जननी मुहि माखन भावत धावत बालन संग कलोलत॥
लागत कै कहि तात गरे सुनिहौं कब तोतरे बैननि बोलत।
फेरि कहो कब देखिहौं ऊधव माधव को इन आँगन डोलत॥१९१॥

एक समै लिये गोहन ग्वालन मोहन चोरि कै खात दही।
ऊधव जू छल सों हरिये हरि की जसुदा दोउ बाँह गही॥
ऊखल बाँधि दयो डर ता छिन आँखिन ते जलधार बही।
सो तकसीर भई हम तें सुत जो उत यादि करैं तो सही॥१९२॥

अवधेस नरेस कि प्रीति सही प्रिय के बिनु प्रान पयानु कियो है।
सँग फूटत फूट से फूटो नहीं मम पाहन हूँ ते कठोर हियो है॥

हम तें वरु मीन प्रवीन बड़ो जल से पल एक नही न जियो है ।
अब ऊधो हहा बलबीर विछोह से क्यों छिछिला मोहि छोर दियो है ॥१९३॥

कवित्त ।

भाखति जसोदा पाय परो मैं तिहारे ऊधो कहियो बुझाय मेरी विनती कन्हैया सो । जा दिन पधारे पग गोकुल तें प्रान प्यारे गो-कुल विचारे भूखे फिरैं ता सुमैया सों ॥ पावहिं विपुल पीर बछरा विपिन गेह धावहिं अधीर नेह लावहिँ न गैया सों । सूखि रहे कुंज पुंज गुंजत न भौंर भीर एहो बलबीर कैसे रह्यो जाय मैया सों ॥१९४॥

प्रान के अधारे मेरे वारे कों भुलाय ल्यावैं कहियो बुझाय ऊधो प्यारे बल भैया सों । वा दिन की बात भूलि गई तुम्हें मेरे तात खात है न दही भात अरुझे जुन्हैया सों । खेलत उमंग भरे संग सखा बालन के लालन क्यों रूसि रहे ब्रज के बसैया सों । बूड़त मझार धार निराधार गोपी ग्वार कीजै एक बार पार कृपा मई नइया सों ॥१९५॥

[गोपी विरह-वर्णन]

[वसंत वर्णन]

कवित्त ।

कलित कमंडल कमल कलिका के कर किंसुक कुसुम बर अंबर सुहायो है । ठौर ठौर भौरन की श्रेनी जपमाल मौर सजे हैं रसाल जटाजूट सो बढ़ायो है ॥ सिख्यन के गीत कीर कोकिल कपोत संग पढ़ै ह्वै उमंग चहूँ ओर सोर छायो है । कंत बनमाली को पठायो लाली सों लसंत आली री वसंत धनि संत बनि आयो है ॥१९६॥

गान कोकिलान के सुबाँसुरी की तान मनो सजै बनमाल फूल जाल ये अनंत हैं । सोहत समद अलि कोकनद पैं झपात मुख पै प्रभात जनु लोचन लसंत हैं ॥ उड़त पराग पट पीत फहरात सोई

हियो हहरात विरहिन को तुरंत है। आयो री वसंत स्यामा कंत को बनाय वेष देखो विलसंत यह कैसो छविवंत हैं ॥१९७॥

ललित लता के नव पल्लव पताके सजैं बजैं कोकिलान के सु कल गान के निसान। ठैार ठैार मैारन पै भैांर भीर झैार करैं दैार दैार गावत नकीबन की तैार गान ॥ फूलन की सैन मैंन सैंन सी करै हैं चैन सीतल सुगंध मंद मारुत चलत बान। सजि कै समाज साज बिरही बिकल काज पाहि ब्रजराज रितुराज आज हरै प्रान ॥१९८॥

[ग्रीष्म वर्णन।]

चलति उसास की झकोर घोर चहूँ ओर नहीं है समीर जोर मुधा कहैं लोग है। सोचन की लहरैं न ठहरैं सकोचन तें रवि कर होय नहिं स्याम सिंधु सोग है॥ मृग न भ्रमत मेरे मन के मनोरथ ए फेरे नहिं फिरैं लगी प्रीति तृषा को गहै। धीर धरो बीर कैसे तपत उसीर भैान नाँही यह ग्रीषम री भीषम वियोग है ॥ १९९ ॥

[वर्षा वर्णन ।]

सोहत सुभग बैल वाहन विमल वाय विसद वकाली शेष हार लपटायो है। सादर सो लाय बर बादर विभूति अंग दादुर उमंग धुनि डमरू बजायो है॥ कारी घटा गजछाल धारा जटा है विसाल दामिनि छटा त्रिसूल सुंदर सुहायो है। काटि है कलेस मोद दैहै री भटू विसेस धरि कै महेस वेस सावन लखायो है ॥ २०० ॥

कैकिन के नाच गान कुहूँ कूक कोकिल की रटनि पिपीहरा की नामं धुनि ठानी है। बूँदन के पात अलि लोचन श्रवत जात जात तृन तजा पुलकावलि निसानी है॥ माल हैं विसाल बक पातिन की दीनद्याल बारि बाहन ए वृंद बंदना बखानी है। झला झलझल चपला की दुति ध्यान भई पावस न होय भक्तिकला प्रगटानी है ॥ २०१ ॥

घन की घनक घन घंटा घनकत आली दामिनि दमक देत दीपक प्रकास है। बूँदन के फूल जाल धनु लै विसाल माल आए झुकि मेघ सो प्रनाम को हुलास है॥ मोरन के हार चहुँ ओर बिनै दीनद्याल पवन झकोर चोर करै आस पास है। पूजन करत प्रीति रीति प्रगटाय यह पावस न होय परमेसर को दास है॥२०२॥

स्याम छबि धरे फिरें धुरवा धरनि छ्वैरी इंद्रधनु पीत पट चटक दिखायो है। दामिनि दमक दुति देत दुहूँ ओर सोई कुंडल अमोल लोल गति चमकायो है॥ विसद बलाकन की पाँति बनमाल अलि मंद मंद मेघ सुर बाँसुरी बजायो है। आवन अवधि रही प्यारे मन भावन की सावन सुहावन सो साज सजि आयो है॥२०३॥

पावस में जागि अनुरागि री सरोज नैन रैन दिन देत उपदेस को मनोज मुनि। नंद के किसोर बिन कैसे रहैं जीउ छिन पीउ पीउ होत पपीहा की चँहू ओर धुनि॥ अंग थहरान लगे लता लहरान लखि सखिन नहिं धीर पीत पट फहरान गुनि। घटा घहरान छन छटा छहरान लगी हियो हहरान लगो झर झहरान सुनि॥ २०४॥

आली प्रान गाहक वकाली ए बलाहक में दाहक सी जगें पीर इंद्र गोप गन तें। धीर धरै बीर किमि पेखि सुनासीर चाप उठत समीर लै कलाप ताप तन तें॥ ठैार ठैार मोरन की कोर चहुँ ओर चितै हियै बरजोर ह्वै मरोर छन छन तें। दामिनि दमक देखि उठीं बीर कुंज बाम, लखि घनस्याम झरि लगी री दृगन तें॥ २०५॥

"पावस न प्यारी चढ़ो सैन साजि मैन भारी कोकिलन की बनैाल धैाल धुजा बकमाल। बंदीजन मोरगन बूँद जोर बान घन दादुर निसान देत दीह दीह नदी ताल॥ प्यारे के निरादर तें कादर करनिहारे कारे कारे धूमधारे बादर द्विरद जाल। दामिनि दमक करवाल की चमक साल करति बिहाल हमें बाल बिना नंदलाल॥ २०६॥

झूमत झुकत झूमि झूमि घूमि घूमि चले भूमि सो भिरत मनो बल के उमंग ये । बार बार गरज सुनावैं बरजे न जाहिँ नहीं हैं उदार धार मद के तरंग ये ॥ दंत बगपाँति तें डरावैं बिनु कंत भोरे अंकुस समीरहि न मानै कारे रंग ये । करिए सहाय आय ऊन मैं स्याम घन होहिं न सघन घन मदन मतंग ये ॥ २०७ ॥

साँझ हू सकारे झनकारे होत नदी नारे पावस के साँझ झाँझ झिल्लीन तजत ये । दामिनि मसाल को दिखावे ताल दादुर दै मोर चहुँ ओर नाच नाट को सजत ये ॥ धुरवा मृदंगन की धीर धुधुकार ठान राते नैन माते कल गान को भजत ये । सोक को जनम ब्रज ओक में भयो है ऊधो साँवरे बिरह तें वधावरे बजत ये ॥२०८॥

सावन सुहावन विसेषि नभ धनु लेखि यादि होत झट पट पीत अभिराम की । तकि बगपाती बिलपाती अकुलाती मति आवति सुरति वह मौलसरी दाम की ॥ मोर चहुँ ओर देखि मुकुट सुरति होति चपला चमक पेखि कुंडल ललाम की । ऊधो ब्रज बाम कैसे धीर धरैं सूने धाम लखि घन स्याम सुधि आवै घनस्याम की ॥२०९॥

कारे कारे बादर डरावने लगत अब दादुर की धुनि सुनि भूलै दसा तन की । बूँद की झकोर झकझोर पुरवाई करै हरै मन मोर सोर चहूँ ओर बन की ॥ हरी हरी लतिका करावे घरी घरी यादि इन्द्र गोपि लखि लाल गुंज माल गन की । नंद के कुमार बिनु लगै उर आर ऊधो पीहा पुकार झनकार झींगुरन की ॥२१०॥

साची कहैं रावरे सों झाँवरे लगैं तमाल आवै जेहि काल सुधि साँवरे सुजान की । फूलभार भरीं डार जैसे जम जार ऊधो कालिंदी कछार सजै धार ज्यों कृपान की ॥ चपला चमक लगैं लूक है अचूक हिये कोकिल कुहूक बरजोर कोरवान की । कूक मुरवान की करेजा टूक टूक करैं लागति है हूक सुनि धुनि धुरवान की ॥२११॥

पावस मैं नीरदै न छोड़ै छन दामिनि हूँ कामिनि रसिक मनमोहन को क्यों तजैं । अचला पुरानी पुलकावली को आनी उर धाय रजवती सरि सिंधु संग को तजैं ॥ नीर को नपुंसक कहत कवि धीर सवै होय कै अधीर सोऊ नारी नारी को भजैं । कुसमित लता लखो लपटीं तमालन सों लालन सों चहो ऊधो क्यों न अजहूँ लजैं ॥२१२॥

कल न परै ये कन्हैया की सुगैया लखे चलन समैया में ललन कह्यो आवनो । औधि आस स्वास रही प्यास अधरामृत की आयो यह सावनो न आयो मनभावनो ॥ पीरे वा दुकूल की सुरति आये सूल उठैं कूल कालिंदी को हूल लागत डरावनो । पावस रसम देखि दहत असम-बान ऊधो क्यों खसम कह्यो भसम चढ़ावनो ॥२१३॥

गये कहि आवन न आए यह सावन मैं ऊधो मनभावन भुलाय रहे हैं तहीं । ह्वै रहीं बिहाल बाल ब्रज की गुपाल बिना रैन दिना नैन ते अपार धार हैं बहीं ॥ बैठि जन पुंज ठाम जमुना निकुंज धाम छाड़ि स्याम पाँहि ह्याँ सुहात नाहिं है कहीं । गरजैं हैं घन घोर लरजैं हैं बन मोर नंद के किसोर सुनी अरजैं अजौं नहीं ॥२१४॥

ऐहैं कबहूँ धौं हरि कहो तुम सूधो ऊधो ब्रज की बधूटी जूटी बूझति है बेरि बेरि । देह को परस मृदु सरस सनेह वह होयगो दरस घनस्याम को कि नाहिं फेरि ॥ आयो यह सावन न आये मन भावन क्यों लगो है डरावन मनोज जनु फौज घेरि । दूमैं द्रुम डार छोर झूरैं पिक बरजोर घूमैं घन घोर मोर जूमैं चहु ओर टेरि ॥२१५॥

जा दिन तें प्रान रखवारे ने पधारे ऊधो तब तैं हमारे उर भारे खेद दैं सबै । कोकिल कुहूक हूक लगैं बिज्जु कला लूक टूक टूक करैं हियो मेघ गरजैं जबै । घेरे दुख मैन मति धीरज सके न धारि आवत न चैन दिन रैन मन मैं अबै । ऐहैं सुख ऐन मन लखे सुखमा के पैन आये सुख दैन यह बैन सुनिहों कबै ॥२१६॥

जब ते हमारे प्रान प्यारे ने पधारे उत धीर नहिं धारे जात पीर हिये में जगैं। सीतल समीर भयो तीर कालिंदी के तीर बीर बल बीर बिनु नीर द्रग तें डगैं॥ केसरी समान जब बिरह परैहै भान जोग ज्ञान ए गयंद जूथ तब ही भगैं। बोली कोकिलान की करै हैं सूल हूल हमैं ऊधो ए कंदवन के फूल गोली से लगैं॥२१७॥

दूबरी भई है देह कूबरी सनेह सुने ऊबरी न सोक सिंधु पाय ज्ञान बोहि तैं। रहीं अकुलाय हाय करैं सिर को नवाय कहैं जदुराय रहे केते दिन को बितैं॥ गाढ़ ए असाढ़ देखि बाढ़ति बियोग बिथा दामिनि दमक मोर सो रहैं जिते तितैं। आए घनस्याम काहू बाम ने सुनाई टेरि चौंकि चौंकि उठीं चंदमुखी चहूँघाँ चितै॥२१८॥

सावन सुहावन या लगत भयावन सो आवन अवधि अब सोचैं गजगामिनी। ऐहैं कबहूँ धौं बलबीर ह्याँ कि नाहिं ऊधो कैसे धीर धरैं ए अधीर व्रजकामिनी॥ जहाँ तहाँ जौँगन की जोति जगैं ज्वाल जैसी जम की जमाति सी जनाति जाति जामिनी। जारैं हैं पपीहरा पुकारे पीउ पीउ टेरि घेरि मारै बादर दरेरि मारै दामिनी॥२१९॥

[खद्योत वर्णन]

दोहा।

यह पावस रजनी नहीं, है अंजन गिरि खोह।
काम भूत के दीप ए, नहिं जौंगन संदोह॥२२०॥
नहि जौँगन गन जगमगैं, पावस निसि के माहिं।
ये तो खल के हृदय थल, प्रगटि राग दुरि जाहिं॥२२१॥
होय न पावस तिमिर यह, नहिँ हैं जौँगन जंत।
ए निसि काली के समद, चलित सुललित दृगंत॥२२२॥
नभ नहिं सघन तमाल तरु, नहि गरजन बर बैन।
रातिन कोकिल पाँति है, नहिं जौंगन ये नैन॥२२३॥

रवि नृप गे सेना थकित, ये हैं जीँगन नाहिं ।
गए जसी ज्यौं रहत हैं, पीछे जस जग माहिं ॥२२४॥
निसि न प्रिया को नील पट, नहि जींगन नग जाल ।
घन कुँजन हेरति फिरैं, बिज्जुन करैं मसाल ॥२२५॥

[उत्प्रेक्षालंकार]

सजल जलद जुत जामिनी, जगैं सुजींगन जाल ।
मानहु रवि के बाल बर, क्रीडै कुंज तमाल ॥२२६॥
जहँ तहँ जुगुनू जगमगैं, बरषा रजनी माहिं ।
मानहुँ कहुँ कहुँ कलि विषे, त्रेता बीज लखाहिं ॥२२७॥
सोहत सावन सघन घन, जहँ तहँ जीँगन गात ।
मानहुँ रस शृँगार मैं, कहुँ कहुँ रुद्र सुहात २२८॥
सोहत जीँगन जाल चल, नवल जलद के मूल ।
मानहुँ झरैं तमाल तें, बन्धु जीव के फूल ॥२२९॥
जींगन पावस रैनि मैं, दुरि दुरि बहुरि लषाहिं ।
जनु रतनाकर मैं रतन, प्रगटि प्रगटि छिप जाहिँ ॥२३०॥
फिरत अँधेरी रैन मैं, जीगन करत बिहार ।
मानहुँ मानिक मनि जगैं, रति के कबरी भार ॥२३१॥

[शरद वर्णन]

कवित्त ।

मंद मुसुकानि चन्द जोति मैं उदोति होति कुंद मैं दिखावै दुति दँसन रसाल की । खंजन लखावै कान्ह नैन मन रंजन से पानि लो सुहावै कला कंजन विसाल की ॥ भौरनि की गुंज पुंज मंजुल मजीरनि सी हँसनि चलावै गति स्याम के सुचाल की । आयो री सरद काल दरद बढ़ावन को जरद करै है हमैं सोभा धरि लाल की ॥२३२॥

तारा गन भूषन सघन अंग अंगन में बसन मयूषन सों रही लोनी

लसि कै। दंत कुमुदावली चमक चारु चोरैं चित जोरैं मुख चन्द को सुमंद मंद हँसि कै॥ मालती सुगन्ध सनी सालती हिये में साल रहैं नंदलाल कहूँ या के ख्याल फसि कै। सरद विभावरी न होय सुनि बावरी तूँ दावरी लियो है यह सौति स्याम बसि कै॥२३३॥

डोलैं नभ वीथिन न बोलैं धरि मौन व्रत भए सित भूति लाय रहे तित छजि कै। जीवन द्विजन को दै जीवन मुकुति होय बने हैं विमल वाम चपला को तजि कै॥ दीजै नहिं दोष एक एरी अलि ऊधव को स्याम भये वाम अब करो जोग रजि कै। नीरद सरद के दरद दलि देस देस करैं उपदेस ये ऊजरी बेस साजि कै॥२३४॥

[हेमंत वर्णन]

छाई सीतलाई मुरझाई कला कंजन की मानो मन रंजन की पाई कै जुदाई है। का पै कहि जाई दिन हूँ लघुताई जनु रही छलताई लखि प्रीति सकुचाई है॥ रैनि अधिकाई भयो बिरह सहाई तासु सीत चहु-धाईं बिनु मीत भीति धाई है। पीरस रसाई फूले सरसों सर समाई हेम रितु आई ना कन्हाई सुधि पाई है॥२३५॥

[शिशिर वर्णन]

पटु सो छपावैं पर छिद्रन को आठो जाम अति अभिराम जन पूरैं जन काम री। जासु संग पाय कै उमंग माँह राते सब माते गुन गावैं नहि राग रंग बाम री॥ लखो यासु मन तन रहे हरि अनुरागि रटै द्विज साखा वर बाग जासु धाम री। सीतल सुभाय चित्त ज्ञाके मित्र हू कों ध्याय सिसिर मैं सज्जन न सज्जन भे स्याम री॥२३६॥

[श्लेषमय षट्ऋतु वर्णन]

[वसंत वर्णन]

जामैं पंच सुर धुनि सुखमा विराजि रही देइ सुविनोद मैं सुवास सदा गति है। कुंदन की कला चहुं ओर झलामलैं होति मनो उमा-पति की उदोति जोति अति है॥ माधव सेवैं रसाल बिकसे बिसाल

बेला ठौर ठौर जामैं सुक वानीह्र लसति है। किधौं सुखरासी हैं बसंत ऋतु दीनद्याल किधौं अबिनासी पुरी कासी बिलसति है ॥२३७॥

सब कुल जूथ मिलि बंधु जीव सोहत हैं के सर मैं अंबर सुखग जन वास है। करैं अलि गान फिरैं भैारी मुद भरी संग चहूं ओर आवति गुलाब की सुवास है॥ सजैं अति मुक्त दुति झालरति कानन मैं कुंदन की कला फैलि रहीं आस पास है। मोर हैं रसाल रटैं साखा द्विज दीनद्याल ब्याह को समाज धैां बसंत को प्रकास है ॥२३८॥

सोहैं सुकवानी चहूं ओर मंजु कानन मैं षट पदी धुनि प्रात बेला बिलसंत है। केतक असोक पर सेवत सुधीर द्विज बोलत रसाल सुमन सुविकसंत है॥ तरुनी के देखन को नैनन नचावैं जित माधवी सुरति जुत बात विकसंत है। उपजैं बिसाल रुचि देखतही दीनद्याल किधौं संत सभा किधौं सोभित बसंत है ॥२३९॥

[ग्रीष्म वर्णन]

तापित दुजन कौं है देत सुमनै सुखाय लगैं अति कानन मैं वात ताप मैं बली। मित्र वृष कौहैं जंह भारी दुखकारी बनो बौलैं दृग राते बिनु काल वृथाही छली॥ जीवन जलावति है लावति है आगि मनो दीनद्याल सारसन मिलै जल की थली। देति नाहिं वसन सुवसन उतारे बिनु किधौं पट ग्रीषम कै घोर खल मंडली ॥२४०॥

[वर्षा वर्णन]

बरषैं पुनरवसु धारा है उदारा जंह इन्द्र गोप गोपि काली फिरैं घूमि घूमि हैं। द्विज हरखावैं पय पावैं चहुँ ओरन तें अंबर सुहावैं सिखि आवैं जूमि जूमि हैं॥ चपला सहित बसु जाम जामैं घनस्याम गति अभिराम अति चलैं झूमि झूमि हैं। चहूंघा तमाले हैं कदंब तालैं दीनद्याल पावस रसालैं कै बिसालै ब्रज भूमि हैं ॥२४१॥

सीतल कमल करतें द्दिग सिरावत हैं देत दान जीवन कों

मान तें दुजन हैं। वकुल की माला हिए चपला बिसाला धरे नील कंठ जाको नित चाहैं दरसन हैं॥ होत है उमंग अंग सुनि कै सारंग धुनि देखे हरखाय उठैं गाय गोप मन हैं। अंबर बलित रित पावस मैं दीनद्याल सजैं घनस्याम किधौं सजैं स्याम घन हैं॥२४२॥

सदा प्रतिपाल करैं अति से कृपाल रूप दीनद्याल जग मैं अनूपम उदार हैं। दुजन को देत सुख कृपाधार बार बार सेवा बिनु सब को करत उपकार हैं॥ चपला की कला उर राजति है पला पला नील-कंठ जासु धरैं ध्यान करि प्यार हैं। अति अभिराम दुख दारिद को दलैं धाम राम घनस्याम जग जीवन अधार हैं॥२४३॥

[शरद वर्णन]

सीता गौन मंद मंद सुखद है जासु संग राजत सारंग वर लच्छन बिसाल हैं। आनन्द सों फूलि रहे जाको लहि कै अगस्ति सोभित सुतीछन मुदंकुर रसाल हैं॥ मोहत सुमन कौं लै सोहत सिलीमुख ते हंस बंस धीर अति चलत सुचाल हैं। अंबर विमल लखि मोद होत दीनद्याल सरद को काल किधौं राघव कृपाल हैं॥२४४॥

[हेमंत वर्णन]

तूल सी लसी सुअंग अति से उमंग देति जासु मैंन बास जोगी जन बिलसंत हैं। सीतल सवारैं उर कला दरसाय करि जा तनु बिलोकि सोक कोक बिलपंत हैं॥ जासु की विभावरी विसाल लखो दीनद्याल मित्र रूप सबही कों सुखद बसंत है। किधौं है हिमंत कै सुतंत सित संत सभा किधौं सुख माल संत कमला के कंत हैं॥२४५॥

[शिशिर वर्णन]

सोहैं सरसो हैं सरसोहैं करि डारैं नैन लगैं सर सो हैं बिरही को दिन राति है। अंबर सुहावै प्रभा भावै बरही की बर सीकरि परत निसि सब कौं सिराति है॥ गावत हिंडोलैं नर नागरी गरीय

गिरा कहूँ कहूँ कोकिल की काकली सुनति है। चंद नं दिखात कहूँ दीनद्याल बंदन मैं नंदति है पावस कै सिसिर सुहाति है ॥२४६॥

दोहा।

यह दुरघट षट रितु कथन, विविध अरथ कों देत।
थिरमति दीन दयाल गिरि, किये सुकवि जनु हेत ॥२४७॥

[प्रेम मंडन मकरंद।]

आयो ह्याँ पठायो मैं मुकुंद को तिहारे हेत हैं अनन्द कंद वे न नन्द नन्द मानवी। लोक लोक मैं प्रकास जिनको विभासि रह्यो तहाँ सोक ओक को विलास नाहिं आनवी॥ जाको है न रूप रेख आँखिन अदेख भेम ताते क्यों विसेष हिये मोह छोह ठानवी। आवा नहि गौन जामैं मौन धारि धारो ताहि पंच भूत भौंन माहिं साधि पौन जानवी ॥२४८॥

आये अलि ऊधो प्रेम पथ को करन मूँधो रूधो निज खास वास तजोगी घरनि को। जासु नाहिं रूप रेख अलख अलेख भेव भजो सोई देव सेव करो कंदरनि को॥ कीजिये उपास न सखी री गुण हीन ही को सासनं सरीर करो आसन धरनि को। जटा की बनाय घटा जोगी कनफटा होय राधा ज्ञान छटा साधो कान मुन्दरिन को ॥२४९॥

जनम को पत्र है हमारे कर प्यारे ऊधो जानैं हम जसुदा के वारे गुन नाम कों। लाखन उपाय दही माखन चुराय प्रात चाखन कै भाजि जात हुते नंद धाम कों॥ सोदर हली के वे दमोदर कहाए इत आठो ज़ाम मान हित पूजैं तिहि दाम कों। अगुन अनामी अज कहो किमि बार बार अहो हो लवार कहा बंचो ब्रज बाम कों ॥२५०॥

त्यागि घर घूँघट पल कपट दूरि करि रही हैं निपट धरि धूरि हँसी लोग की। गद गद गर गुरगान अनहद वर कोकनद पद ध्यान नासै डर रोग की॥ झलाझल झलकैं सुकुंडल अमल जोति होति हिय

भँहा मौज नाँह दुति भोग की। बाँधै कुल लाज को न विघन अराधैं नाम साधैं घनस्याम प्रीति रीति हम जोग की ॥२५१॥

परसैं परसि लोह सोहत भे हेम होय ते न फिरि चुंबक सों जाय लपटावहीं। जाको मन बीन सुरलीन ह्वै प्रवीन भयो सो न सुनि कींगरी की धुनि हरषावहीं॥ सुधासिंधु रागि जासु छुधा तृषा गई भागि सो तो मृगवारि लागि नहीं मुधा धावहीं। स्याम की सँजोगी हम गोरस की भोगी ऊधो कैसे बनि जोगी जोग माँह मन लावहीं ॥२५२॥

मिल्यो आप ह्वै सिन्धु साँवरो सलोनो रूप कीजिये उपाय दाय काढ़े फिरि कढ़ै ना। कहो किन मूढ़ हमैं गूढ़ प्रेम कान्हर सों ह्वै रह्यो अरूढ़ ग्रौर बूढ़ बढ़ै ना॥ बालपन को पढ़ायो सुआ जो पढ़्यो सो पढ़्यो फेरि कोटि करिये तो आन कछू पढ़ै ना। काहे बिनु काम कहो जोग को प्रसंग ऊधो स्याम रंग रँगी तापै ग्रौर रंग चढ़ै ना ॥२५३॥

स्याम के पठाए आए सखा हो सुहाए ऊधो लागे मन तोलन तो आछी बिधि तोलिये। प्रेमधार मैं ठिकान ज्ञान को न हे सुजान लै है कोऊ जसी वारानसी बीच डोलिये॥ जानैं हम कहा भोली बसी हैं वियोग टोली सीखो तुम जोग ऐसी बोली मत बोलिये। होहु जनि दाहक सिखावो जोग चाहक को गाहक के बिना नग नाहक न खोलिये ॥२५४॥

दरद बिदारनि सरद चांदनी को त्यागि करै कौन मंद है पसंद जेठ धूप को। गंग जल तजि कौन मारूथल थकै धाय कौन खाय खरी निज पानि पाय पूप कों॥ सूधो पथ छोड़ि ऊधो भ्रमै कौन कंटक मैं भजै को कलंकी रंक छोड़ि भारी भूप कों। वासर विभावरी हूँ साँवरी सुरति रसी झाँकै कौनि बावरी अधेरे जोग कूप कों ॥२५५॥

साधि के समाधि कोऊ कंदरा अगाधि पैठि बैठि रहो जोगी बनि सीस चढ़ि प्रान है। संजमादि साधन अराधन करत रहो कोऊ गहो

ज्ञान कोऊ तप को विधान है। राचौं गुन गोविंद के साँची कहैं ऊधो तुम्हैं निरगुन ले न कछु हमैं पहिचान है। कोऊ किन ध्यान धरै जोति वा निरंजन की ह्वै रहै हमारे स्याम अंजन समान है ॥२५६॥

गोपी मनरंजन निरंजन बने हैं जाय कुबजा सों नेह लाय नीकी मौनता लई। वैस ही सुहाए सखा आए हो बसीठी तुम मीठी सी बनाय हमैं चीठी जोग की दई ॥ ऊधो हम ध्यान धरैं वेई दृगखंजन को अंजन की स्यामता हमारे दृग तें गई। रैन दिन धार ये अपार बहैं खोरि खोरि कहियो निहोरि अब कोरि कालिन्दी भई ॥२५७॥

रास को विलास मृदु हासि की सुरति जब ऐहै तब मोहन सों क्यों न मन उचाटिहैं। चाँदनी सरद की बढ़ाय है दरद देह सुधि की करद लगे क्यों न उर फाटिहैं ॥ बैठि बनबेली बीच मेली भुज लता स्याम ताहि कंठ हेली कहो सेली किमि ठाटिहैं। धारि जप माला को बिसारि नंदलाला ऊधो बाला मृगछाला ओढ़ि कैसे दिन काटिहैं ॥२५८॥

फाँसी निरबान गुने ज्ञान सुने हाँसी होय स्याम की उपासी सब गोकुल की डावरी। भाखिहैं सुनाम वाको रसना सों आठो जाम राखिहैं हिये के धाम सूरति वा साँवरी ॥ बकिबो वृथा है तव बात को न मानैं हम बिरह की बाय तें रहैंगी बनी बावरी। कुबजैं सुहाग दियो हमकों विराग ऊधो बाजी ताँति जानि गई राग रीति रावरी ॥२५९॥

कलित अमोल गोल ललित कपोल पर कुंडल चलित सोहैं मोहैं मुखचन्द सों। मो मति चकोरी भई भोरी प्रीति थोरी नाहिं ताकी रुचि जाचैं नाहिं राचै छलछंद सों ॥ जुगुति न जामैं जदुपति के मिलन की सो जाउ जरि जोग जग जानो जात फंद सों। ताको हम जानैं खर सूकर समान ऊधो सूधो नहिं नेह जिन कीनो नँद-नंद सों ॥२६०॥

लाग्यो जोग जाप बस राग्यो तप ताप रस रवि सो प्रताप जग जाग्यो जस चंद सों । सिधि की कलाहुँ नव निधि की विभूति पाय विधि की करी है सरि रिधि के अनंद सों ॥ तुलसी न जाकी मति साँवरी सुरति रसी कहा भयो जाय फसी झूठे फरफंद सों । ताहि हम जानें खर सूकर समान ऊधो सूधो नहि नेह जिन कीनो नँदनंद सों ॥२६१॥

को कहै सिधाये मथुरा कों जसुदा के जाये रहत लुभाए प्रति कुंजन के सदन हैं । कौन करै जोग सोग नित ही सँजोग हमें वारैं कवि लोग जापैं कोटिन मदन हैं ॥ हरैं दुख फंद मंद मंद मुसुकानि समें आनंद को कंद चारु चंद सो वदन हैं । धेनु को चरावत बजावत हैं बेनु खरे ऊधो लखि लीजे यह नंद के नँदन हैं ॥२६२॥

दहैं अंग कों पतंग दीप के समीप जाय बारिज बँधाय भृंग दग्द्ध न मानई । सुनि कै विपंची धुनि विसिष सहैं कुरंग सतीपति संग देह दुख कों न आनई ॥ मनीहीन छोन फनी मीन वारि ते विहीन होय के मलीन मति दीनता वितानई । चातक मयूरमन मेह को सनेह ऊधो जाको लगे नेह सोई देह भले न जानई ॥२६३॥

छाई निठुराई है कन्हाई के हिए मैं अब लिखि कै पठाई पाई जोग मई पतियाँ । कैसे धरैं धीर बलबीर के वियोग विषे मोचैं दृग नीर पीर सोचैं दिन रतियाँ ॥ भीँजत छपायो हमैं छोह सों छबीलो छैल कुंजन की गैल ते बुलाय लाए छतियाँ । मेलि गलबाँही कही कदम की छाँही ऊधो भूलै हम पाहीं नाहीं स्याम की सुबतियाँ ॥२६४॥

जा दिन ते कान्ह मधुपुर को पयान कियो हियो कै पषान नाहिं सोच वधू जन की । ता दिन ते देखिये निहारि धीर धारि ऊधो लगी सी दवारि प्रभा भई कुंज बन की ॥ टूक टूक होत दिल कूक सुने कोकिल की लागति अचूक हूक आए सुधि तन की । कबहूँ न

भूलहिं विलोकिनि वे भ्रूम रोर करकैं करेजनि मैं कोर कटाच्छन की ॥२६५॥

जा दिन ते मोहन गये हैं तजि गोहन को ता दिन ते गोकल की गली लगैं आर ह्वै । चहूँ ओर चलत उसास के समीर जोर आई घेरि घेरि सोक लपटैं अपार ह्वै ॥ चिंत चिनगारी भारि झपटैं सही न जाहि पाहि पाहि करैं गोपवधू निराधार ह्वै । जै। न होती नैन नीर धार ये अपार ऊधो जाते। विरहागि बीच ब्रज जरि छार ह्वै ॥२६६॥

साचे सखा स्याम के जनैया उरधाम के हो काहे अभिराम उत रहे हठ तानि कै । ऐहैं गिरधारी कब हारी गिनती कै दिन कहियो हमारी ऊधैा विनती बखानि कै ॥ राधा दृग ते बहाहिं राधा नाम को विलोम बाधा भई चहै फिर गोकुल मैं आनि कै । करिये सहाय आय ना तो बहि जाय घोष एहो ब्रजराय तोष कैसे रहैं ठानि कै ॥२६७॥

जब ते गये हैं मधुसूदन मधुपुरी कों कूदन लग्यो है हिय प्रान अति लोल मे । उठैं ज्वाला जाल ह्याँ मयंक के मयूखन तें दूषन लगें हैं अंग भूषन अलोल मे ॥ कहिये कहाँ लों कथा दुख की अथाह ऊधो कीजै निरवाह अब काह अनबोल मे । कीमति घटी है अति ह्याँ तो फूल मालन की लालन की खोज ते सरोज बहुमोल मे ॥२६८॥

दसा दरसाय ह्याँ की भली भाँति सों बुझाय पाय परों ऊधो कहो जाय प्रानप्रिय तें ! कहाँ गई बतियाँ वे छतियाँ सिरानवारी चीकनी लगैं ही प्यारी मनो सनी घिय तें ॥ दीन्हीं मति दासी रति लीन्ही कठिनाई अति चीन्हीं गई बातें घातें कीन्हीं ब्रज तिय तें । ह्वै है सुख ह्याँ विसाल ऐहै जबहीं गुपाल जैहैं कढ़ि कुबुजा को साल जाल हिय तें ॥२६९॥

ह्वै रही कनैाड़ी मति कौड़ी भई गोपी अति डौंडी फिरी लौंडी की न लाज धारियतु है । बने महाराज आज सुनें है समाज वाद तातैं फिरि-

याद हमहूँ पुकारियतु हैं ॥ दरद हरे हैं तब सरद निसा में स्याम अब क्योंकर दलै करेजा फारियतु है। चाहिए कठोरता न एती बरजोर ऊधो कांकरी के चोरन कटारी मारियतु है ॥२७०॥

दासी वह भूप की सरूप तें प्रकासी किमि कैसी चाल खासी कौनि चातुरी सों भरी है। कौनि सिधि सनी केहि बिधि की बनाई बनी जाकों रिधि निधि धनी भजै घरी घरी है। कहो कौन सजि साज हर्यो मन महाराज लोकलाज तजि जातें ऐसी प्रीति करी है। सोने की सलाका सी सुनी है हम साका ऊधो काम की पताका किधों नाकाधी-स परी है ॥२७१॥

जानी जाति कछू कला बसै वाके कूबर में जाते लला पला पला भरें भली फेरी कों। छल की छटी लै नटी कपटी कन्हैयें भले कपि लों नचावति जाय कै हथेरी कों ॥ नंदन को त्यागि नँदनन्दन सों कहो ऊधो सेवन करत कहा रूँधो वनबेरी कों। रूप गुन खानी राधा नागरी भुलानी अब छाँड़ि कुल कानी पटरानी मानी चेरी कों ॥२७२॥

आवति है हाँसी उपहाँसी कान्ह कथा सुने किंकरी को खासी मनि कीन्ही अवतंस की। फाँसी फसे ताहि की उदासी रहैं ताके बिनु नासी सब लाज महराज जदुवंस की ॥ भोरी मति भई कहा रावरी सिखाओ किन जोरी नहिं बनै सुनो ऊधो बकी हंस की। कहाँ सुखरासी बृजराज संभु हृदैवासी जगत प्रकासी कहो कहाँ दासी कंस की ॥२७३॥

जौं न प्रेम नेम प्रानप्यारे को हमारे साथ कहो बृजनाथ गोपीनाथ क्यों कहावहीं। लाय अंक वंक लखे पंकज से लोचन ते आवै अब संक तो कलंक कहा लावहीं। नन्द के किसोर चीर चोर दधि माखन के लाखन करैंगे तऊ नाम ए न जावहीं। साची प्रीति राची जों जगत गीति माची ऊधो क्यों न कुबजा को अब विरद बुलावहीं ॥२७४॥

कोकिल न मानैं पोस दोस ते भरे हैं काग नाग डसै तिन्है पय पियाय जे उबारे हैं । मालती लता मैं फिरैं भाँवरी भरत भौंर गंधहीन देखि और ठौर कों सिधारे हैं ॥ पूरैं नद नारे भारे जल सों जलद कारे चातक बिचारे बूँद हेत रटि हारे हैं । कारे कारे एक से सँवारे करतार ऊधो एते सब कारे स्याम अंगनि पै वारे हैं ॥ २७५ ॥

नीर बलवीर छविहीन दृग मीन ऊधो कैसे जियैं दीनता के ताप मैं तपाय कै । और ना उपाय जदुराय सों कहोगे जाय चूक को विहाय मम बिनती सुनाय कै ॥ नन्द के दुलारे द्वैक बैन कहैं चैनवारे प्रानन के प्यारे ह्याँ हमारे ढिग आय कै । मुरली को टेरि अधरान धरि हेरि हमैं फेरि एक बेरि जाहिं दरस दिखाइ कै ॥ २७६ ॥

एक तो गँवारी नारी जाति पाँति ते बिहीन लीन दोस कीच मति घोस बीच वास है । बोधन हमारे कछु गोधन को धन रंच सोधन करति फिरैं बन बन घास है ॥ ताहू पर मान करि रूसैं मन मोहन सों छोहन हमारे हरि कीनो रसरास है । आपनी कुचाल को कहाँ ते कहैं हाल ऊधो दीन के दयाल की दया की एक आस है ॥ २७७ ॥

[गोपिकानां परस्परानुकथनम्]

खूब री मची है जग कीरति वा कूबरी की वासी अब गिनी न सुहागिनी अवनि पैं । रंभा उरबसी सची रमा रती पारवती रती है न ऐसी आज सुर की रवनि पैं ॥ जासु गुनग्राम वसु जाम ही सराहैं स्यांम ऐसे नहि राते माते कुँजर-गवनि पैं । दीन के दयाल की अनूठी यह चाल आली खीझत है मान गहे रीझत नवनि पैं ॥ २७८ ॥

गेह न सुहात हमैं मेह से झरैं हैं नैन स्याम के सनेह देह दसा भई दूबरी । वे तो बनवासी ग्वार नन्द के कुमार सखी वा तो कंसदासी बनी खासी महबूब री ॥ वे तो हैं तृभंग और दाको अंग कूबर में मिले

हैं उमंग दोऊ संग बनो खूब री। बड़ी है सयानी वस आनी कोऊ चेटक सों स्याम बने राजा अरु रानी बनी कूबरी ॥ २७९ ॥

चंदन लगाय नँदनन्दन को फंद डारि मंद मुसकाय कछु कीनो श्रौं ठगोरी है। आली प्रीति पाली उन गनी न कुचाली क्यों हूँ वे तो बनमाली वह माली की किसोरी है॥ जैसे कपटी हैं कान्ह तैसी छली वाहू जान हरो हिय हाथ ही में बाँधि प्रीती डोरी है। करी अरधंगी निज कुबजा तृभंगी स्याम वे अहीर दासी वह खासी बनी जोरी है॥ २८० ॥

वे तो अति लोल गात कहूँ साँझ कहूँ प्रात सुमना को छोड़ि जात एऊ तो अनत हैं। वे तो पटपीत काछे इन्हैं पीत पंख आछे पानि पद मिलैं दोऊ एक से गनत हैं॥ वे तो सुखपुंज मुरली की धुनि करैं मंजु एऊ कुँज कुंज निज गुंज कों ठनत हैं। स्याम स्याम एक काम फिरैं सखि सबै ठाँम नाम हूँ दुहूँ को बुध माधव भनत हैं॥ २८१ ॥

कुंडलिका।

मोहै मति सुमना मना करौं बार ही बार।
महा छली है मधुप यह कहा करै इतबार॥
कहा करै इतबार बाहरैं भीतर कारो।
गनै न ठौर कुठौर चपल भरमैं दिसि चारो॥
एरी मेरी बीर लालची यह रस को है।
सुनि या की धुनि मंद माधुरी तें मति मोहै॥ २८२ ॥

कबित्त।

छ्वैहैं नहिं इंदी वर न्हैहैं न कलिन्दी माँहि नाँहि अब सखी स्याम बिंदी हूँ लगायहैं। आनि जनि नीलमनि भूषननि मेरी वीर दूरि करियै री मृगमद को न लायहैं॥ आली का कपाली कौन सुनिहैं रसाली कूक अब तो तमालन के कुँजन मैं न जायहैं। देखिहैं घटा न

क्यों न चढ़ि के अटान वाम स्याम संग वैर अब हम हूँ बढ़ायहैं ॥ २८३ ॥

जासु अंस अंस सनकादि वदैं जदुवंस राजहंस संभु मन मानस थली के हैं । कहैं री कन्हैया जगमति के जनैया अहैं गति के देवैया पति सिंधु की लली के हैं ॥ जोग के लिखैया ज्ञान ध्यान के भनैया दैया वेद के वदैया किमि नाह वृषली के हैं । गैया के चरैया छीर दही के लुटैया वीर चीर के हरैया सही अनुज हली के हैं ॥ २८४॥

वेई ग्वाल बाल वेई गोधन के जाल लखो माय बिलखाय नंदराय भयो चेरो री । वही कालिन्दी को तट वंसीवट छाँह वही वही कुंजलतापुंज वन को बसेरो री ॥ होत न हुलास ही को क्यों हूँ हमैं हेरि बृज नाहिं लगै नीको फीको चंद ज्यों सवेरो री । चाली वारसाली हंसवाली नहिं भूलै छिन आली बनमाली बिन खाली यह खेरो री॥ २८५॥

दई दई करि कै हों दुखी भई हाय दई सुनै नहिं दई यह कैसो निरदई है । मेलि कै सँजोग हमैं केलि को कराय भोग फेरि सोग हेतु या वियोग बेलि बई है ॥ तामरस जासु नैन कोटि मैन प्रभा ऐन आली अभिराम स्याम मनि छीनि लई है । पन्नगी सी परी अधमरी अरी लोटैं हम घरी घरी हरी की विथा ते मति तई है॥ २८६ ॥

लागत है मोहि हरि हरि के समान सखी देखे हरिहूँ की छवि बाढ़ी हरि पीर री । तापैं हरि घरी करी हरि पी की टेर अरी लीन्हो हरि हियो हेरि रह्यो न सरीर री ॥ हरि के सरिस हरि मोती माल बनी बाल रैनि भई काल हाल धारों किमी धीर री । जरी बरी मरी जाति खरी जरी लरी साथ हरी औधि टरी जाति परी बरी भोर री ॥२८७॥

[गोपिकान की विनती प्रभु तें]

फीके परे प्रेम बृज ती के साथ एहो नाथ जानैं हम नीके मति कूबरी ने डहँकी । लीन्हीं सुधि नाहीं अजौं कोर करुना की चितै कितै

रहे बिते दिन गोपी गिन अहँकी। बीतैं पल अलप कलप से तिहारे हीन कीजै किन दीनबंधु यादि कालीदह की। देखि दुख हाल क्यों न होत हो दयाल आप डारो अब लाल काहे ज्वाल मैं बिरह की ॥२८८॥

बीत्यो बहु दिना फिरि मिलो न सँदेस आय चित्त मैं अँदेस पाय आँसू धार ढरकै। कहा करौं दई पीर दई यह मोहिं नई अवधि प्रतीति रही सोऊ लगी खरकै॥ रतियाँ न आवै नीद बतियाँ गुने गुविंद आये सुधि छतियाँ मों बार बार करकै। आवन चहत मन भावन भरोसा एक आज अभिराम मेरी वाम बाहुँ फरकै ॥२८९॥

[कुंडलिका]

एरी छेमकरी कहा महा गगन भरमाय।
करि साँचो निज नाम कौं दै प्रिय मोहिं मिलाय॥
दै प्रिय मोहिं मिलाय सूधी तो सगुन बखानैं।
परै हमारे भाग सत्य तो हमहूँ जानैं॥
बार बार करि प्रेम करौं मैं बिनती तेरी।
ँगी रंग अनुराग कहूँ प्रिय लखे अये री ॥२९०॥

बालक बछा को हरि छाको भ्रम भौंर गिरो डरि पाय धरि भूली सुधि ब्रज की। रची मेघमाल कोपज्वाल तेँ सची के नाँह सरन परो है हेरि फेरि पद रज की॥ वैस ही उबारि क्यों न लेहिँगे विरह वारि कारी है मुरारि ज्यौं गुहारि दीन गज की। पाय परो पथिक तिहारे जाय कहो तुम करिये सहाय बृजराय फेरि बृज की ॥२९१॥

ध्यावौं घनस्याम कौं लगाऔं मति चातकी सी नाम की रटनि तजि और कछु ठानों ना। लोक परलोक कौं बहाऔं प्रेम सिन्धु आज लाज के जहाज कौं बुडाऔं आनि आनों ना॥ गाऔं गुन लाल को रिझाऔं मन दीनदयाल और जगजाल जीव जस कौं बखानों ना।

तू तो भई दासी बृजबासी बलबीरजू की करैँ कोटि हाँसी उपहाँसी तऊ मानैं ना ॥२९२॥

[अभिलाष-पराग कवित्त]

ऊधो वसुधा मैं सुधा लहरी लला की बानी मैन कला वारी कहि प्यारी कब बोलिहैं। मंद मुसुकानि चारु चंदमुख की मरीचि फैलि चित कैरव कपाट कब खोलिहैं॥ लागि रही प्यास बृजजीवन की आस हमैं कबधों विलासजुत रास मैं कलोलिहैं। कुंज बन माहीं कदंबन की छाँही छैल मेलि गलबाँहीं कब मंद मद डोलिहैं ॥२९३॥

गरे गुंज माल धरे खरे ह्वै तमाल तरे लाल कब फूलन की माल पहिरायहैं। ललित लता की सेज पल्लव मई सुनई आपने करनि कब कुंज मैं बिछायहैं॥ धराधर धारी अति प्यारी अधरान धरि कबधों मधुर धुनि बाँसुरी बजायहैं। जसुदा दुलारे प्रानप्यारे नंदवारे कब मिलि कै हमारे सों मधुर सुर गायहैं ॥२९४॥

कल न परति कहूँ ऊधो इन गैयन को कबधौं ललन धौरी धूमरी पुकारिहैं। पूरिहैं श्रवन कब सुधा निज बैनन सों कब वह छबि हम नैननि निहारिहैं॥ बूडिबो चहत बृज राधा दृगधारन ते कबधौं धराधर करज पर धारिहैं। मारिहैं अघासुर बिदारिहैं बका कौं कब बेनु को बजाय कुंज बन मैं बिहारिहैं ॥२९५॥

ऊधो चितचोर नन्द के किसोर भोर समै नैन की मरोर चितै कब जागिहैं। लाखन उपाय प्रिय पूरि अभिलापन को माखन चुराय कब नंदभौन भागिहैं॥ दान की गली में वृषभान की लली पैं पागि माँगि दही दान कब कान्ह अनुरागिहैं। लैहैं हम छीन बीन दीनबन्धु हाथन ते होय कै अधीन कब दीनता सों माँगिहैं ॥२९६॥

जोग को सिखावन गे सीखे प्रेम पावन कौं आँवन की भूली सुधि संग पाय गुरु कौं। पूरि रहे नैन नीर पेषि प्रीति बालन की देखि दसा

दूरि भयो ज्ञान मद उर कौं ॥ भागि कौं सराहि अनुराग बृज बीथिन की पागि रहे रज माहिं त्यागि सुख सुर कौं । ऊधो बनि सूधो सिर नाए तिन गोपिन को धन्य धन्य धन्य कै सिधाए मधुपुर कौं ॥२९७॥

यह अनुराग सुबाग मैं सुखद तृतिय केदार।
विरच्यो दीनदयाल गिरि बनमाली सुविहार ॥२९८॥

[बृजविरहसुगंध कवित्त]

कहत कन्हैया ऊधो मैया है जसोदा कैसे मोहि कौं जिवायो निज जायो जिन्ह जानि कै । बाबा नन्द हैं अनन्द किधौं दुख फंद परे धरे मम ध्यान कंद चातक लौं ठानि कै ॥ कैसे वह गैया बल भैया संग चारी जिन्है पोंछि पट पीत पोंछि झारी निज पानि कै । बरबस कीन्हो बस सरबस दैके कहो तिन गोपिन की दसा कौं बखानि कै ॥२९९॥

[उद्धवकथन कृष्ण प्रति]

नंद जसुदा की कथा सुनिये अथाह प्रभु नैनन तें चल्यो नद को प्रवाह बहि कै । ठहरैं न धीर तरु लहरें उठैं हैं सोच हहरैं हिए में हाय कान्ह कान्ह कहि कै ॥ चाखन न कीन्हो आज माखन मलाई लाल लाई है अवार कौं न ख्याल बीच रहि कै । या विधि प्रलाप के कलाप करें आपस मैं आपके मिलाप आस रहे स्वास गहि कै ॥३००॥

प्रीति बछरान सों न करती हुँकरती हैं त्रन ना पकरती वे आनन सों गैया हैं । कानन हूँ कानन मैं कानन को लाय रहैं कहाँ गये तानन सों बाँसुरी बजैया हैं । ए हो चितचोर नन्द के किसोर कोर बाँधि पेखें पथ ओर खड़ी भोर की समैया हैं । सेत भई स्याम स्याम सेत हे कृपानि केत कीजै वह हेत आप जिय के जनैया हैं ॥३०१॥

नाथ बृज नारि अंग चंदन विषै बिसारि रहीं ध्यान धारि पदपंकज के दल कौं । नींद बिना दिना रैन काहू सो न कहैं बैन एक लखैं नैन लावैं नहिं पल कौं ॥ गेह को सनेह नाहि ह्वै रहीं दसा विदेह दाहै

देह तप मैं न चाहैं अन्नजल कौं। जोगिन की कला उन जीति लई नंदलाल तोलैं मन पला पला जोग लै अचल कौं ॥ ३०२ ॥

[गोपिकान की प्रलाप-दसा]

कोऊ कहैं ग्वाल वाल लिये संग खेलैं लाल कोऊ कहैं बैठि रहे बंसीवट ठाँव री। कोऊ कहैं चीर चोरि चढ़े हैं कदंब जाय कोऊ कहैं एरी अब हरि सों मिलाव री ॥ कोऊ कहैं अघासुर उर कौं विदारि आए कोऊ कहैं केसी मारि आए बृज गाँव री। उधो कहैं सुनौ स्याम वे तो बृज वाम सबै आठो जाँम हिए धाम लखैं छबि रावरी ॥ ३०३ ॥

कोऊ कहैं आज बृजराज को गहूँगी जाय सखा के समाज छोड़ि लाज भरौं भाँवरी। कोऊ कहैं रास मैं नचायहौं मचाय धूम हिये मैं लगायहौं री सूरति वा साँवरी ॥ देखिए कृपाल बृज बालन के जाय हाल रावरे वियोग ते बकैहैं जिमि बावरी। ऊधो कहैं सुनौ स्याम वे तो बृज वाम सबै आठो जाम हिये धाम लखैं छवि रावरी ॥ ३०४ ॥

कोऊ कहैं भले चले जाउ लै मुरारी दही सही बृजनारी तो बँधाओं तुम्है दाँव री। कोऊ कहैं गोह गैन जैहैं बृजराज आज कोऊ कहैं मोहनैं मनाय जाय ल्याव री ॥ कोऊ कहैं मान धरि देखि हैं न हरि ओर कोऊ कहै नंद को किसोर हमैं भाव री। ऊधो कहैं सुनो स्याम वे तो बृज वाम सबै आठो जाम हिये धाम लखैं छवि रावरी ॥ ३०५ ॥

कोऊ कहैं कैसी लसी सोहति चमेली बेली मोहैं महा हेली सजी सरद विभावरी। कोऊ कहैं गए कहाँ कुंज ते प्रभा के पुंज एरी सखी याही समैं हमैं तूँ बताव री ॥ कोऊ कहैं कालीदह कूदे बनमाली जाय कोऊ कहैं आए आली होय जनि बावरी। ऊधो कहैं सुनो स्याम

वे तो बृज वाम सबै आठो जाम हिये धाम लखैं छबि रावरी ॥ ३०६ ॥

वारिधि विरह बढ़ो गोपिन हिये अभंग दुख के तरंग उठैं अंगन हलकि हलकि। रूप हो मसाल सासुन स्यो नाथ साथ विन छिनैं छिन लालसा रही हैं वे ललकि ललकि ॥ लगी टकटकी नैन छकीं प्रेम छाकनि सों जकी सी वियोगी वैन बोलहिँ बलकि बलकि। बूड़ो बृज चाहत मझार नंद के कुमार मीनन तें धुनी धार धावत ढलकि ढलकि ॥ ३०७ ॥

कूजन न पावैं पिक मोर बन बागन में ठौर ठौर गोपीगन कागन कों आदरैं। पथी मधुवन के नृपन के समान बृज मूँदरी करन की विभूखन बनीं गरैं॥ रावरी उपासी भई बावरी कला सी स्याम दच्छिन निदरि बाम बाम की बिनै करैं। आचरज भारी एक सुनिये बिहारी अब वेद की रिचाहू जोतसी के पाँय पैं परैं॥ ३०८ ॥

कहिए कहाँ लौं कथा गोकुल की घनस्याम आठो जाम धाम धाम दावा उतपाति हैं। जाय बृज मंडल के बीच में अषंडल ह्वां मरजी तिहारी मानि रह्यो बहु भाँति हैं॥ धारि अवतार खंजरीटन के ह्वै उदार बरषैं अपार एक धार दिन राति हैं। तऊ चंपकाली जली जाँती बन-माली उत अहो विपरीति भई चाली ए लखाति हैं॥ ३०९ ॥

रावरे बिरह सुनो साँवरे सलोने गात जे जे बृज जात तिन्हें कौतुक मिलत हैं। काकलीन सुनी परैं कुंज की गली के बीच बिंब मुरझाये कुंद कली न खिलत हैं॥ देखिए अचम्भा चलि चंद्रवंस के वनंस हंस हारि रहे कहूँ नेक न हिलत हैं॥ कनक लता पैं कंज सूखि रहे कृपापुंज तापैं खंजरीट बैठि मोती उगलत हैं॥ ३१० ॥

दीन के दयाल बृज बीच अचरज हाल कहिये कहाँ लों नहिं मोपैं कहि आवती। कढ़ै सुकतुंड तें दवानल के वात झुंड सर पर हंसन की श्रेनी न सुहावती॥ चंपक की दाँम सूखि रहीं नेह घनस्याम

कंजन के ठाँम भौंरभीर न लखावती। पंकज के अंक मैं मयंक सोय रह्यो दीन तहाँ मीन तें कलिंद जाकी धार धावती ॥ ३११ ॥

जाकी ओर चितै मंद होति चारु चंपमाल लजैं मृग बाल लखि लोचन विसाल हैं। सीखैं बहु काल तें सम्हरि कला कोरि करि करि हूँ मराल तें न आई वह चाल हैं। कुमुद प्रमुद होत जासु सुख देखि ऊधो संपुट ह्वै जात जलजात प्रातकाल हैं। साधा मम प्रेम को विसारि लोकलाज बाधा मोहि कों अराधा लों निराधा को निहाल हैं ॥ ३१२ ॥

हँसैं कुंद हे मुकुंद लसैं वन बागन मैं करैं चहुँ घाँई कीर कोकिला चवाई हैं। गरब गयंद गहि माते मंद मंद फिरै भयो है दुचंद चंद चौगुनी जुन्हाई हैं॥ मीन मृग खंजन की अवली उमगि रही कंजन की कला कछु औरैं बढ़ि आई हैं। भानुजा के तीर वृषभानुजा बिलोकि अब सबन के मन बीच बजति बधाई हैं ॥ ३१३ ॥

रावरे वियोग सुनो साँवरे कृपा के ऐन राधा नैन तें नदी चली तरंग जोरि कै। दाप करि धाई सोकसिंधु के मिलाप हेतु ऊरध समीर नीर रह्यो झकझोरि कै॥ तृन के समान गुरु जन के सँकोच बहे ढहे हैं निमेख तट लाज तरु तोरि कै। परी भीर भारी गिरधारी कीजिए सहाय वासव लौं चाहति बहायो बृज बोरि कै ॥३१४ ॥

चारि मास बरषत बरषा बिरल जल करत प्रचंड दिन रैनि वे अखंड झरि। छाड़ि कै पलक सींव दिए हैं प्रलै की नींव जीति लिए राधादृग पावस कों होड करि॥ कीजिये बचाव यह दाव चलि गोकुल को नाहिं तो अभाव होय जात बृज प्रात हरि। ह्वैहै पछताव तीर पैहौ नहिं नाव धीर जैहौ बलवीर कौनि भाँति कितैं आपतरि ॥ ३१५ ॥

[राधा तन्मय भाव फल वर्णन]

ऊधो कहैं जैसो वृषभान की लली को हाल सुनिये कृपाल वाकी

ह्वाँ ज्यों वै कटति है। कबहूँ के गाय उठै ख्याल कै तिहारी चाल कबहूँ बजाय बेनु बन मैं अटति है॥ बूझे बिन बकै हम माखन चुरायो नाहिं आली हौ कुचाली तुम झूठी यों नटति है। जाय घनस्याम अब देखिये निकुंज धाम राधा राधा राधा नाम आपनो रटति है॥ ३१६॥

केसरि की खौरि भाल हिए बनमाल वही वैसही अनूप रूप ठाट को ठटति है। ओढ़ि पट पीत लै लकुट कालिंदी के तट रावरे सुभायन सों गायन हटति है॥ प्यारी चलि कुंज कहै सैन मैं बराय बैन खोलै नहिं नैन जब नींद उचटति है। जाय घनस्याम अब देखिये निकुंज धाम राधा राधा राधा नाम आपनो रटति है॥ ३१७॥

आलिन सों बोलै उनमाद भरी घरी घरी अरी हमैं कहाँ तूँ लखावै कंस डर को! लैहौं दधि दान तब जान दैहौं नंद की सौं करति गुमान कहा मोतिन की लर को॥ जानै न हमारी कला ग्वारी गुन गरबीली याही कर ऊपर नचाओं चराचर को। ऐसे बकै राधास्याम रावरी बिरह बाधा साधा रूप रावरो अनूप नटवर को॥ ३१८॥

ह्वै है मग माँहि मैया भई साँझ की समैया आओ बलभैया चलैं गैया घेरि घर को। पंकज की प्रभा छीन भई ह्वै मलीन रहे कोक भेस सोक दीन देखो मधुकर को॥ भूखे सब सखा मेरे सूखे मुख इन केरे दूखे पग फेरे किये बन के डगर को। ऐसे बकै राधा स्याम रावरी बिरह बाधा साधा रूप रावरो अनूप नटवर को॥ ३१९॥

कोऊ ब्रज बामा अरी स्यामा समुझावैं खरी बिकल धरनि परी धीरज न धारती। रती है रती कु जाकी सूरति रती के आगे तिल लों तिलोतमा कों बार बार वारती॥ प्रभुहित देवन की सेवन करहिं ठाढ़ी बाढ़ो प्रीति गाढ़ी कोऊ आरती उतारतीं। तबही पपीहा धुनि सुनि धाम धामन तें धाय धाय गोप वधू धुरवा निहारतीं॥३२०॥

प्रनय पयोधि को सुखायबे को कियो ठाट रंचक न घटो घाट ज्ञान

रूप घट सों। जोग जूथ को सँभारि भिर्यो बृज के मझारि सुधि को बिसारि हारि आयो प्रेम भट सों॥ कहै पुलकाय बैन जाइये कृपा के ऐन रटैं दिन रैन बधू चातकी की रट सों। भले जू धरायो धीर ऊधो बृज बालनि कों लई बलबीर आँसु पोंछ पीतपट सों॥३२१॥

छिनै छिन उठैं सूल हूलति न गोपिन कों पलकैं कलप लौं तिहारे बिन वितहीं। चलि कै गुपाललाल लीजै सुधि बालन की कुंज वे तमालन की कीजै बास तितही॥ आए हरि नैन भरि बैन सुनि ऊधव के गोधन को ध्यान धरि रचे सोच चितहीं। मन बृज साने तन देव काज साथ ठाने जन के बिकाने हाथ गोपीनाथ नितहीं॥३२२॥

यह अनुराग सुबाग को, सुभ चतुर्थ केदार।
बिरच्यो दीनदयाल गिरि, बनमाली सुविहार॥३२३॥

[विनय तड़ाग कवित्त]

कृपा के सुगंध कब प्रगटैंगे दीनबन्धु मुद के मरुत कब आनि परसाँहिगे। तजि के मनाक नाक औानि विषै आक चित चेत चंचरीक चाहि कबधौं लुभाहिंगे॥ समुझि विसाल सुख सादर सो दीनद्याल प्रेम के मराल कौन काल विरमाहिंगे। रावरे सरोज पद कौन रोज स्याम मम हृदय सरोवर में सुन्दर सुहाहिंगे॥३२४॥

कोमल मनोहर मधुर सुर ताल सने नूपुरनि नादनि सों कौन दिन बोलिहैं। नीके मम ही के वृन्द बन्दन सुमोतिन कों गहि कै कृपा की कब चोंचनि सों तोलिहैं॥ नेम धरि छेम सों प्रमुद होय दीनद्याल प्रेम कोकनद बीच कबधौं कलोलिहैं। चरन तिहारे जदुवंस राजहंस कब मेरे मन मानस में मंद मंद डोलिहैं॥३२५॥

तिहूँ ताप तारन की छपिहैं कतार कब छपासी कुमति केहि छन में विनासिहैं। घातक सुधी के उतपातक मदादि कब दुरैंगे निसाचर ए पातक की रासि हैं॥ ध्यान सर बीच प्रेम सारस रसाल रूप दीन-

द्याल कौन काल सुख सों विकासिहैं । तरवा तिहारे रवि प्रात के विभात वारे कबधौं हमारे हिय नभ मैं प्रकासिहैं ॥३२६॥

आपने गुननि गहि बाँधहिँगे नीके कब करि अनुकूल प्रेम झूल हियो ढायहैं । कबधौं सिंगारिहैं अभेद भक्ति भूषन ते नाम की रटनि घंट कबधौं बनायहैं ॥ होय कै कृपाल रूप दीनद्याल ईस कब पावन अंगूठनि कौं सीस पैं छुवायहैं । अंकुस धरन पद रावरे पुनीत दोऊ मो मन मतंग कब सरल चलायहैं ॥३२७॥

मन अइरावत पैं ह्वै विराजमान मम साधन सुरन के सहाय कब आयहैं । करुनानिकेत दीनद्याल हेत मोदमई कबधौं उदारा वह धारा बरसायहैं ॥ होय कै प्रसन्न सुर स्वामी सुनि बिनै मेरी सरधा सची कौं कब संग लै सुहायहैं ॥ बज्रधर रावरे पुनीत पद प्रान प्यारे कबधौं हमारे अर्थ गिरिकौं गिरायहैं ॥३२८॥

दीह दुरवासना दुरासा दुविधादि दलि कबधौ दुरैंगी सब दारिद की रासि हैं । कोरैं करुना की झलकैंगी कब वे विसाल दीनद्याल ही की रुचि कबधौं निवासिहैं ॥ भगति विभौ की अधिकाई कब ह्वै है प्रभु मोह महा तामस को कबधौं विनासिहैं । नखमनि थारी छवि वारी नाथ छन छन मेरे मन मंदिर में कबधौं प्रकासिहैं ॥३२९॥

अंकुस कुसलकारी लखिये मुरारी कब मो चित विकारी गज भारी अनुकूलिहैं । कुलिस की रेख ह्वै विसेष करुना मैं कब पाप अहंकार के पहार निरमूलिहैं । पावन सुपावन की पूरन पताका कब मेरे मन मंदिर के ऊपर ह्वै झूलिहैं । लच्छन सरोज के विलच्छन वे दीनद्याल सुमति धुनी मैं धौं कवन दिन फूलिहैं ॥ ३३० ॥

जेहि पद पावन ते प्रगटी पुनीत गंग आप दाप तैं विलाहिं पाप के कलाप ह्वै । जा पद कौं कामरिपु ध्यावैं वसु जाम हिये जासु गुन ग्राम लहैं नहीं दीनद्याल कै ॥ अति अभिराम गति पाई पति धाम ठाम

पाहन तें मुनि वाम उधरी तुरित छ्वै। सो गुविन्द के पदारविंद मकरंद माहि मो मन मिलिंद कब बसिह अनिंद ह्वै ॥ ३३१ ॥

[कवेर्माधवाधीनता शीतलता कुंडलिका]

तारे तुम वहु पथिन कौं, यह नद धार अपार।
पार करो यहि दीन कौं, पावन खेवनहार ॥
पावन खेवनहार तजो जनि कूर कुबरनैं।
बरनै नहीं सुजान प्रेम लखि लेहु सुबरनैं ॥
बरनै दीनदयाल नाव-गुन हाथ तिहारे।
हारे कौं सब भाँति बनैगी पार उतारे ॥ ३३२ ॥

[अन्योक्ति]

खाये सबरी के फलन प्रभु की कृपा अनूप।
कीन्हो मुनि की नारि जड़ तन को पावन रूप ॥
तन को पावन रूप तपी तउ जन के तारन।
धाए वाहन त्यागि कृपाल जिलाए वारन ॥
लाए वारन खंभ फारि प्रहलाद बचाये।
दीनदयाल बिसाल देह जन हेत लखाये ॥ ३३३ ॥

जेते तुम तारे हरे पति तक तारे भेद।
ते ते तारे न भनहीं गनि गुनि हारे वेद ॥
गनि गुनि हारे वेद बिरद अजहु वह धारे।
लावत नाहि विलम्ब जहाँ जन दीन पुकारे ॥
टेरत दीनदयाल दूरि रखिहो दिन केते।
तिन मैं मोहूँ गहो नाथ खल तारे जेते ॥ ३३४ ॥

हाँसी ह्वैहै पीठि दे जग जानत प्रभु तोहिँ।
जेन केन विधि श्रोजनिधि तारे बनिहै मोहिँ ॥
तारे बनिहै मोहिँ नाथ जस जागि रह्यो है।

या भव पारावार धार हौं जात बह्यो है ॥
टेरत दीनदयाल देव सुनिये अविनासी ॥
प्रनतपाल यह काल रखो न त ह्वैहै हाँसी ॥ ३३५ ॥
तारो अपनी ओर तें नन्दकिशोर कृपाल ।
दीनबन्धु जगसिंध मैं मैं बूड़त यहि काल ॥
मैं बूड़त यहि काल कालहर कोउ न बचैया ।
परी भवँर के जाल जरजरी मेरी नैया ॥
टेरत दीनदयाल दीन पचि पचि मैं हारो ।
हे जन तारनिहार धार तें पार उतारो ॥ ३३६ ॥
छोरे बंधन खलन के मैं उनमैं सरदार ।
आलस कीजै अब नहीं हे हरि मेरी वार ॥
हे हरि मेरी वार काछनी कसि कै काछो ।
फैलि रह्यो जग ईस रावरे को जस आछो ॥
टेरत दीनदयाल दीन बानी कर जोरे ।
उदासीनता त्यागि दीन हित बनिहै छोरे ॥ ३३७॥
बिगरी है बहु जनम तें मोतें हे जगतात ।
तातें यह जग जलधि के भौंर बीच भरमात ॥
भौंर बीच भरमात ठौर सूझत नहिं कोई ।
तजि तव चरन जहाज फिरत जातें दुख होई ॥
टेरत दीनदयाल वादि वय बीती सिगरी ।
सदै सुधारो स्याम मोहिं ते सब बिधि बिगरी ॥३३८॥
ठाढ़े अपने धरम मैं हैं खर सूकर स्वान ।
मैं निज मानुष धरम को भूल्यो अघी अजान ॥
भूल्यो अघी अजान विषय बीथिन मैं धाओं ।
रसना पाय बिसाल न तातें प्रभु गुन गाओं ॥

टेरत दीनदयाल पाहि बूड़त अघ बाढ़े ।
अधम उधारन नाम रहो अपने पैं ठाढ़े ॥ ३३९ ॥
भूल्यो तब उपकार प्रभु मैं अपने अविवेक ।
जरत जाठरानल विषे कीन्यो कौल अनेक ॥
कीन्यो कौल अनेक एक नहिं समझ्यो तामैं ।
विमुप होय विरमाय विषय मैं लियो न नामैं ।
टेरत दीनदयाल फिर्‍यो धन जोबन फूल्यो ।
छमिए वे अपराध व्याध तारन बहु भूल्यो ॥ ३४० ॥
कियो अराधन प्रथम नहिं नारायन यहि काल ।
चाहत निज अभिलाष हौं हा मूढता विसाल ॥
हा मूढ़ता विसाल नाथ पद पोत विसार्‍यो ।
बूड़त है भवसिन्धु फेन सरनागत धार्‍यो ॥
टेरत दीनदयाल न भासत है कछु साधन ।
पाहि पाहि जगदीश छमो नहिं कियो अराधन ॥३४१॥
दाया कीजै मोहि मैं ग्रसित मोह मद मान ।
छमिए मों अपराध को मोहन छमानिधान ॥
मोहन छमानिधान महा मैं क्रोधी कामी ।
कुटिल कलंकी क्रूर कुमति पतितन मैं मानी ॥
चाहत दीनदयाल देव पद सुरतरु छाया ।
सरन राखिए स्याम ताप हरिए करि दाया ॥ ३४२ ॥
हेरो करुना नैन तें कारुनीक गोबिन्द ।
प्रभु पावन मैं पतित हो छमो अवज्ञावृन्द ।
छमो अवज्ञावृन्द स्वामि सेवक के नाते ।
यह सम्बन्ध विचारि देव मैं गाफिल तातें ॥
भाषत दीनदयाल सबै बिधि हौं तव चेरो ।

परयो नाथ पद पास दास आपनो करि हेरो ॥३४३॥
दाया घन के गगन हे तव गुनगन न गनाहिं ।
मति अनुमान मुनीन कौं निगमन माहि जनहिँ ॥
निगमन माहिँ जनाहिं डगत ज्यों जलनिधि जल कन।
बनि बनि बहुरि बिलाय जाय जहँ नहिं बानी मन ॥
दुरगम दीनदयाल देव दारुनि तव माया ।
मोहे सब सुर सिद्ध तऊ सेवक सन दाया ॥ ३४४ ॥
मोसौं करुना ऐन की करुना कही न जाय ।
बूड़त के गज के लिए धाए नाँगे पाय ॥
धाए नाँगे पाय द्रौपदी दीन सुने रट ।
राखी लाज समाज गरीबनेवाज बढ़ै पट ॥
टेरत दीनदयाल दीन गुनि मोहूँ पोसो ।
प्रभु सो कौन कृपाल जगत मैं आरत मों सो ।। ३४५ ॥
सोए कैधों हारि कै स्याम गरीबनेवाज ।
कै करुना काहू हरी के तजि दीन्ही लाज ॥
कै तजि दीन्ही लाज विरद वे अधम उधारन
धारन ग्वारन रखे दोरिगे वारन कारन ॥
टेरत दीनदयाल लखो हग दाया को ये ।
कलि विकार दुख देत कृपा कर कितधों सोये ॥३४६॥
जाचक मति बहु लैन की दातहि दैन न चाय ।
यह विधि कृपिन कथान मैं नाथ न तुम्हैं सुहाय ॥
नाथ न तुम्हैं सुहाय रमापति तुम जगस्वामी ।
अति उदार सुकृपाल धनद आदिक अनुगामी ॥
भाषत दीनदयाल निगम तव गुन के वाचक ।
प्रभु तुम दानी देव दीन मैं हों तव जाचक ॥३४७॥

भारी यह सरे ऐगुनी तजो न नीच विचारि ।
भरिए अब हे स्याम घन अपनी ओर निहारि ॥
अपनी ओर निहारि अहो जगजीवन दाता ।
सेवा बिन अति कृपा करत सबके तुम त्राता ॥
महिमा दीनदयाल कौन कहि सकै तिहारी ।
कीन्ही वार अपार दीन पर दाया भारी ॥३४८॥

करिये सीतल हृदय वन सुमन गयो मुरझाय ।
विनै सुनो हे स्याम घन सोभा सघन सुहाय ॥
सोभा सघन सुहाय कृपा की धारा दीजै ।
नीलकंठ प्रिय पालि सरस जग मैं यस लीजै ॥
वरनै दीनदयाल तृषा द्विज गन की हरिए ।
चपला सहित लखाय मधुर सुर कानन करिये ॥३४९॥

हलधर के हे प्रेमथल वृषभानुजा सुहेत ।
तुम तै प्रगटे देव अज अहो अपूरब खेत ॥
अहो अपूरब खेत बकी विष बीज बिजोयो ।
ता फल महा अलभ्य अमी सें उत्तम भोयो ॥
बीजत दीनदयाल दीन नति कौं बल धर कें ।
कब ह्वैहै घनस्याम सफल हे हित हलधर के ॥३५०॥

कारो जमुना जल सदा चाहत हो घनस्याम ।
विरहत पुंज तमाल के कारे कुंजनि ठाम ॥
कारे कुंजनि ठाम कामरी कारी धारे ।
मोर पखा सिर धरे करे कच कुंचित कारे ॥
टेरत दीनदयाल रँग्यो रँग विषय विकारो ।
स्याम राखिये संग अहै मन मेरो कारो ॥३५१॥

[षट्पदावली कवित्त]

अंकुर सुसंजम के पावैं नहिं होन हिये चरैं लेत विषै मृग सावक कुचाली जू। त्रासै वसु जाम लै न देवतु आराम नाहिं नासत आराम कामगज बलसाली जू॥ मोद कंद मूल सावधान के मतीरनि को खाय खोदि नास करै वासना सृगाली जू। कृपा कुंभ लेके कृस हृदै वाग दीनद्याल पालिए दया नदीस एहो बनमाली जू॥३५२॥

मति फुलवारी मैं रटै है कोप को उलूक फिरैं फुफुकारति कै दुविधा की व्याली जू। वास करो कैसे यह त्रास उपजावति हैं आसा अरु लालसा पिसाचिनि कराली जू॥ कीजै अब लाज नाम अपने की स्यामघन दीजिए बुझाय तिहूँ ताप की दवा जू। कृपा कुंभ लेके कृस हृदै वाग दीनद्याल पालिए दया नदीस एहो बनमाली जू॥३५३॥

आतप प्रचंड मोह महा मारतंडहूँ को पाय ताप रही धीर तोष तरु आली जू। साधन सुमन होन लगे हैं मलीन छीन लागत न ज्ञान फल सांति सुभ डाली जू॥ जाति मुरझानी मम मुदिता लता है चारु चंचरीक चलतन्त्रि डोलैं रस खाली जू। कृपा कुंभ लेके कृस हृदै वाग दीनद्याल पालिए दया नदीस एहो बनमाली जू॥३५४॥

सीतल सुगंध मंद मंद छमा की बयारि विहरै न बीच अब वा बसंत माली जू। गुना वाद रावरे की कोमल मधुर बानी कूजति न मेरी वह कोकिला रसाली जू॥ जीवन मुकुति सुख सुंदर सुधीर कीर विरमै न तीर देखि वाटिका विहाली जू। कृपा कुंभ लेके कृस हृदय वाग दीनद्याल पालिए दया नदीस एहो बनमाली जू॥३५५॥

मंद मुसकानि बूंद चाहति तिहारी प्रभु प्यासी घनस्याम मम सारध की क्याली जू। लीजिए खबरि अब याकी निज जानि वेगि सूखि रही नाथ तब नेह नीर नाली जू॥ सींचि हरी कीजिये बनाय

छोह घटीजंत्र जाते वह मंगल की लसै फूल लाली जू। कृपा कुंभ लैके कुस ह्वै वाग दीनद्याल पालिए दया नदीस एहो बनमाली जू ॥३५६॥

पालिए गुपाल प्रभु मेरे प्रतिपालक हो तिहूँ लोक तिहूँ काल दास प्रीति पाली जू। होयगी बड़ाई सरनागत कै पालन मैं नातर हँसैंगे नर दै कर ताली जू॥ मोहनी मनोज की सरोज मंजु ओज-मई कबधौं लखै हो वह मूरति बिसाली जू। कृपा कुंभ लैके कुस ह्वै वाग दीनद्याल पालिए दया नदास एहो बनमाली जू ॥३५७॥

दोहा।

विनय षट् पदावलि सुखद यह नित होय प्रकास।
करो सुदीन दयाल गिरि वदन वनज मैं वास ॥३५८॥

यह अनुराग सुवाग मैं सुचि पंचम केदार।
विरच्यो दीनदयाल गिरि बनमाली सुविहार॥ ३५९ ॥

सुखद देहली पैं जहाँ वसत विनायक देव।
पश्चिम द्वार उदार है कासी को सुर सेव॥ ३६० ॥

तहँ निवास गनपति कृपा बूझि परयो कवि पंथ।
दीनदयाल गिरीस पद बंदि करयो यह ग्रंथ॥ ३६१ ॥

मनिकरनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकासु।
गति सरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु॥ ३६२ ॥

वसु वसु वसु ससि साल मैं ऋतु वसंत मधु मास।
राम जनम तिथि भौम दिन भयो सुवाग विकास॥३६३॥

सुमन सहित यह वाग है यामै संत वसंत।
सुखदायक सब काल मैं दुजनायक विलसंत॥ ३६४ ॥

जो कहुँ अंग विहीन हूँ होत कबित कृत दोष ।
छमियो सो अपराध मम समरथ कवि तजि रोष ॥२६५॥

रोहिनीप मुख रद मघा हस्त कमल से जासु ।
अनुराधा जाके फिरें श्रवन करो गुन तासु ॥२६६॥

दृष्टांततरंगिणी ।

बैयाँ बैयाँ जहँ तहाँ बिहरत अति आनंद ।
मुख पुनीत नवनीतजुत नौमि सुखद नँदनंद ॥ १ ॥
हरि के सुमिरे दुख सबै लहु दीरघ अघ जाहिँ ।
जैसे केहरि भूरि भय करि मृग दूरि नसाहिँ ॥ २ ॥
नीच बड़न के संग तें पदवी लहत अलोल ।
परे सीप मैं जलदजल मुकुता होत अमोल ॥ ३ ॥
अधम मलीन प्रसंग तें अधमै ही फल होत ।
स्वाति अमृत अहि मुख परे बनि विष होत उदोत ॥ ४ ॥
साधुन को खल संग मैं आदर अंग नसाय ।
तपित लोह संदोह मैं जिमि जल हू जलि जाय ॥ ५ ॥
साधु गये पर घर विषे गुनवर ऊपर कानि ।
अमृतपूर ससि सूर के मंडल गे अति हानि ॥ ६ ॥
मानत हैं बहु दीन कौं आए सरन महान ।
छीन कला ससि सीस मैं धारत ईस सुजान ॥ ७ ॥
श्री को उद्यम तें विना कोऊ पावत नाहि ।
लिए रतन अति जतन सों सुर असुरन दधि माहिँ ॥ ८ ॥
विनै मिलत विद्या मिले सो जो कृत अभिमान ।
कासो कहिए जौं हरै जननी विष दै प्रान ॥ ९ ॥
परे विपति मैं दुष्ट कौं मोचत नाहि प्रवीन ।
बंधन तैं अहि छुटि धरै करै प्रान ते हीन ॥ १० ॥
नीच महत के संग तें पावत पद सुमहान ।
कीट कुसुम के सँग करै सिव सिर ऊपर थान ॥ ११ ॥

सब विधि प्रबल विरोध तें होति निबल की हानि ।
युद्ध क्रुद्धजुत करि करैं दरैं तरुनि की खानि ॥ १२ ॥

साधु न दूषित खलन ते होहिं सुपद आसीन ।
गंग पाक अति काक तें परसित होय न हीन ॥ १३ ॥

पूजत लोग मलीन कौं पावन जन पूजैं न ।
करन ध्रान सुबरन लसैं लेपत कज्जल नैन ॥ १४ ॥

बुध जन क्रूर स्वभाव को नहीं करैं इतबार ।
खाय मधुर ध्रत कर धरैं करैं अगिनि छिन छार ॥ १५ ॥

जो मन होय मलीन सो पर संपदा सहै न ।
होत दुखी चित चोर को चितै चन्द रुचि रैन ॥ १६ ॥

नीच संग ते सुजन की मानि हानि ह्वै जाय ।
लोह कुटिल के संग तें सहै अगिन घन घाय ॥ १७ ॥

नृप मानत हैं रूप करि गुनहीनहु सो अंग ।
गुंजा गुन ते रहितऊ तुलति कनक के संग ॥ १८ ॥

लीजै बर अभिधान है काम धाम अभिराम ।
अघी अजामिल मिल गयो हरि को रटि सुतनाम ॥ १९ ॥

लहत खेद सुख हेत जन कारन जानत नाहिँ ।
भजत कृष्ण कौं सुख सबै अनायास मिलि जाहिँ ॥ २० ॥

गुन तैँ होत प्रधान जग और ऊँच ते नाहिँ ।
हरि हित अति से मालती तथा न सेमल जाहिँ ॥ २१ ॥

नहिँ जोजन सत दूर जो दुहु मन पूरन प्यार ।
कासमीर मलयज मिले करैं विहार लिलार ॥ २२ ॥

गये असज्जन की सभा बुध महिमा नहिँ होय ।
जिमि काकन की मंडली हंस न सोहत कोय ॥ २३ ॥

बड़े बड़न के भार कौं सहैं न अधम गँवार ।
साल तरुन मैं गज बँधै नहि आँकन की डार ॥ २४ ॥
जितै न कोऊ पारखी सो थल नहिँ बुध जोग ।
गुंजा मानिक एक सम करैं जहाँ जड़ लोग ॥ २५ ॥
नहिँ विवेक जेहि देस में तहाँ न जाहु सुजान ।
दच्छ जहाँ के करत हैं करिवर खर सम मान ॥ २६ ॥
मलिन सुता के विमल सुत उपजत नहिँ संदेह ।
होत पंक ते पदुम है पावन परमागेह ॥ २७ ॥
करको मानिक निदरि नर ढूँढ़त दूर भ्रमात ।
गंगतीर निवसै तऊ दूर तीरथनि जात ॥ २८ ॥
वहै विराजत थल जहाँ बुध हैं सहित उमंग ।
लसै हेम जिहि अंग मैं बसै प्रभा तिहि अंग ॥ २९ ॥
अति अद्भुततर वस्तु सो लहत महत आगार ।
रतन अमोलिक सिंधु बिनु मिलै न कोटि प्रकार ॥ ३० ॥
तूठै जाके फल नहीं रूठे बहु भय होय ।
सेव जु ऐसे नृपति कौं अति दुरमति ते लोय ॥ ३१ ॥
नहिं धन धन है परम धन तोषहि कहैं प्रवीन ।
विन संतोष कुबेरऊ दारिद दीन मलीन ॥ ३२ ॥
बसि नीचन के संग नहिँ निज गुन तजैं महान ।
बलित काक करि कोकिला करैं ललित कर गान ॥ ३३ ॥
निज दुख दुखी जु ताहि सो किमि पर पीर हराय ।
नगन संग सोए नहीं सीतवान दुख जाय ॥ ३४ ॥
अरथवान समरथनि सौं अरिहु करैं हित बात ।
निरधन जन तें सुजन जन दुरजन लौं बनि जात ॥ ३५ ॥

करैं न बुध विस्वास को प्रियवादी खल संग।
सुनि बीना की मधुरता मारे जात कुरंग ॥ ३६ ॥

कीजै सत उपकार को खल मानै नहिँ कोय।
कंचन घट पै सींचिए नींब न मीठो होय ॥ ३७ ॥

सुजन आपदन मैं करैं औरन के दुख दूर।
महि गो कनक दिलावहीं ग्रसे राहु ससि सूर ॥ ३८ ॥

निज सदनहुँ नहिँ मानही निरधन जन कौं कोय।
धनी जाय पर घर तऊ सुर सम पूजा होय ॥ ३९ ॥

निज नारी तजि मलिन जन करैं अपर तिय राग।
पीवत सरिता तीर ज्यों घट के जल कौं काग ॥ ४० ॥

साधु न जाँचत कृपिन सों परै विषम जो भीर।
बिन घन काहु न जाँचही चातक प्यासे नीर ॥ ४१ ॥

लघु उपाय करि अरिन कौं निज बस करैं सुजान।
सिसिर मधुर जल सों नदी दारै अचल पखान ॥ ४२ ॥

मृदुवादी खल मीत को बुध न करैं इतबार।
अहि कराल केकी भषै मधुर अलापनि हार ॥ ४३ ॥

है अजीत जौं गुनि करैं निबल सुमति संघात।
बहु तिन लै गुन बटन तैं कुंजर बाँधे जात ॥ ४४ ॥

बहु छुद्रन के मिलन तें हानि बली की नाहिँ।
जूथ जम्बुकन तें नहीं केहरि नासे जाहिँ ॥ ४५ ॥

कलि पूजैं पाखंड कौं जजैं न श्रुति आचार।
मागध नट विट दान दैं तथा न द्विज कर प्यार ॥ ४६ ॥

साधुन की निंदा बिना नहीं नीच बिरमात।
पियत सकल रस काग खल बिनु मल नहीं अघात ॥ ४७ ॥

कलि पाषंडनि के तरलि भए सुजान अजान ।
निंदत हैं हरि भजन करि बंधक करम बखान ॥ ४८ ॥

लोभ लगै जग में सुप्रिय धरम न तैसे होय ।
महिषी पालत छीर हित तथा न कपिला होय ॥ ४९ ॥

कीजै सत उपदेश कों होय सुभाव न आन ।
दारु भार करि तपित जल सीतल होत निदान ॥ ५० ॥

कोप न करैं महान हिय पाय खलन तें दूष ।
लौन सींचि कर पीडिए तऊ मधुर रस ऊष ॥ ५१ ॥

सोहत बुध अपमान नर नहीं नीच सतकार ।
सजैं तुरंगम लात तें नहिं खर पीठि सवार ॥ ५२ ॥

बन में कटु फल खाय ह्वै संतोषिहि सुख भान ।
नहिँ गरवी धनवान को तथा सुखद पकवान ॥ ५३ ॥

जैसे घन गन गगन छन आवत करत पयान ।
तैसे धन जग छनक है विद्या दुरलभ मान ॥ ५४ ॥

पराधीनता दुख महा सुख जग में स्वाधीन ।
सुखी रमत सुक बन विषे कनक पीँजरे दीन ॥ ५५ ॥

तहाँ नहीं कछु भय जहाँ अपनी जाति न पास ।
काठ बिना न कुठार कहुँ तरु को करत विनास ॥ ५६ ॥

अति से सूधे मृदु बने नहीं कुशल जग माहिँ ।
काटत सरल सुतरुन कों त्यों बन कुटिलहि नाहिँ ॥ ५७ ॥

भीर परें जो बड़नि कों वारि सकैं नहिँ नीच ।
गिरि दव घनहीं तें बुझै नहीं घटन तें सींच ॥ ५८ ॥

धनी सुखी नहिँ तोष बिनु तुष्ट निधन सुखवान ।
नृप सुख हित पचि पचि मरैं करैं मुनि मोद महान ॥ ५९ ॥

प्रियवादी प्रियलोक मैं तैसे नहिं कटु बैन ।
पिक प्रिय तथा उलूक सों कोऊ प्रीति करै न ॥६०॥

पाय बहुत सहवास कों पुरुष नहीं प्रिय होय ।
छीन चंद वन्दत सबै पूर न वन्दत कोय ॥६१॥

संग दोष ते संत जन अंत न होहिं मलान ।
जैसे जल मल संग तजि निरमल होत निदान ॥६२॥

राजभ्रष्ट लखि भूप कों त्यागि जाहिं सब दास ।
ज्यों सर सूखो देखि कै हंस न आवत पास ॥६३॥

किए करम विपरीत तऊ तऊ संत सोभंत ।
नील कंठ भे खाय विष शिव छवि लहत अनंत ॥६४॥

नीच करै वर करम सिधि होय न बीसै बीस ।
पिवत अमीरस राहु को दूरि कियो हरि सीस ॥६५॥

जो मन प्रिय सो प्रिय लगै गुन अरु रूप विहीन ।
त्यागि रतन हर जतन सौं पन्नग भूषन कीन ॥६६॥

पर संपति अति सुरति कै खल मति ह्वै जरि छार ।
पय पूरन लखि कुंभ कों करै जूठ मजार ॥६७॥

दोष गहैं गुन नहिं गहैं खल जन रहैं अधीर ।
लगी पयोधरि रुधिर को पियै जोंक नहिँ छीर ।६८॥

जामै बहु श्रम होय तिहि लोग गनै फल वृंद ।
जप तीरथ में दुख लहैं नहीं गहैं गोबिन्द ॥६९॥

लखि दरिद्र कौं दूर तें लोग करैं अपमान ।
जाचक जन ज्यों देखि कै भूसत हैं बहु स्वान ॥७०॥

संकट हूँ मैं होय कै पर दुख हरैं महानु ।
जलद पटल झंपित तऊ जग तम नासत भानु ॥७१॥

काचे घट मैं जल जथा श्रवित होत अति जाय ।
जाचक को कुल शील गुन विद्या तथा घटाय ॥७२॥

निर-बुद्धी धनमान कौं मानत सकल जहान ।
लखि दरिद्र विद्वान कौं जग जन करैं गिलान ॥७३॥

चतुरंगिनी समेटि दल कायर नर भजि जात ।
एक सूर सब सैन कौं रोकि लेत न डरात ॥७४॥

मूढ़ कुमारग मैं चलत सतपथ दूषत वृन्द ।
तथा बहिरमुख नर करैं हरि भगतन की निंद ॥७५॥

लखि भूषित गज पथ विषे भूकत स्वान अजान ।
तैसे खल जन जरत हैं महिमा देखि महान ॥७६॥

दुख मैं आरत अधम जन पाप करैं डर डारि ।
बलि दैं भूतन मारि पसु अरचैं नहीं मुरारि ॥७७॥

सुरहूँ निरवल कौं हनैं नहिँ एकै नर जान ।
सिंह बाघ वृक छोड़ि कै लेत छाग बलिदान ॥७८॥

जो हरि सरन गहै तिसै जाहिँ विषय दुख त्यागि ।
गंग मध्य मातंग जो दहै न ताहि दवागि ॥७९॥

होत संपदा बडनि कौं विपदा होति अनेक ।
बढ़ै घटै द्विजराज नभ नहिँ तारा गन एक ॥८०॥

सुकृत साधु मैं बढ़त है नीच बीच लै होय ।
पसरत जल मैं तेल ज्यों छार माह छय होय ॥८१॥

कुलहि प्रकासै एक सुत नहिँ अनेक सुत निन्द ।
चन्द एक सब तम हरै नहिँ उड़गन के वृन्द ॥८२॥

नीच न सोहत मंच पर महिं मैं सोहत धीर ।
काक न सोह पताक पै सजै हंस सर तीर ॥८३॥

जे समरथ हैं लोक मैं तिनकी मति विपरीति ।
तजि कै शिव कैलास कों करत मसान सुप्रीति ॥८४॥

साधुनहूँ को होय दुख संग गहे अति खोट ।
घटी पात्र जल को हरै परै घड़ी पर चोट ॥८५॥

मूरख खल को साधु जन उपदेसत न विचारि ।
कपि को दीन्हीं सीख खग कीन्यो गेह उजारि ॥८६॥

गहैं दीन गुन हीन प्रभु नहि गरवी गुनपूर ।
छोड़ि केतकी कुसुम को हर सिर धेर धतूर ॥८७॥

बाँधेहूँ पालन करै अंकुस[illegible] को नाग ।
फिरत स्वान स्वाधीन निज भरै न उदर अभाग ॥८८॥

केहरि को अभिषेक कब कीन्हों विप्रसमाज ।
निज भुजबल के तेज तैं विपिन भयो मृगराज ॥८९॥

भाग्यहीन निज दोष तैं दूखैं सबै अथाह ।
वदन वक्र अपनो कहा दोष मुकुर को काह ॥९०॥

प्रिय अप्रिय जानैं नहीं जे समरथ हैं लोक ।
शंभु जरायो काम कों नहीं जरायो सोक ॥९१॥

कृपन धनी नहिँ जाँचिए वरु निरधन दातार ।
तजि कै कुसुमति आक अलि करै कमल कुस प्यार ॥९२॥

लखियत टेढ़ी लोक मैं समरथ हूँ की हाल ।
ओढ़त केहरि खाल हर तजि कै साल दुसाल ॥९३॥

सजै न बिन अंजन बधू भूषन भरी प्रवीन ।
तैसेई नव धरम हैं एक दया करि हीन ॥९४॥

क्रोधहुँ मैं अप्रिय वचन कहैं न बुध गुन ऐन ।
ह्वै प्रसन्न मन नीच जन भाषत हैं कटु बैन ॥९५॥

नहिं धन धन है बुध कहैं विद्या वित्त अनूप ।
चोरि सकै नहिँ चोरऊ छोरि सकै नहिँ भूप ॥९६॥

नहीं रूप कछु रूप है विद्या रूप निधान ।
अधिक पूजियत रूप ते बिना रूप विद्वान ॥९७॥

करैं सुजन सतकार पर परे व्यथा के बंध ।
दहत देत सब को अगर अपनो सहज सुगंध ॥९८॥

छीर होत तृन खाय कै पय ते विष ह्वै जाय ।
यहि विधि धेनु भुजंग रद पात्र कुपात्र लखाय ॥९९॥

सुखी होहिँ नहिँ जाति निज लखि खल महा अबोध ।
स्वान अपर को देखि कै करैं परस्पर क्रोध ॥१००॥

मलन काज मैं खलन की मति अति होति अनूप ।
ज्यों उलूक तम मैं लखै प्रगट चराचर रूप ॥१०१॥

खल जन को विद्या मिलै दिन दिन बढ़ै गुमान ।
बढ़ै गरल बहु भुजग कों जथा किये पयपान ॥१०२॥

खल जन रहैं कुसंग मैं करि उमंग सो बास ।
ज्यों वायस मलकुंड मैं करि करि रमै हुलास ॥१०३॥

खल हैं अधिक भुजंग तें क्रूर कहैं यह नीति ।
नाग मन्त्र ते होय बस खल नहिँ काहू रीति ॥१०४॥

बुध जन सों खल गुन गहैं गुरु कहि साधैं काम ।
पीछे प्रीति न पालहीं ज्यों विभिचारी वाम ॥१०५॥

चंचल खल की प्रीति कों गए अलप बुध गाय ।
ज्यों घन छाया गगन की छन मैं जाय नसाय ॥१०६॥

सरल सरल तैँ होय हित नहीं सरल अरु बंक ।
ज्यों सर सूधहि कुटिल धन डारै दूर निसंक ॥१०७॥

प्रीति सीखिबो चाहिए छीर नीर के पास ।
वह दै कीमति मधुर छवि वह संग सहै हुतास ॥१०८॥

प्रीति सुखद है सजन की दिन दिन होय विशेष ।
कबहूँ मेटे ना मिटै ज्यों पाहन की रेख ॥१०९॥

नेह सारषी रज्जु नहीं कवि वर करैं विचार ।
वारिज बँध्यो मिलिंद लखि दारु विदारनिहार ॥११०॥

पीछे निन्दा जो करैं अरु मुख पैं सनमान ।
तजिए ऐसे मीत को जैसे ठग-पकवान ॥१११॥

गुनी रसाल रसाल से नमै सुमन फल पाय ।
नीरस तरु से नीच नर नवैं न कोटि उपाय ॥११२॥

उत्तम थल सेवैं सजन नीच नीच के वंस ।
सेवत गीध मसान कों मानसरोवर हंस ॥ ११३ ॥

बिन पुरुषारथ जो बकैं ताको कहा प्रमान ।
करनी जम्बुक जून ज्यों गरजन सिंह समान ॥ ११४ ॥

बानी कटु सुनि सठन की धीर न होंहि मलान ।
कहा हानि मृगराज की भूँसत जौं लखि स्वान ॥ ११५ ॥

बुध के मृदु उपदेश कों खल त्यागैं ततकाल ।
तुरित बिनासै तोरि कपि जथा सुमन की माल ॥ ११६ ॥

सजैं नहीं खल कलह मैं कवि के वचन प्रमान ।
शूकर की किलकार मैं क्या कोकिल कल गान ॥ ११७ ॥

लंबी साढ़ी मूढ़ रचि करत सुधी सम गौन ।
फिरत काक कोकिल बन्यो जब लगि धारैं मौन ॥ ११८ ॥

नहीं पढ़ायो पुत्र कों सो पितु बड़ो अभाग ।
सोहत सुत सो बुध सभा ज्यों हंसन मैं काग ॥ ११९ ॥

विद्या बिनु सोहै नहीं छवि जोवन कुल मूल ।
रहित सुगंध सजै न बन जैसे सेमल फूल ॥ १२० ॥
साधु सभा बिनु बुध वचन सठन बीच न लसंत ।
जैसे कोकिल काकली सजै न बिना बसंत ॥ १२१ ॥
पुलकित होहिँ प्रवीन सुनि बुधबानी न अजान ।
ससि मयूष तें चंद्रमनि द्रवैं न कठिन पषान ॥ १२२ ॥
जड़ के निकट प्रवीन की नहीं चलै कछु आह ।
चतुराई ढिग अंध के करै चितेरो काह ॥ १२३ ॥
सील सुमति सरधा बिना बुध सँग सठ सुधरैं न ।
होहिँ न सुजन पिसाच गन शिवहि सेइ दिन रैन ॥ १२४ ॥
संग पाय कै बुधन के छिद्र निहारैं नीच ।
बिलहिँ विलोकै भुजग ज्यौं रंगभवन के बीच ॥ १२५ ॥
जासे खल महिमा लहैं तासु करैं हठि हानि ।
लै सुगंध तोरैं तरुन जैसे मारुत बानि ॥ १२६ ॥
बुध तें छली मलान की कला चला न चलाय ।
जैसे उदै दिनेस के जीगन जोति नसाय ॥ १२७ ॥
तासों नहिँ कछु होत जो बकैं वृथा बहु बार ।
पूरन जल बरसे नहीं ज्यौं घन गरजनहार ॥ १२८ ॥
बिन धन बुध अधकैं सजैं नहीं कृपन धनवान ।
सहजहिं सोहत केसरी नहिं भूषन जुत स्वान ॥ १२९ ॥
तजि मुकता भूखन रचैं गुंजन के बसु जाम ।
कहा करै गुन जौहरी बसि भीलन के ग्राम ॥ १३० ॥
पराधीन सुख अलप है अरु मूरख वैराग ।
छनक छाय घन की छजै जैसे थिरता काग ॥ १३१ ॥

कहा धरम उपदेश है मूढ़न के सामीप ।
वृथा कथा है बुधन की जथा अंध कर दीप ॥ १३२ ॥

गुन प्रभुता पदवी जहाँ तहाँ बनै सब कार ।
मिलै न कछु फल आँक तें बजे नाम मंदार ॥ १३३ ॥

आये औगन एक के गुन सब जाय नसाय ।
जथा खार जलरासि को नहिं कोऊ जल खाय ॥ १३४ ॥

एक प्रबल गुन होन ते औगुन सबै नसाय ।
कारी कृमि भखि कोकिला सुर करि गाई जाय ॥ १३५ ॥

जनम एक ही कुल विषे करम जाय बिलगाय ।
एक लता तें तूमरी तागति ह्वै बहु भाय ॥ १३६ ॥

जाकों प्रभुता सों बड़ो नहिँ वर कुल अवतार ।
कुंभ कूप कों नहिं पियो कुंभज सिन्धु अपार ॥ १३७ ॥

जाहि पराक्रम सो बड़ो लघु दीरघ न निहार ।
अंकुस दीपक कुलिस कित कित गज तिमिर पहार ॥ १३८ ॥

काज सरैं हित खोज तें लघु दीरघ पैं नाहिँ ।
विरचै मधु मधुमच्छिका बनै न विहँगन पाहिँ ॥ १३९ ॥

साधु रहैं नहिं सकल थल कवि जन कहैं बखानि ।
बन बन चन्दन होहिँ नहिँ गिरि गिरि मानिक खानि ॥१४०॥

रचैं सठहिं बुध आप सम बैन सुनाय अनूप ।
जैसे भृंगी कीट कों करत सनै निज रूप ॥१४१॥

सठ सुधरैं सतसंग तें गये बहुत बुध भाषि।
जैसे मलै प्रसंग तें चंदन होहिं कुसाखि ॥१४२॥

दूर बसत सत पुरुष गुन धारैं दूत सुभाव ।
जाय केतकी गंध ज्यों अलिन घेरि लै आव ॥१४३॥

जैसे धूम प्रभाव तें गगन होत न मलीन ।
तथा कुसंगति पाय कै मलिन होहिं न प्रवीन ॥१४४॥
मिलि बुध जगत विकार कों मन मैं नाहिं गहात ।
रहत अलोपित तोय ते जैसे पंकज पात ॥१४५॥
हित करि अपनो जानि बुध वचन ताड़ना देत ।
जैसे माली सुमन को बेधत गुन के हेत ॥१४६॥
जैसे एकै ठूँठ तरु जारि करै बन छारि ।
तैसे एक कपूत तें नासत सब परिवार ॥१४७॥
माँगतही मैं बड़न की लघुता होत अनूप ।
बलिमष जाचत ही धरे श्रीपतिहूँ लघु रूप ॥१४८॥
भाग्य फलत हैं सकल थल नहिं विद्या बलबाँह ।
पाये श्री अरु गरल को हरि हर नीरधि माँह ॥१४९॥
विस्वासी के ठगन में नहीं निपुनता होय ।
कहा सूरता तासु हनि रह्यो गोद जो सोय ॥१५०॥
करम करै कोऊ अशुभ लगै संग बसि काहु ।
जथा चोर संबन्ध ते बंध होत है साहु ॥१५१॥
कहा बड़ो थल करम फल काहू ते न घटात ।
निसि वासर हरि गर तऊ भखै वासुकी बात ॥१५२॥
बुरे भले पर हैं न कछु औसर सबै प्रमान ।
चना लगै प्रिय भूख मैं नहिं पीछे पकवान ॥१५३॥
इक बाहर इक भीतरैं इक मृद दुहु दिसि पूर ।
सोहत नर जग त्रिविधि ज्यों बेर बदाम अँगूर ॥१५४॥
जुवा अवधि मैं सुधिनहूँ ह्वै आवत अभिमान ।
जैसे सरिता विमल जल बाढ़त होत मलान ॥१५५॥

अंधनगृही रुजग्रसित अति दुखित जगत मैं दोय ।
जैसे सूकत सलिल के विकल मीन गति होय ॥१५६॥

लखियत कोऊ वस्तु जग बिना चाह मिलि जाय ।
अचरज गति विधि की जथा काकतालिका न्याय ॥१५७॥

निखल जुगल मिलाप करि काज कठिन बनि जाय ।
अंध कंध पर बैठि करि पंगु जथा फल खाय ॥१५८॥

प्रथम काज कीन्यो नहीँ काल गयो सुविहाय ।
बहुरि बड़ो श्रम खाय ज्यौं वट अंकुर की न्याय॥१५९॥

तरे और कौं तारही लौकालोहू न्याय ।
नौका ज्यौं पाखान ज्यौं बूडे देत बुडाय ॥१६०॥

दारिद सुरतरु ताप ससि हरै सुरसरी पाप ।
साधु समागम तिहु हरे पाप दीनता ताप ॥१६१॥

भाषत धीर सरीर को नहीं छनक इतबार ।
ज्यौं तरु सरिता तीर को गिरत न लागै बार ॥१६२॥

सन बंधन को संग है जग मैँ छनक विचारि ।
मिलैँ कूप पर आनि ज्यौं घर घर तें पनिहारि ॥१६३॥

अवसि तोहिं तजि जाहिँगे संबंधी सब संग ।
जैसे रैन बिताय तरु तजि उड़ि जात बिहंग ॥१६४॥

चलिबो है चैतै न जग भूल्यो देखि समाज ।
जैसे पथिक सराय परि रचै स्वपन के राज ॥१६५॥

सार न कछु संसार लखि लाली रह्यो भुलाय ।
जैसे सेमल सेइ सुक पीछे तें पछताय ॥॥१६६॥

नहिँ विद्या जस शील गुन गह्यो न साधु समीप ।
जनम गयो योंही वृथा ज्यौं सूने घर दीप ॥१६७॥

हरि करुना बिन जगत मैं पूरी परै न आस ।
मृग सरिता पय पान करि गई कौन की प्यास ॥१६८॥

चहै मोद नवनीत जग हरि सो हेत बिसारि ।
मथै वारि ज्यौं डारि दधि अंध ग्वारि श्रम धारि ॥१६९॥

अहो अपूरब देखिये जग दंभिन के काम ।
बेचनहारे बेर के देत दिखाय बदाम ॥१७०॥

काज कियो नहिँ समय पर पछताने फिर काह ।
सूखी सरिता सेत ज्यौं जोवन बिते विवाह ॥१७१

झषै कहा अब ह्वै सखे भयो सिथिल या देह ।
कूप खोदिबो है वृथा लग्यो जरन जब गेह ॥१७२॥

होत वृथा हरि भजन बिन जनम जगत के माहिँ ।
जथा विपिन मैं मालती फूलि फूलि झरि जाहिँ ॥१७३॥

परे कालमुख नर करैँ भोग विषै सुख चाव ।
ज्यौं दादुर अहिदसन दबि करत मसन पर घाव ॥१७४॥

जय दुख कोँ दारुन करैँ साधु कुलहि सत संग ।
पाय जड़ी बल नकुल ज्यौं नासै भीम भुजंग ॥१७५॥

मृदुवादी बुध जन लसत बसत बुधन के संग ।
सारंगी हित साज ते जैसे सजै मृदंग ॥१७६॥

लहि कै बल बलबीर को निबल बली संसार ।
ज्यौं चकोर बल चन्द के चाभत निचै अँगार ॥१७७॥

कोटि विघन दुख मैं सुजन तजैँ न हरि को नाम ।
जैसे सती हुतास को गिनै आपनो धाम ॥१७८॥

करत भगति हरि की मिलै गति जौं चाहै नाहिँ ।
ज्यौं अनिच्छ तरु तैँ परै चुत पद महि के माहिँ ॥१७९॥

वचन तजैं नहिँ सतपुरुष तजै प्रान वरु देस ।
प्रान पुत्र दुहुँ परिहरयो वचन हेत अवधेस ॥१८०॥
जनम लियो हरि भजन कोँ दियो विषै मैं खोय ।
गयो लैन पायो न गज आयो पंगुल होय ॥१८१॥
हिय मैं हरि हेरयो नहीं हेरत फिरयो जहान ।
ज्योँ निज मैं मृग भूलि मद खोजत गहन अजान ॥१८२॥
चिद हरि ते लीला करै जग जड़ को संदोह ।
ज्योँ चुंबक परताप ते करत क्रिया जड़ लोह ॥१८३॥
चिदानन्द की सकति तैँ मन इंद्रिन को भोग ।
होत जथा रवि के उदै क्रिया करैँ सब लोग ॥१८४॥
प्रभु प्रेरक सब जगत को नट नागर गोविन्द ।
ज्योँ नट पट के ओट ह्वै नटी नचावत वृंद ॥१८५॥
एकै सबही मैं बस्यो वासुदेव करि वास ।
ज्योँ घट मठ भीतर बहिर पूरयो एक अकास ॥१८६॥
प्रभु पूरन मति शुद्ध बिनु सब मैं ह्वै न प्रकास ।
विमल बिना प्रतिबिंब को जैसे होय न भास ॥१८७॥
पूरन हरि ही मैं जगत भयो कहत यों वेद ।
कलपित भूषन कनक के ज्योँ हैं कनक अभेद ॥१८८॥
तैा लगि भासत सत्य जग जथा सीप मैं रूप ।
जैा लगि हरि जान्यो नहीं जगदाधार अनूप ॥१८९॥
लब्ध आपनो रूप है लहि अबोध न लखात ।
जैसे भूषन कंठ को भूलि रह्यो बिनु ज्ञात ॥१९०॥
आतम तैसो होत है जैसो जैसो संग ।
जैसे बरन विकार ते फटिक बनै बहु रंग ॥१९१॥

रजत सीप मैं रज्जु भुजग जथा सुपन धन धाम ।
तथा वृथा भ्रम रूप जग साँच चिदातम राम ॥१९२॥
सुपन रूप संसार है मोह नींद के माहिँ ।
बोध रूप जागे बिना ताके दुख नहिँ जाहिँ ॥१९३॥
सुख दुख हैं मन के धरम नहीं आतमा माहिँ ।
ज्यौं सुषुपति मैं द्वन्द दुख मन बिन भासै नाहिं ॥१९४॥
साधन बर है मुकुति को ज्ञान कहै मुनि वाक ।
जैसे पावक के बिना सिद्ध होत नहिँ पाक ॥१९५॥
बारम्बार बिचार तें उपजै ज्ञान प्रकास ।
ज्यौं अरनी संघरन तें प्रगटै गुपुत हुतास ॥१९६॥
जाको भयो प्रबोध सो लख्यो स्वरूपानन्द ।
गिरातीत सुख क्यों कहै खाय मूक ज्यों कंद ॥१९७॥
लखि स्वरूप बुध जगत मैं रमैं विलच्छन रीत ।
मिलत न पूरबवत जथा छीर माँहि नवनीत ॥१९८॥
जानै वृथा सुबुधन कौं बाधे नहीं प्रपंच ।
जैसे प्रतिमा केसरी करै चपेट न रंच ॥१९९॥
हिये सुमिरि गोविन्द कौं नास होय सब सोग ।
जथा रसायन ते नसै सनै सनै ही रोग ॥२००॥
सबै काम सुधरैं जबै करैं कृपा श्रीराम ।
जैसे कृषी किसान की उपजावे घन स्याम ॥२०१॥
जैसे जल लै बाग कौं सिंचत मालाकार ।
तैसे निज जन को सदा पालत नन्दकुमार ॥२०२॥
यह दृष्टांत-तरंगिनी गिनी गुनी सुखदानि ।
विरची दीनदयाल गिरि सुमिरि सुपंकजपानि ॥२०३॥

उठे तरंग उमंग सों दोहा दो सत दोय ।
यामैं जो मज्जन करै विमल होय मति धोय ॥२०४॥
पानि किये जल अरथ के मेटै जड़ता ताप ।
ज्यौं जदुनन्दन जाप ते होय पलायन पाप ॥२०५॥
निधि मुनि वसु ससि साल मैं आसुन मास प्रकास ।
प्रतिपद मंगल दिवस को कीन्यो ग्रंथ विकास ॥२०६॥

अन्योक्तिमाला ।

(छंद कुंडलिया)

बंदौं मंगलमय विमल ब्रज सेवक सुख दैन ।
जो करिवर मुख मूक ही गिरा नचाव सुखैन ॥
गिरा नचाव सुखैन सिद्धिदायक सब लायक ।
पसुपति प्रियहि प्रबोध करन निरजर गननायक ॥
बरनै दीनदयाल दरसि पद द्वन्द अनंदौं ।
लंबोदर मुदकंद देव दामोदर बन्दौं ॥१॥

तारे तुम बहु पथिन कों यह नद धार अपार ।
पार करो यह दीन कों पावन खेवनिहार ॥
पावन खेवनिहार तजो जनि क्रूर कुबरनै ।
बरनै नहीं सुजान प्रेम लखि लेहु सुबरनै ॥
बरनै दीनदयाल नावगुन हाथ तिहारे ।
हारे कों सब भाँति सुवनि है पार उतारे ॥२॥

अथ रसाल-अन्योक्तियाँ ।

ये हो धीर रसाल अति सोहत हो सिरमौर ।
साखा बरनै रावरी द्विजवर ठौरैं ठौर ॥
द्विजवर ठौरैं ठौर सुफल रावरोहि चाहैं ।
निकसे जो तव बात सुमन सो सुधी सराहैं ॥
बरनै दीनदयाल धन्य वहि धात्री के हो ।
जातें प्रगटै आय आप उपकारी ये हो ॥३॥

जेतो फल तें नमत हो ये हो धीर रसाल ।
तेतो ऊँचे होत हो सोभा होति बिसाल ॥
सोभा होति बिसाल बात तव है सुखदायक ।
रस तें करत निहारु तुम्हैं सेवैं द्विजनायक ॥
बरनै दीनयाल हिये हारि सोहित केतो ।
धरे स्याम छबि रहैं नमित रस देखे जेतो ॥४॥

पाई तुम मृदुताई भई कठिनई दूरि ।
गई स्यामता संग तजि छई लालिमा भूरि ॥
छई लालिमा भूरि पूरि आई मधुराई ।
सोभा बसी बिसाल नसी वह खोटि खटाई ॥
बरनैं दीनदयाल सुगंध कला छिति छाई ॥
जीवनमुक्त रसाल भये सुचि संगति पाई ॥५॥

ये हो सुमन समै सखे रखे रह्यो पिक डाल ।
आप बिसाल रसाल हो येऊ बैन रसाल ॥
येऊ बैन रसाल चंप सुर साज सजैंगे ।
जाको देखि समाज सबै द्विजराज लजैंगे ॥
बरनै दीनदयाल महा महिमा महि लेहो ।
पै यह काग अभाग दाग गुनि तजिये ये हो ॥६॥

जानैं नहि तव माधुरी मंद मरंद सुगंध ।
हे रसाल अज क्रूर कपि कोल क्रमेलक अंध ॥
कोल क्रमेलक अंध फूल फल मूल बिनासक ।
साख बिदारनिहार दुखद दुति ग्रासक त्रासक ॥
पकै दीनदयाल रसज्ञ सिलीमुख मानैं ।
महा मीत महि मांहु प्रीति महिमा तव जानैं ॥७॥

अथ सुमन-अन्योक्तियां ।

सोहै नहिँ सज सुमन तव अज ढिग नखरो ताज ।
कौन आदरे बलि बिना अलि सुरसिक सिरताज ॥
अलि सुरसिक सिरताज भाँवरी भरै भाव सों ।
रस पराग अनुराग तासु चित लाग चाव सों ॥
बरनै दीनदयाल खोलि दृग तेहि किन जोहै ।
तव गुन को रिझवार एक यह सारँग सोहै ॥८॥

प्यारे करै गुमान जनि सुनि प्रसून सिख मोरि ।
तो समान यहि बाग मैं फूल झरैहैं कोरि ॥
फूल झरैहैं कोरि बहोरि किते बिनसै हैं ।
या बहारि दिन चारि गये फिर ग्रीषम ऐहैं ॥
बरनैं दीनदयाल न करि सारंगहि न्यारे ।
तो गुन जाननिहार बड़े हितकारक प्यारे ॥९॥

अथ मधुकर-अन्योक्तियां ।

देखत ना ग्रीषम विषम यहि गुलाब की ओरि ।
सुनो अली यहि नहिँ भली ह्वैहै कली बहोरि ॥
ह्वैहै कली बहोरि तबै तुम पायन परिहो ।
चायन कों करि काह बकायन मैं सिर मरिहो ॥
बरनै दीनदयाल रहो हो पीतम पेखत ।
यहै मीत की रीत एक से सुख दुख देखत ॥१०॥

सोई बिपिन बिलोकिए हे मधुकर यहि बेरि ।
हा छबि दही निदाघ अब रही राख की ढेरि ॥
रही राख की ढेरि जहाँ देखी वह सोभा ।
लता सुमनमय पेषि सुमन तेरो जहं लोभा ॥

बरनैं दीनदयाल अहो दैवी गति गोई ।
वहै भँवर तूं भूलि भवै न बिपिन यह सोई ॥११॥

भौंरे भूलि न वे भरम लखि इक सोभन भेस ।
कढ़ि गो सौरभ सुमन तें रही लालिमा सेस ॥
रही लालिमा सेस कहूं मकरंद न यामैं ।
पौन पराग उड़ाय गयो कहि मोहत कामैं ॥
बरनैं दीनदयाल सांझ ढिग आई बौरे ।
चले बिहंग बसेर कहा अब भूले भौंरे ॥१२॥

बौरे लखि लै लालिमा हे भौंरे मति भूल ।
हैं छलमय पल के असद ए कागद के फूल ॥
ए कागद के फूल सुगंध मरंद न यामैं ।
मृदु माधुरी पराग नहीं अनुरागत कामैं ॥
बरनै दीनदयाल चेत चित मैं यहि ठौरे ।
लटि जैहै यहि बाग छटा छन की है बौरे ॥१३॥

भौंरा अंत बसंत को है गुलाब यहि रागि ।
फिरि मिलाप अति कठिन है या बन लगे दवागि ॥
या बन लगे दवागि नहीं यह फूल लहैगो ।
ठौरहि ठौर भ्रमात बडो दुख तात सहैगो ॥
बरनै दीनदयाल किते दिन फिरिहै दौरा ॥
पछितैहै कर दये गए रितु पीछे भौंरा ॥१४॥

लै पल एक सुगंध अलि अपनो मानि न भूल ।
लैहै साँझ सवेर मैं वह माली यह फूल ॥
वह माली यह फूल किते दिन लौटत आयो ।
फूले फूले लेत कली सब सोर मचायो ॥

बरनै दीनदयाल लाल लखि फँसै न है छल ।
लगी बाग मैं आगि भागि रे गंधहि लै पल ॥१५॥
सेमर मैं भरमैं कहा ह्याँ अलि कछू न बास ।
कमल मालती माधवी सेइ न पूरी आस ॥
सेइ न पूरी आस बास बन खोजत हारो ।
सुरसरि वारि बिहाय स्वाद चाहै जल खारो ॥
बरनै दीनदयाल कहा षट-पद ये करमैं ।
हैं पद-पसु ते ड्योढ रमै ताते सेमर मैं ॥१६॥

अथ समान वृक्ष-अन्योक्तियां ।

पाई तुम प्रभुता भली चहुँ दिसि अलि गुंजार ।
हे तरु तटिनी तीर के करि लै कछु उपकार ॥
करि लै कछु उपकार आजु रितु-राज बिराजै ।
डार सुमन के भार रहीं झुकि कै छबि छाजै ॥
बरनै दीनदयाल पथिन दै छाँह सुहाई ।
पच्छिन को प्रतिपाल करै किन प्रभुता पाई ॥१७॥
ये हो द्रुम या सिसिर कौं दीजै दान तुरंत ।
हीने सूखे पात के दैहै हरो बसंत ॥
दैहै हरो बसंत फूल फल दलन समेते ।
पैहौ पुंज सुगंध मधुप गुंजैंगे केते ॥
बरनै दीनदयाल लसोगे शोभा से हो ।
भाषत वेद पुरान दियें बिनु मिलै न ये हो ॥१८॥
उपकारी हो द्रुम महा हम भाषत तुम पाँहि ।
राखहु नाहिं द्विजिह्व कौं हिय-कोटर के माँहि ॥
हिय-कोटर के माँहि देत दुख तव पच्छिन कौं ।
पथिक न आवैं पास त्रास उपजैं लखि तिनकौं ॥

बरनै दीनदयाल सकल गुन है तव भारी ।
यह कुसंग ततकाल त्यागिए जग-उपकारी ॥१९॥
मन को खेद न करिय तरु पच्छिन को भरु पाय ।
भाषत साषा रावरी सोभा रहे बढ़ाय ॥
सोभा रहे बढ़ाय सफल मय तुम कों चाहैं ।
सेवत प्रेम लगाय कहैं जस दिसि के माहैं ॥
बरनै दीनदयाल धीर रखिये निज तन को ।
मंद वात को पाय कपाइय नाहिं सुमन को ॥२०॥
वा दिन की सुधि तोहि कों भूलि गई कित साखि ।
बागवान तुहिं घूर तें ल्यायो गोदी राखि ॥
ल्यायो गोदी राखि सींचि पाल्यो निज कर तें ।
फूलि रह्यो अब झूलि पाय आदर मधुकर तें ॥
बरनै दीनदयाल बड़ाई है सब तिन की ।
तू झूमै फलभार भूलि सुधि कों वा दिन की ॥२१॥

अथ पुनः रसाल-अन्योक्तियां ।

ऐसी संगति रावरे संग सजै न रसाल ।
कागन के गन ए तुम्हैं घेरि रहे यहि काल ॥
घेरि रहे यहि काल कहा कुसुमाकर आये ।
रसहुं सुगंध समेत वृथा तुम देत बढ़ाये ॥
बरनै दीनदयाल दई गति भई अनैसी ।
कोकिल कीर मिलिंद तीर नहिं संगत ऐसी ॥२२॥
सुनिए कल कोमल कलित हे सद सुखद रसाल ।
ए सुक पिक सारंग हैं सोभाकरन बिसाल ॥
सोभाकरन विसाल डाल सेवैं तव हित सों ।
चोंच चरन के घाय पाय नहिँ दुखिए चित सों ॥

बरनै दीनदयाल चूक मन मैं मति गुनिये ।
मानि मधुर सुखदानि बानि बर इनकी सुनिये ॥२३॥

अथ चम्पक-अन्योक्ति ।

धारे खेद न रहिय चित हे चम्पक कमनीय ।
कहा भयो अलि मलिन हिय जौं नहिँ आदर कीय ॥
जौं नहिँ आदर कीय मानि तोहि मंद अभागी ॥
कुटज करीर कुसाखि कुसुम को भो अनुरागी ॥
बरनै दीनदयाल नील नीरन सम कारे ।
कुसल रहैं वे केस कुसेसै नैनि सुधारे ॥२४॥

अथ करील-अन्योक्ति ।

धारयो दलन करीर तुम बहु रितुराजन पाय ।
यहै त्याग दिढ देखि कै प्रिय कीन्यो जदुराय ॥
प्रिय किन्यो जदुराय रमैं तव कुंजनि माहीँ ।
और सबै तरुराज ताहि दिसि देखत नाहीं ॥
बरनै दीनदयाल ऊँच नहिँ नीच बिचारयो ।
जो जग धरयो विराग ताहि हरि हित सों धारयो ॥२५॥

अथ शाल्मली—अन्योक्तियां ।

किन किन की मति नहीं छली सालमली करि अन्ध ।
गीधे गीध अमिख डली जानत अली सुगंध ॥
जानत अली सुगंध भली लाली सुक भूले ।
जानि अँगार चकोर और चहुँ ते अनुकूले ॥
बरनै दीनदयाल लखै गति को छिन छिन की ।
यह ठग रूप लखाय छली नहिं मति किन किन की ॥२६॥
सेमल बिना सुगंध तूं करत मालती रीस ।
छलि रे भ्रम दै सुकन कों नहिँ जैहै हरि सीस ॥

नहि जैहै हरि सीस भूलि जनि लखि निज लाली ।
जैहै बेगि बिलाय ल्याय मतिमंद को खाली ॥
बरनै दीनदयाल जगत मैं बिन गुन जे खल ।
करैं वृथा अभिमान जथा तरु मैं तूं सेमल ॥२७॥

अथ पलास-अन्योक्तियां ।

दिन द्वै पाय वसन्त मद फूल्यौ कहा पलास ।
ग्रीषम ठाढी सीस पै नहिं लाली की आस ॥
नहिं लाली की आस फूल सब तेरो झरिहैं ।
पीछे तोहि न दली अली कोउ आदर करिहैं ॥
बरनै दीनदयाल रहे नय कोमल किन है ।
ए नख नाहर रूप रहैंगे तेरे दिन द्वै ॥२८॥

लीन्हे कंटक बन करै बिरही मन झख त्रास ।
वाही तें तेरो कविन राख्यो नाम पलास ॥
राख्यो नाम पलास लाल मुख कोपित धारो ।
लह्यो न एक कलंक बिना कछु तातें कारो ॥
बरनै दीनदयाय संग सु कहूँ को कीन्हें ।
माधव हू सों मिल्यो तऊ छल कंटक लीन्हें ॥२९॥

अथ अर्क-अन्योक्तियां ।

तो मैं बहु ऐगुन भरे अरे आक मति-हीन ।
कहा जान केहि हेतु तैं हर तो सों हित कीन ॥
हर तो सों हित कीन तऊ उन केरि बड़ाई ।
तू मति भूलै मूढ़ मानि अपनी प्रभुताई ॥
बरनै दीनदयाल बात सुनि भाषत जो मैं ।
सिव की दाया एक आक बहु ऐगुन तोमैं ॥३०॥

नाहीँ कछु फल फूल तव बज्यो नाम मंदार ।
ताप गयो किन पथिन को सेवत तुमरी डार ॥
सेवत तुमरी डार कौंन विश्राम लह्यौ है ।
नहिं पराग मकरंद मिलिंदन भूलि रह्यो है ॥
बरनै दीनदयाल खगहुं न आवत पाहीं ।
केवल फोपल नाम बज्यो कछु बासहुं नाहीं ॥३१॥

तजि रितुपति की माधवी आयो यह सारंग ।
आक आदरै ताहि किन दुर्लभ याको संग ॥
दुर्लभ याको संग राखि जस लै ग्रीषम भरि ।
ये तो पत्र प्रसून जाहिँगे पावस मैं सरि ॥
बरनै दीनदयाल कहै को दैवी गति की ।
तो पैं भ्रमै मिलिंद माधवी तजि रितुपति की ॥३२॥

अथ दाडिम-अन्योक्ति ।

दारो तुम या बाग मैं कहाँ हँसो मुख खोलि ।
दिनाचार की औधि मैं लीजै रंच कलोलि ॥
लीजै रंच कलोलि दसन की जो यह लाली ।
जै है कहूं विलाय होंयगी डाली खाली ॥
बरनै दीनदयाल लगे खग हैं दिसि चारो ।
भीतर काटत कीट कौन रँग राते दारो ॥३३॥

अथ चंदन-अन्योक्ति ।

चंदन बन्दन जोग तुम धन्य तरुन मैं राय ।
देत कुकुज कंकोल लौं देवन सीस चढ़ाय ॥
देवन सीस चढ़ाय कौन तव रीस करैगो ।
बड़े बड़े तरु ईस सुगंधन पीस मरैगो ॥

बरनै दीनदयाल पाप-संताप-निकंदन ।
नंदन बन तें आदि करैं तब बन्दन चन्दन ॥३४॥

अथ तुलसी-अन्योक्ति ।

सब तरु धरा धरे रहे बेष बड़े प्रिय कीस ।
एकै तुलसी ही लसी लघु सरूप हरि सीस ॥
लघु सरूप हरि सीस रीस को तासु करैंगे ।
बीस बिसैं तरु ईस खीस ह्वै भार जरैंगे ॥
बरनै दीनदयाल बड़ो छोटो जनि मन धरु ।
भाग्यवंत है बड़ो बड़ो नहिं कहिए सब तरु ॥३५॥

अथ गेंदा-अन्योक्ति ।

माली की सहि सासना सुनि गेंदे मति भूल ।
बिन सिर दै पैहै नहीं वहै हजारे फूल ॥
वहै हजारे फूल जौन सूर सीस चढ़ैगो ।
दये आपनो आप अधिक तें अधिक बढ़ैगो ॥
बरनै दीनदयाल किती तूँ पैहै लाली ।
तेरे ही हित हेत देत सिख तोकों माली ॥३६॥

अथ वंस-अन्योक्ति ।

तो मैं वंस न सार कछु बकिवो हूँ अभिमान ।
तातें मलय न तोहि हठि बिरचत आप समान ॥
बिरचत आप समान न तो हिय सून निहारत ।
तेरै पास हुतास तासु तें तिनहूँ जारत ॥
बरनै दीनदयाल दोष तिनको न कहौं मैं ।
गंधसार का करै सार है वंस न तो मैं ॥३७॥

अथ चातक-अन्योक्ति ।

लागे सर सरवर परयो करी चंच घन घोर ।
धनि धनि चातक प्रेम तव पन पाल्यो बरजोर ॥
पन पाल्यो बरजोर प्रान परिजंत निबाह्यो ।
कूप नदी नद सिन्धु ताल जल एक न चाह्यो ॥
बरनै दीनदयाल स्वाति बिन सबही त्यागे ।
रही जनम भरि बूँद आस अजहूँ सर लागे ॥३८॥

अथ वासा अन्योक्ति ।

वासा यह तरु पैं तुम्हैं वासा वासर येक ।
बकै न इत व्याधा जुरे वाही ओर अनेक ॥
वाही ओर अनेक का कहौं बाज रहै ना ।
जाल परेवा होय जौन दुख सो कहुं मैना ॥
बरनै दीनदयाल करैं तू केकी आसा ॥
लाल मानि अब टेरि भजो सर आवत वासा ॥३९॥

अथ हंस-अन्योक्तियाँ ।

नाहीं मानस हंस यह नहिं मोतिन की रासि ।
ये तो संबुक मलिन सर करटन की मिरियासि ॥
करटन की मिरियासि रहैं याको सठ घेरे ।
तूँ मति भूलो चतुर जाहु याके नहिं नेरे ॥
बरनै दीनदयाल चलो निरजर सर पाहीं ।
जहाँ जलज की खानि सखे यह मानस नाहीं ॥४०॥

तजि कै मानस मलिन सर बिहरत हो बसु जाम ।
हंस वंस अवतंस हे रमन लगे केहि ठाम ॥
रमन लगे केहि ठाम नाम अरु रूप गँवाये ।
काक बलाकन साथ साक तजि रहत लुभाये ॥

सेवन दीनदयाल करो मुकुतन को सजिकै।
नत ह्वैहै बहु निन्द सखे सर मानस तजि कै ॥४१॥

अथ शुक-अन्योक्तियाँ ।

नहि दाडिम सैलूष यह सुक न भूलि भ्रम लागि ।
दल तें सूलिन कों छल्यो चोंच बचैं तव भागि ॥
चोंच बचैं तव भागि जाहु नहिं तो पछितैहो ।
याके फल के बीच बडो श्रम कछू न पैहो ॥
बरनै दीनदयाल लाल लखि लोभ्यो है किम ।
यह तो महा कठोर भूलि सुक नहिं यह दाडिम ॥४२॥
तजि कै दाडिम मूढ सुक खान गयो कित बेल ।
काँटनि सों बेधित भयो भूलि गयो सब खेल ॥
भूलि गयो सब खेल पंख लासा लपटायो ।
गिरयो राख में जाय जगत में काक कहायो ॥
बरनै दीनदयाल कहा खग रोवै लजि कै ।
करु मति कों धिक कोटि कठिन सेयो मृदु तजि कै ॥४३॥

अथ चक्रवाकी-अन्योक्ति ।

चलि चकई तेहि सर विषै जहँ नहिँ रैन बिछोह ।
रहत एकरस दिवस ही सुहृद हंस संदोह ॥
सुहृदय हंस-संदोह कोह अरु दोह न जाके ।
भोगत सुख अंबोह मोह दुख होय न ताके ॥
बरनै दीनदयाल भाग्य बिनु जाइ न सकई ।
पिय मिलाप नित रहै ताहि सर तूं चलि चकई ॥४४॥

अथ कोकिला-अन्योक्ति ।

कोकिल लोचन ललित करि करिय न कोय विषाद ।
भयो कि मूढ़ द्रयो न जो सुनि कै पंचम नाद ॥

सुनि कै पंचम नाद द्रवैं सुर चतुर विवेकी ।
सो न द्रवैं जेहि लखैं सुखद बानी कौवे की ॥
बरनै दीनदयाल लगै प्रिय सापनि कों बिल ।
कहा करैं सो रंग भैान गुनिए हे कोकिल ॥४५॥

अथ सिंह-अन्योक्ति ।

टूटे नख रद केहरी वह बल गयो थकाय ।
हाय जरा अब आय कै यह दुख दयो बढ़ाय ॥
यह दुख दयो बढ़ाय चहूँ दिसि जंबुक गाजैं ।
ससक लूंबरी आदि सुतंत्र करैं बन राजैं ॥
बरनै दीनदयाल हरिन बिहरैं सुख लूटें ।
पंगु भयो मृगराज आज नख रद के टूटे ॥४६॥

अथ गज-अन्योक्तियाँ ।

भाजत है जेहि त्रास ते दिग्गज दीरघ-दंत ।
नाहर नहिं नेरे फिरैं देखि बड़ो बलवंत ॥
देखि बड़ो बलवंत गिरैं गिरि-कंदर-दर तें ।
नदी कूल कुजमूल परसि बिनसे रद कर तें ॥
बरनै दीनदयाल रह्यो जो सब पैं गाजत ।
अहो सोइ गजराज आज कल बन तें भाजत ॥४७॥

तोरै मति तरु मूल तें फूल सहित हित नूर ।
अरे निरंकुश द्विरद बद दुखद महा मद पूर ॥
दुखद महा मद पूर लखै नहिं याकी सोभा ।
फल दल भल सुखदानि सकल जग तातें लोभा ॥
बरनै दीनदयाल प्रनय जो सब तें जोरै ।
सो उपकारी मानि मीतता प्रीति न तोरै ॥४८॥

बारन बारन मति करैं ये सारँग सुखदानि ।
हे मद-माते अंधमति ह्वैहै तुव छवि हानि ॥
ह्वैहै तुव छवि हानि नहिं छति कछु अलि-गन की ।
करिहैं प्रभा प्रकाश विकच बर वारिज वन की ॥
बरनै दीनदयाल जाय जान्यो नहिं कारन ।
विभव विनासि विसोक विपिन में बिहरैं बारन ॥४९॥

अथ चंद्र-अन्योक्तियाँ ।

मैलो मृग धारे जगत नाम कलंकी जाग ।
तऊ कियो न मयंक तुम सरनागत को त्याग ॥
सरनागत को त्याग कियो नहिं ग्रसे राहु के ।
लिए हिये मैं रहो तजहु नहिं कटे काहु के ॥
बरनै दीनदयाल जोति मिस सो जस फैलो ।
है। हरि को मन सही कहै खल पामर मैलो ॥५०॥

केतो सोम कला करो करो सुधा को दान ।
नहीं चन्द्रमनि जो द्रवै यह तेलिया पषान ॥
यह तेलिया पषान हठी कठिनाई जाकी ।
टूटी याके सीस बीस बहु बाँकी टाँकी ॥
बरनै दीनदयाल चंद तुम ही चित चेतो ।
क्रूर न कोमल होत कला जौं कीजै केतो ॥५१॥

अथ मुक्ता-अन्योक्तियाँ ।

मेल्यो मुख घसि सूँघि फिरि फेंक्यो कीस अजान ।
मुक्ता कुसल भई यहै जो नहिं हन्यो पखान ॥
जो नहिं हन्यो पखान बन्यो तुव रूप अजौं लैां ।
मिले जौहरी तोल मोल बिकिहै कइ सौ लैां ॥

बरनै दीनदयाल खेल कपि कैसो खेल्यो ।
बच्यो आपनी भागि अहो मुकुता मुख मेल्यो ॥५२॥
मूरख हृदय कठोर लखि हारे करि करि मान ।
जातें मज्जत जल विषे अहो सलज्ज पषान ॥
अहो सलज्ज पषान बड़ी तुम मैं गरुवाई ।
जोरे ते जुरि जात अहै यह द्वै अधिकाई ॥
बरनै दीनदयाल किते करिए वह मूरख ।
जुरै न लाए हेत होत अति सै जो मूरख ॥५३॥

अथ नदी-अन्योक्ति ।

बहु गुन तोमैं हैं धुनी अति पुनीत तव नीर ।
राखत यह औगुन बड़ो बक मराल इक तीर ॥
बक मराल एक तीर बड़ो छोटो नहिं जानति ।
सेत सेत सब एक नहीं गुन दोष पिछानति ॥
बरनै दीनदयाल चाल यह भली न है सुनु ।
जग में प्रगट बिलाहिं एक औगुन तें बहु गुन ॥५४॥

अथ नद-अन्योक्ति ।

हे नद ढाहैं तरुन जनि पावस प्रभुता पाय ।
ए तो तेरे तीर पैं सोभा रहें बनाय ॥
सोभा रहें बनाय छाय फल फूलन तें अति ।
सीत सुगंध समीर धीर गति हरैं पथिक मति ॥
बरनै दीनदयाल विविध खग रटैं भरे मद ।
ए सुख रहिहैं नाहिं गये इन तरु के हे नद ॥५५॥

अथ जलद-अन्योक्तियाँ ॥

दीजै जीवन जलद जू दीन द्विजन को देखि ।
इनको आसा रावरी लागी अहै विशेषि ॥

लागी अहै विशेषि देहु चहुँ कीरति छैहै ।
या चपला है चला लला धौं कित को जैहै ॥
बरनै दीनदयाल आय जग मैं जस लीजै ।
परम धरम उपकार द्विजन को जीवन दीजै ॥ ५६ ॥
करिये सीतल हृदय बन सुमन गयो मुरझाय ।
बिनै सुनो हे स्यामघन सोभा सघन सुहाय ॥
सोभा सघन सुहाय कृपा की धारा दीजै ।
नीलकंठ प्रिय पालि सरस जग मैं जस लीजै ॥
बरनै दीनदयाल तृषा द्विज-गन की हरिये ।
चपला सहित लखाय मधुर सुर कानन करिये ॥ ५७ ॥
भीषन ग्रीषमताप तें भयो झाँवरो छीन ।
है यह चातक डावरो अनुग रावरो दीन ॥
अनुग रावरो दीन लीन आधीन तिहारे ।
कहै नाम वसु जाम रहै घनस्याम निहारे ॥
बरनै दीनदयाल पालिए लखि तप तीपन ।
सरी सरोवर सिंधु काहु इन माँगी भीष न ॥ ५८ ॥
जग कों घन तुम देत हो गाजि कै जीवन दान ।
चातक प्यासे रटि मरे तापैं परे पषान ॥
तापैं परे पखान बानि यह कैानि तिहारी ।
सरी सरोवर सिंधु तजे उन तुम्हैं निहारी ॥
बरनै दीनदयाल धन्य कहिए यहि खग कों ।
रह्यौ रावरी आस जन्म भरि तजि सब जग कों ॥ ५९

अथ मणि विशेष-अन्योक्तियाँ ।

चिन्तामनि अरु नीलमनि पदुमराग सु प्रवीन ।
सुना न पारस तुम बिना लोह कनक कोउ कीन ॥

लोह कनक कोउ कौन नहीं जग मैं जे मानिक ।
चमकैं ठौरैं ठौर जगे हैं जे जेहि खानिक ॥
बरनै दीनदयाल अहो पारस हो तुम धनि ।
कियो कुधातु महीस मुकुट काहै चिंतामनि ॥ ६० ॥
मरकत पामर कर परी तजि निज गुन अभिमान ।
इतै न कोऊ जौहरी ह्यां सब बसैं अजान ॥
ह्यां सब बसैं अजान काँच तोकों ठहरावैं ।
तदपि कुसल तूँ मानि जदपि यह मेल बिकावैं ॥
बरनै दीनदयाल प्रवीन हृदै लखि दरकत ।
अहो करम-गति गूढ परी कर पामर मरकत ॥ ६१ ॥
करनी विधि की देखिय अहो न बरनी जाति ।
हरनी को नीको नयन बसै विपिन दिन राति ॥
बसै विपिन दिन राति बरन वर बरही कीने ।
कारी छबि कल कंठ किए फिरि काग अधीने ॥
बरनै दीनदयाल धीर धन तें बिन धरनी ।
वल्लभ बीच वियोग विलोकहु विधि की करनी ॥ ६२ ॥
जाकों खोजत सो मिलै यामैं संसय नाहिं ।
बिरचै माखी मधु सुधा भीषन बन के माहिं ॥
भीषन बन के माहिं सिंह गजराज बिदारत ।
मुकता मिलै मराल मिलिंद सरोज निहारत ॥
बरनै दीनदयाल स्वाति-जलऊ पपिहा को ।
मिलै भली बिधि आय जौन जग खोजत जाको ॥ ६३ ॥

अथ तड़ाग-अन्योक्ति कवित्त ॥

अमल अनूप जल मनिमय निसेनी जासु
थल को बखान सुतो छुतो नर वर मैं ॥

मीन के विलास लहरीन के प्रकास जामें
मुद में कुमुद ऐसी प्रभा ना अपर में ॥
चितै रह्यो चंचरीक चारु कंज कलिका कों
हंस-सर दाग मर मन गो अधर में ॥
सर में लगैहैं अवसर मैं समुझि यह
सूकर बिहार करैं अहो तेहि सर में ॥६४॥

अथ पवन-अन्योक्ति।

जहँ धरि पीत पराग पटबर सम कियो बिहार।
तेहि बन पवन जती भयो रमत रमाये छार ॥
रमत रमाये छार घोर ग्रीषम दव लागे।
दव में मधुकर सखा संग सबही तजि भागे ॥
बरनै दीनदयाल रही छवि कुसुमाकर भरि।
दूलह बन्यो समीर रम्यो पटपीरो जहँ धरि ॥६५॥

अथ जौहरी-अन्योक्तियां।

नीकी मुकतन की लरी पै ह्याँ गाहक नाहिं।
इत सवरी सवरी भरी सगरी नगरी माहिं ॥
सगरी नगरी माँहि फिरन हारी कुंजन की।
कवरी भारनि रचैं आनि अवली गुंजन की ॥
बरनै दीनदयाल बूझि कैसी तब ही की।
अहे जौहरी गौन कौन पैं बरनै नीकी ॥६६॥

मैली थैली लखि न तूं भ्रमै प्रेम करि खोल।
अहे जौहरी है खरी यामैं मनि अनमोल ॥
यामैं मनि अनमोल तोल करि ताको लीजै।
कीजै कछु न खोटि कोटि धन तापैं दीजै ॥

बरनै दीनदयाल जथा मजनू मन लैली ।
तैसे ही अनुरागि त्यागि मति मैली थैली ॥६७॥

अथ सौदागर-अन्योक्ति ।

सौदागर तूँ समुझि कै सौदा करि यहि हाट ।
जैहै उठि दिन दोय मैं पछितैहै फिरि बाट ॥
पछितैहै फिर बाट वस्तु कछु भली न लीनी ।
योंही लंपट होय खोय सब संपति दीन्ही ॥
बरनै दीनदयाल कौन बिधि ह्वैहै आदर ।
गये आपने देस बिना सौदा सौदागर ॥६८॥

अथ गढ़धनी-अन्योक्ति ।

साथी पाथी भेस भे गढ़ीं ढहै चहुं फेरि ।
आनि बनी अरि की अनी धनी खोलि दृग हेरि ॥
धनी खोलि दृग हेरि धवल धुज आप विराजे ।
बोलन लगे नकीब डंक अब लो तिहुं बाजे ॥
बरनै दीनदयाल साजि अब अपनो हाथी ।
हरि को टेरि सहाय गये सब तेरे साथी ॥६९॥

अथ चौपर खिलारी-अन्योक्ति ।

अहे खिलारी चूक मति पंजा विषे सम्हाल ।
परो दाव तेरो खरो करि लै सारी लाल ॥
करि लै सारी लाल लाल निज चाल न छूटै ।
सनमुख ही मुख राखि देखि जुग कहूं न फूटै ॥
बरनै दीनदयाल जीति बाजी यहि बारी ।
हारी मूठ न संग बार बहु अहे खिलारी ॥७०॥

अथ चंगउडायक-अन्योक्ति ।

काँचे गुन छोडे न तू अरे उड़ाइक क्रूर ।
जैहै कर ते टूटि कै उड़ी गुड़ी कहुँ दूर ॥
उड़ी गुड़ी कहुँ दूरि लूटि लरिका सब लैहैं ।
तो को जानि गँवार हँसी कर तारी दैहैं ।
बरनै दीनदयाल माँजि गुन को बिन जाँचे ।
अरे उड़ावनिहार छोड़ि जनि तूँ गुन काँचे ॥७१॥

अथ पथिक-अन्योक्तियाँ ।

राही खड़े असोक क्यों बकुल ध्यान यह बेल ।
है डकैत छाया तजो लख्यो न याको खेल ॥
लख्यो न याको खेल सिरसि आकर बर चोटैं ।
कोऊ नहिं सहकार अकेला लगिहो लोटैं ॥
बरनै दानदयाल जटे इन जटी सुकाही ।
जाहु चले या बेर आपनी पति लै राही ॥७२॥

सोई देस बिचारि कै चलिये पथिक सुचेत ।
जाके जस आनन्द की कबि सब उपमा देत ॥
कबि सब उपमा देत रंक भूपति सम जामैं ।
आवागौन न होय रहै मुद मंगल तामैं ॥
बरनै दीनदयाल जहाँ दुख सोक न होई ।
ये हो पथी प्रवीन देश को जैये सोई ॥७३॥

कोई संगी नहिँ उतै है इत ही को संग ।
पथिक लेहु मिलि ताहि तैं सब सों सहित उमंग ॥
सब सों सहित उमंग बैठि तरनी के माहीँ ।
नदिया नाव सँजोग फेरि यह मिलिहै नाहीँ ॥

बरनै दीनदयाल पार पुनि भेट न होई ।
अपनी अपनी गैल पथी जैहैं सब कोई ।।७४।।

ग्राहैं प्रबल अगाधि जल यामैं तीछन धार ।
पथिक पार जो तूं चहै खेवनिहार पुकार ॥
खेवनिहार पुकार बार नहिं कोऊ साथी ।
श्रौर न चलै उपाव नाव बिन एहो पाथी ।।
बरनै दीनदयाल नहीं अब बूडै थाहैं ।
रहे महा मुख बाय ग्रसन को भारी ग्राहैं ।।७५।।

राही सोवत इत किते चोर लगे चहुँ पास ।
तो निज धन के लेन को गिनै नींद की स्वास ।।
गिनै नींद की स्वास बास बसि तेरे डेरे ।
लिए जात बनि मीत माल ए साँझ सवेरे ।।
बरनै दीनदयाल न चीन्हत है तूँ ताही ।
जागि जागि रे जागि इतै कित सोवत राही ।।७६।।

संबल जल इत लै पथिक आगे नहीं निबाह ।
दूर देश चलिवो महा मारू थल की राह ॥
मारू थल की राह संग कोऊ नहिं तेरे ।
सजग होय धन राखि लगैं पथ चोर घनेरे ॥
बरनै दीनदयाल कठिन बचिवो है कंवल ।
सखे परैगी जानि उतै इत लै जल संबल ।।७७।।

जैयै गैल सुछैल बनि पथिक सुपंथ बिचारि ।
भ्रमो न ठगिनी मारिहै तुम्हैं ठगोरी डारि ।।
तुम्हैं ठगोरी डारि छीनि सब ही धन लैहै ।
महा अंध बन कूप बीच या नीच छिपैहै ।।

बरनै दीनदयाल लाल निज माल बचैये ।
अहै ठगन को पुंज कुंज इत गुनि कै जैये ॥७८॥

इत मरु भूमि मतीर जल पीव बटोही बीर ।
त्रिसा मेटिवो उचित है कहा सरित सर नीर ॥
कहा सरित सर नीर समैं जो काम न आवै ।
ताको लीने नाम नहीं वह प्यास बुझावै ॥
बरनै दीनदयाल देस अरु कालहि चित धरु ।
हठ जनि करै सुजान जान कठिनो थल इत मरु ॥७९॥

सपने पथिक सराय परि कहा रचत है राज ।
भोर भये छुटिहै यहु तोहि सराय समाज ॥
तोहि सराय समाज छूटि साथी सब जैहैं ।
भटिहारी सों नेह करै जनि तैं पछितैहै ॥
बरनै दीनदयाल सोच नीके चित अपने ।
मनोराज पथ बीच कैान सुख पायो सपने ॥८०॥

बीती सोवत सब निसा होन चहै अब भोर ।
पथिक चेत करि पंथ को चिरियन लायो सोर ॥
चिरियन लायो सोर देखि चहुं ओर घोर बन ।
चोर लगे बरजोर सखे यह ठोर राखि धन ॥
बरनै दीनदयाल न गाफिल ह्वैहै इत भीती ।
साथी पाथी भए जागि अज हूं निसि बीती ॥८१॥

हारे भूली गैल मैं गे अति पाय पिराय ।
सुनो पथिक अब तो रह्यो थोरो सो दिन आय ॥
थोरो सो दिन आय रह्यो है संग न साथी ।
या बन हैं चहुं ओर घोर मतवारे हाथी ॥

बरनै दीनदयाल ग्राम सामीप तिहारे।
सूधे पथ जों जाहु भूलि भरमो कित हारे ॥८२॥

चारों दिसि सूझै नहीं यह नद-धार अपार।
नाव जरजरी भार बहु खेवनहार गँवार॥
खेवनहार गँवार ताहि पर है मतवारो।
लिए भँवर में जाय जहाँ जल-जन्तु अखारो॥
बरनै दीनदयाल पथी बहु पौन प्रचारो।
पाहि पाहि रघुबीर नाम धरि धीर उचारो ॥८३॥

देखो पथिक उघारि कै नीके नैन विवेक।
अचरज मैं यह बाग मैं राजत है तरु एक।
राजत है तरु एक मूल ऊरध अध साखा।
द्वै खग तहाँ अचाह एक इक बहु-फल चाखा॥
बरनै दीनदयाल खाय सो निबल त्रिसेखो।
जो न खाय सो पीन रहै अति अदभुत देखो ॥८४॥

देखो पथिक अचंभ यह जमुना तट धरि ध्यान।
महि मैं बिहरैं कुंज द्वै करैं मंजु अलि गान॥
करैं मंजु अलि गान नील खंभा ता ऊपर।
पिक धुनि दामिनि बीच तहाँ सर हंस मनोहर॥
बरनै दीनदयाल संख मैं सोम बिसेखो।
ता ऊपर अहि तनै ताहि पर बरही देखो ॥८५॥

या बन मैं करि केहरी कूप गँभीर बिचार।
द्वै पहार के ओट मैं बसत एक वट पार॥
बसत एक वट पार उभै सर धनु संधाने।
ता पीछे अति स्याह नागिनी चाहति खाने॥

बरनै दीनदयाल इन्हैं लखि डरिये मन मैं ।
पथिक सुपंथ बिहाय भूलि जनि जा या बन मैं ॥८६॥
फूली है सुखमा मई नई लहलही जोति ।
छई ललित पल्लवन तें लखि दुति दूनी होति॥
लखि दुति दूनी होति चपल अलि यापैं दो हैं ।
लगे गुच्छ द्वै बीच वहै जन को मन मोहैं ॥
बरनै दीनदयाल पथिक है कित मति भूली ।
या तो मारक महा छली विष बल्ली फूली ॥८७॥
मोहैं चंपक छबिन तें पथिक न यह आराम ।
कुंद कली अवली भली लसत बिंब बसु जाम ॥
लसत बिंब बसु जाम कीर खंजन सब मिल के ।
भये भँवर तित लोल बोल बिलसैं कोकिल के ॥
बरनै दीनदयाल बाग यह पथ को सोहै ।
पाथी गवन है दूर देखि बीचहि मति मोहै ॥८८॥
चारो दिसि लहरी चलैं बिलसैं बनज बिसाल ।
चपल मीन गति लसंति अति तापर सजैं सिवाल ॥
ता पर सजैं सिवाल हंस अवली सित सोहैं ।
कोक जुगल रमनीय निरखि सर में मति मोहैं ॥
बरनै दीनदयाल मकरपति यामें भारो ।
त्रास मान हे पथी ग्रास करिहै लखि चारो ॥ ८९ ॥

अथ शान्त और शृंगार रसों पर-अन्योक्तियां ।

भूलै जोबन के न मद अरी बावरी बाम ।
यह नैहर दिन दोय को अंत कंत तें काम ॥
अंत कंत तें काम तंत सब ही तजि दै री ।
जाते रीझे नाह नेह नव तां से कै री ॥

बरनै दीनदयाल भूखि भूखन अनुकूलैं।
चलि पिय गेह सनेह साजि लखि देह न भूलैं॥ ९० ॥
गौने को दिन निकट अब होन चहै पिय मेल।
अजहूं छुटो न तोहि री गुडियन को यह खेल॥
गुडियन को यह खेल सब समै बिगारे।
सीख्यो नहीं गुन कछू पिया मन-मोहन-वारे॥
बरनै दीनदयाल सीख पैहै पिय भौने।
परी भूखन साजि भटू दिन आवत गौने॥ ९१ ॥

तू मति सोवै री परी कहीं तोहि मैं टेरि।
सजि सुभ भूषन बसन अब पिया मिलन की बेरि॥
पिया मिलन की बेरि छाँड़ि अजहूं लरिकापन।
सूधे दृग सों हेरि फेरि मुख ना दै तन मन॥
बरनै दीनदयाल छमै गो चूकनिहूं पति।
जागि चरन मैं लागि सभागिन सोवै तू मति॥ ९२ ॥

पिय ते बिछुरे तोहि री बिते बहुत हैं रोज।
पिय पिय पपिहा जड़ रटै तूं न करै पिय खोज॥
तूं न करै पिय खोज किते दुरमति मैं भूली।
होन लगे सित केस कौन मद मैं अब फूली॥
बरनै दीनदयाल सुमिरि अजहूं तेहि हिय तें।
हैं सब तेरी चूक नहीं कछु तेरे पिय तें॥ ९३ ॥

औरी प्रिय सों सब प्रिया मिलीं महल मैं जाय।
तू बौरी पौरी धरे बाहर ही पछिताय॥
बाहर ही पछिताय रही अपनी करनी तैं।
अली लगी अति देर चली कौनी सरनी तैं॥

बरनै दीनदयाल चूक तेरी यह टौरी ।
अब तो लगे कपाट भई यह बेला औरी ॥ ९४ ॥

मोहै नाहिं निहारि तूं येरी नारी गँवारि ।
ये दूती हैं जार की तोहिं बिगारनि हारि ॥
तोहिं बिगारनि हारि कहैं मधुरी मृदु बातैं ।
तैं सुनि कै ललचाय लखै नहिं इनकी घातैं ॥
करिहैं दीनदयाल कंत तें तोहि बिछोहैं ।
अंत धरम बिनसाय कलंक लगाय बिमोहैं ॥ ९५ ॥

पति के ढिग जनि जार पैं मार नयन के बान ।
जानत सब बिभिचार तव गुनत न नाह सुजान ॥
गुनत न नाह सुजान कृपामय मानि अयानी ।
बाँह गहे की लाज बिचारत स्वामि सुज्ञानी ॥
बरनै दीनदयाल बैन सुनिये री मति कै ।
ह्वै अपजस अघ अंत किए छल सन्मुख पति के ॥ ९६ ॥

स्वामी सुन्दर सीलजुत अपनो गुनी कुलीन ।
ताहि त्यागि परनाह सठ सेवति कहा मलीन ॥
सेवति कहा मलीन हीन-मति कुलटै बौरी ।
सुधा सिंधु तजि मुधा फिरै मृग-जल कों दौरी ॥
बरनै दीनदयाल अरी ह्वैहै बदनामी ।
जार गवाँरहि भजे तजे वर अपनो स्वामी ॥ ९७ ॥

औरैं सब जग पुरुष कों अपने पति पर वार ।
जैसो कैसो निज भलो दुहूँ कुल तारनिहार ॥
दुहुँ कुल तारनिहार सुजस गति तासों लहिये ।
इतर संग भय होय खोय कीरति दुख सहिये ॥

बरनै दीनदयाल सील लज्जा या ठौरैं।
राखि राखि री राखि छोड़ि जग के पति औरैं ॥ ९८ ॥

तेरे ही अनुकूल पति किन बिनवै प्रिय बोलि।
घट मैं खटपट मति करै घूंघट को पट खोलि॥
घूंघट को पट खोलि देखि लालन की सोभा।
परम रम्य बुधगम्य जाहि लखि कै जग लोभा॥
बरनै दीनदयाल कपट तजि रहु प्रिय नेरे।
विमुख करावनिहार तोहि सनमुख बहुतेरे ॥ ९९ ॥

येरी जोबन छनक है सुनि री बाल अजान।
निज नायक अनुकूल तें नहीं चाहिये मान॥
नहीं चाहिये मान देखि यह समय सुहाई।
द्विज-गन के कल गान स्याम सुधि देत धराई॥
बरनै दीनदयाल सीख सुनि सुन्दरि मेरी।
विहरि बिहारी नाँह पाँह तेहि छाँह अयेरी ॥१००॥

बिछुरी तूँ बहु काल तें पौढ़ी पीतम पाँह।
कछु बीती निसि नींद मैं कछु कलहन के माहँ॥
कछु कलहन के माहँ रही मुहँ फेरि कठोरी।
पिय हिय लायो नाहिं मोद नहिं पायो बौरी॥
बरनै दीनदयाल रही अब निसि ना किछुरी।
यह प्यारे परजंक पौढ़ि अजहूँ लौं बिछुरी ॥१०१॥

कासों पाती हों लिखों कापैं कहौं सँदेस।
जे जे गे ते नहिं फिरे वहि पीतम के देस॥
वहि पीतम के देस बड़ो अचरज या भासै।
कहूँ न तम को लेस तहाँ बहु भानु प्रकासै॥

बरनै दीनदयाल जहाँ नित मोद मवासौं।
जनमादिक दुख दुंद नहीं चर कहिए का सों ॥१०२॥
पनिहारी यहि सर परैं लरति रही सब याँह।
रीतो घट लै घर चली उतै मारिहै नाह॥
उतै मारिहै नाह काह तेहि ऊतर दैहै।
रोय रोय पति खोय फेरि सर पैं फेरि ऐहै॥
बरनै दीनदयाल इतै हँसिहैं सब नारी।
ख्वारी दुहूँ दिसि परी अरी ग्वारी पनिहारी ॥१०३॥
नीकी विधि चलि री नटी अति सूक्षम यह राह।
राम राम मुख ध्यान पद ह्वैहै तबै निबाह॥
ह्वैहै तबै निबाह सबै गो गोचर अपने।
बस करि कै चलि सूध नहीं चित चालै सपने॥
बरनै दीनदयाल डिगे फिरि खोज न जी की।
ये सब देखनिहार न दैहैं उपमा नीकी ॥१०४॥
पति की संगति री सती लै सुगती यहि आगि।
धरे सिंधोरा कर परे अब दै डग मग त्यागि॥
अब दै डग मग त्यागि भागि जनि चेत चिता कों।
जरे मरे सिधि पाव कलंक न लाव पिता कों॥
बरनै दीनदयाल बात यह नीकी मति की।
सुजस लोक परलोक श्रेय लै संपति पति की ॥१०५॥

अथ जल-अन्योक्ति।

हे जल बेग तरंग तें करै बिलग मति मीन।
यह तो तेरे बिरह ते ह्वैहै प्रान-विहीन॥
ह्वैहै प्रान-विहीन देखि दसरथ को बानो।
प्रिय को देख्यो नाहिं प्रान को कियो पयानो॥

बरनै दीनदयाल नहीं जिन प्रेम किये पल ।
ते किमि जानैं पीर बियोगी जनकी हे जल ॥१०६॥

अथ पंकज-अन्योक्तियां ।

हारो है हे कंज फसि चंचरीक तुम माहिं ।
याकों नीके राखिए दुखित कीजिए नाहिं ॥
दुखित कीजिये नाहिं दीजिए रस धरि आगे ।
सखे रावरे हेत सबै इन सैारभ त्यागे ॥
बरनै दीनदयाल प्रेम को पैंडो न्यारो ।
वारिज बँध्यो मिलिंद दारु को बेधनिहारो ॥१०७॥
दीने ही चोरत अहो इन सम चोर न ओैार ।
इन समीर तें कंज तुम सजग रहो या ठैार ॥
सजग रहो या ठैार भैांर रखिए रखवारे ।
ना तो परिमल लूटि लेहिगें सबै तिहारे ॥
बरनै दीनदयाल रहो हो मित्र अधीने ।
भली करत हो रैनि कपाट रहत हो दीने ॥१०८॥

अथ रजक-अन्योक्ति ।

हे रे मेरे धोबिया तोसों भाषत टेरि ।
ऐसी धोवनी धोय जो मैलो होइ न फेरि ॥
मैलो होइ न फेरि चीर यहि तीर न आवै ।
साबुन लाउ बिचार मैल जाते छुटि जावै ॥
बरनै दीनदयाल रंग चढ़िहै चहुं फेरे ।
जो तूं देहै धोय भले जल ऊजल हेरे ॥१०९॥

अथ चित्रकार-अन्योक्ति ।

क्या है भूलत लखि इन्हैं अहे चितेरे चेत
एतो अपने ऐंन मैं रचे आपने हेत ॥

रचे आपने हेत चराचर चित्रहि तूनैं ।
डरै भ्रमैं मति मीन तोहि बिन ए सब सूनैं ॥
बरनै दीनदयाल चरित अति अचरज या है ।
रँग्यो आपने रंग तिन्हैं लखि भूलत क्या है ॥११०॥

दोहा ।

यह कलपद्रुम सुमनमय माला सुखद सुवेस ।
बिलसै दीनदयाल गिरि सुमनस हिये हमेस ॥१११॥

—:०:—

वैराग्यदिनेश ।

प्रथम प्रकास ।

मंगलाचरण ।

बंदों श्रीहरि कृपानिधि नट-बर-धारी बेस ।
जेहि भजि द्रवत महेस बिधि गनपति सारद सेस ॥
गनपति सारद सेस सकल सोभा जिन केरी ।
लखि लखि होहिं सुचकित देहि उपमा बहुतेरी ॥
बरनै दीनदयाल वहै प्रभु पाय अनंदों ।
अगुन सगुन जेहि कहैं वेद तिनके पद बंदों ॥१॥

१—काशी पञ्चरत्न ॥

कवित्त ।

सोभित अनंग अरि भूषित भुअंग अंग जासु संग मैं उमंग गंग की लहर है । होत हर हर जहँ आठहूँ पहर माहिँ ऐसी कहूँ नहिँ गूढ गति की डहर है ॥ धुज की फहर सजैँ दीप की उदोति जोति ठहर ठहर होति घंट की घहर है । छबि की छहर जमराज कों जहर गात कलि को कहर साज शंकर सहर है ॥१॥

किधौं कामधेनु जन कामना को पूरैं नित किधौं ज्ञान मातु यह सोभित पुरानी है । किधौं द्विजराजन की बाटिका रसाल छजैं जामैं अनुराग मई सजैँ सुकबानी है ॥ किधौं बुध मनिका की मंजुल मुकुत माल लसै महिबाल हिए बेदन बखानी है । गति बरदानी अति तर सुख खानी परब्रम्ह पटरानी किधौं हर राजधानी है ॥२॥

लपटी लता सी लहलही गंग-धार जहां देति फल चारिहूँ उदार अग्र-गन्य है । जासु तीर हंस भौंर भीर ठौर ठौर लसैं बसैं द्विज धीर रस

सरस सुधन्य है ॥ सदा यह जंगल मैं मंगल झकोर जोर नहीं कहीं यामै भय भव चोर-जन्य है । बसैं सिव जोगी नित नित लै बिसद भोगी ज्ञानद सुखद सद आनँद अरन्य है ॥३॥

ठौर ठौर चीर चोर कथा को मचो है सोर भोरहीं ते जामैं मुद मिलै छिन छिन है । देखत गजानन के वृन्द जहँ अभै होत दान को उदोत दीह देखो दिन दिन है ॥ एकही समीप हरि हरनी हरष-जुत रहत अभेद कहो भेद लह्यो किन है । बसैं सिव जोगी जित नित लै बिसद भोगी ज्ञानद सुखद अहो आनँद बिपिन है ॥४॥

माधो नित जित बसैं सुमनसु वृन्द लसैं भृंगी गन राते दृग मोद मानि मन मैं । फलति अपरना लता है चहुँ फल जहँ सेवत द्विजन के समूह प्रति छन मैं ॥ महाकालकूट पान करिकै बिसाल सूली भूषन भुजंग गहे ह्वै उमंग तन मैं । कैसें मृत्यु जीत ईस शंकर सुहाते जौं न ओषधीस-धर होते आनँद के वन मैं ॥५॥

दोहा ।

पंचरतन अति जतन सौं रचि गिरि दीनदयाल ।
अरपन कीन्ही हरिप्रिया काशी को यह माल ॥१॥

—:०:—

२—पुनः समस्यापूरित काशीपंचरत्न ॥

कवित्त ।

चहैं जाहि ज्ञानद मुनीस चेत चंचरीक मानद महेस रची आनँद की बाटि है । वारन कुगति की है तारन जहाज भव कारन करुन कला कुमति उचाटिहै ॥ पावैं निरवान दान कीटऊ पतंग जहाँ गंग को तरंग ह्वै उमंग सीस नाटिहै । सुमति प्रकासी संत संतत विकासी अंत काशी विश्वनाथ बिनु फाँसी कौन काटिहै ॥१॥

पावन प्रनतपाल पाय के परस पाय पूरन पुनीत बढ़े पुन्य पर-

पाटि है। जासु ध्यानभानु हृदय नभ मैं प्रचार ही तें महा मोह को अपार अंधकार फाटिहै ॥ भारी भूमि भार भीम भूतनाथ नाम भजें भंजैं भुवनेस भव भीषन कपाटि है । सुमति प्रकासी संत संतत विकासी अंत काशी विश्वनाथ बिनु फाँसी कौन काटिहै ॥२॥

कमलारमन मन कमल विकासै कौन तासु कमलासन की कलह निपाटिहै। विभो पाकसासन की डासन कै डासै कौन दासन के मुद को समुद उदघाटिहै ॥ जिनके उपासी रिधि सिधि हूँ को करैं दासी निधि हैं कलासी विधि हूँ न तेहिं आँटिहै । सुमति प्रकासी संतत विकासी अंत काशी विश्वनाथ बिनु फाँसी कौन काटिहै ॥३॥

कौन है कृपाळ साँच देहै संपदा समेटि मेटि कै कुअंक भाल को सुख सों साटिहै। कौन कालकूट के भखैया बिनु राखै लोक करिकै विसोक साखि कौं उपाटिहै ॥ दीन को दयाल महा काल तें उबारै कौन मुक्त सुखरासी कौं सुदासी सम बाँटिहै। सुमति प्रकासी संत संतत विकासी अंत काशी विश्वनाथ बिनु फाँसी कौन काटिहै ॥४॥

विपति विनासी अविनासी मौज खासी देइ कौन सुखरासी सुख संपदा सो ठाटिहै। दूरि कै उदासी भूरि आनँद विलासी सजि श्रेयहि सुदासी भासी महिमा न घाटि है ॥ जा समीप-वासी सबै मोद के मवासी होय त्रासी जमराजहि सुगाँसी गहि डाँटिहै। सुमति प्रकासी संत संतत-विकासी अंत कासी विस्वनाथ बिनु फाँसी कौन काटिहै ॥५॥

दोहा।

पंचरतन की माल यह समुझि समस्या भाय।
विरची दीनदयाल गिरि गनपति की रुचि पाय ॥१॥

—:०:—

३--काशी अभिलाष दसा कवित्व पंचक ॥

कवित्त ।

सेवत अनंत अरि पूरित उमंग कव गंग के तरंगनि में अगनि पषारिहैं । संभु गिरिजेस ए महेस नाम गान करि कब हिय धाम धूरजटी ध्यान धारिहैं ॥ देखि रमनीय मनि मंदिर चकित कब कासी कमनीय वर वीथिन विहरिहैं । कौने दिन दीनबंधु दीन के दयालु दोऊ उमा विश्वनाथ निज नैननि निहारिहैं ॥१॥

सेवत अभंग सतसंग ह्वै उमंग कब ज्ञान के प्रकास मोह तम तोम टारि हैं । कब धौं रसाल हिय बाग अनुराग कीन्ह सुनि सुक बैन जग येन चैन वारिहैं ॥ पाप के पिनाक पानि पुरी को निसाँक कब मानि कै मनाक नाकसुख को विसारिहैं । कौने दिन दीनबन्धु दीन के दयालु दोऊ उमा विश्वनाथ निज नैननि निहारिहैं ॥२॥

सुन्दर अटान मंजु मन्दिर घटान पेषि धुज फहरान निरबान कों विसारिहैं । कलित कलस कलधौतन के कमनीय देखि तासु छटा छन छटा वारि डारिहैं ॥ घन की घनक घन घंटनि मैं सुनि मन मोर कौं नचाय भवसिंधु सों निसारिहैं । कौने दिन दीनबंधु दीन के दयालु दोऊ उमा विश्वनाथ निज नैननि निहारिहैं ॥३॥

तरनी बनाय मनिकरनी को धरनी में करनी विहीन कब जीवैं भव तारिहैं । पद-अरविंद बिंदुमाधव के प्रभा नद कब मन भौंर करि ताप तें उबारिहैं ॥ पंचगंग संगम में अंग को उमंग संग धोय पाप खोय कब आपकों उधारिहैं । कौनें दिन दीन बंधु दीन के दयालु दोऊ उमा विश्वनाथ निज नैननि निहारिहैं ॥४॥

कौन जीव ईस कौन मौन धारि भौन अंत कब मैं इकंत रमा-रौन कौं विचारिहैं । चेतिहैं चितानंद को चित को अचल करि कब धौं स्वतंत्र सिवमंत्र को उचारिहैं ॥ चाहिहै अचाह पद असद

प्रपंच त्यागि कब ह्वै अमद मोह मद कौं प्रचारिहैं। कौने दिन दीन बन्धु दीन के दयालु दोऊ उमा विश्वनाथ निज नैननि निहारिहैं ॥५॥

दोहा।

बिरचित दीनदयाल गिरि काशी महिमा माल।
अभिलाषा गुन मैं सजे सज्जन कंठ विसाल ॥१॥

—:०:—

४—विश्वनाथ नवरत्न ॥

कवित्त।

कोऊ एक रंक जाहि फटो एक चीर उन ताहि कौं कहूँ तें काहू भूप देखि पायो है। कह्यो नृप तापैं यह दसा दीन भई कहा आक ऊ धतूरो तव देस मैं न जायो है॥ कैधौं हर लिंग को न पायो तुम ढूँढत कै जाकी कृपा हम गज-रथ कौं नचायो है। हाल है बिहाल तुव कुटिल कुचाल पागे गालहूँ अभागे संभु आगे न बजायो है ॥१॥

कोऊ एक रंक महा पंक सो लपटि रह्यो कंकउ निसंक हँसै देखि तेहि साज पैं। बिधि की लिखी न सीस संपति की रेख ताहि कहूं मिल्यो है सो सिव सेवक समाज पैं॥ वेद की बखानी सुनि पाई है उदारताई काहू बिधि गयो दीन दानी सिरताज पैं। जौं लौं दीनता को निज हाल कह्यो चहै दीन तो लों भयो दीन को दयाल देवराज पैं ॥२॥

कोऊ एक आरत पुकारत महेस नाम गयो दीन भेस प्रभु धाम धरि ध्यान कौं। लख्यो दीनता की ओर दीनबंधु कृपा कोर बढ़ो करुना को जोर करुनानिधान कौं। श्रीपति सकाने सिसिकाने विधि बासबउ धनद डराने संक मै मयंक भान कौं। देखैं दीन दृग कोरैं धोरैं खरे प्रेम जोरैं करत निहोरैं माँगिए जू निरवान कौं ॥३॥

जम की न गम इत रसम चलाइबे की कासिका-खसम को प्रताप जित ही छयो। छके दंडपानि हूं पानिहूं उदंड दंड गहे काल-

नाथ कुतवाल कों विसाल विसमय भयो ॥ अति अभिराम सुखधाम काम कामतरु सिव सिव नाम जिन वासुदेव को लयो। कढ़ो सो कलंक पंक तें बुधाग्रगन्य होय धन्य सोम अंक में निसंक भौम ह्वै गयो ॥४॥

धरैं धीर ध्यानैं जासु महिमा बखानैं वेद भेद नहिं जानैं गुन गाने लै उमंग कों। मारे महामार छली दंड दै कमंडली कों श्रौर बड़ो बली दच्छ भाल किए भंग कों ॥ दानी देव द्वार दीन आदर अपार होत आक श्रौ धतूर धूर पूर रहे अंग कों। राखत नदी सवाल दीन को विसाल सीस ताहि हेतु तें दयाल ईस धरे गंग कों ॥ ५ ॥

बसी वाम भाग गौरि प्रेयसी लसी सुहाग धवल अनूप रूप अचल निकेतु है। विसद वरद वर सरद घटा लों सजै गरल लगाये सित चित हरि लेतु है ॥ भूषन भुजंग सुभ्र गंग के तरंग गहे ह्वै उमंग सीस रजनीस सोऊ सेतु है। ऊजल सकल अंग संगिहूँ अमल एक स्यामल झलक गल तामें कृपा हेतु है ॥ ६ ॥

आक को प्रसून दै पिनाक-पानि जू को रंक नाक-पति कों निसंक सो न गनै बैन में। देवन की मंडलीक मंडली तें आदि खरे सेवन करत डरे डीठि दिये नैन में। जाहि जाँचि जाचक न जाँचै श्रौर द्वार जाय आठो सिधि नवो निधि सजैं तासु ऐन में। बेर बेर बरजैं कुबेर जू कों द्वारपाल बैठिए सबेर अजो हैं कृपाल सैन में ॥ ७ ॥

अनिमा लखति आनिमेष दृग कंज कोरैं कामना निहोरैं प्रीति जोरैं सुख रासी में। महि माँह महिमा खरी ह्वै महिमा बखाने लघिमा ललकि लाभ मानैं लघु दासी में ॥ प्रापति पलोटे पाय बसिता बसी है आप घसे बिन सीस रहै ईसता उदासी में। गरिमा गरूर त्यागि धूरि अनुरागि गहै आठो सिधि रहैं सिव सेवक खवासी में ॥ ८ ॥

दारिद दरद दर दीनता दुरित दुख देव तव दासन के देस में

न रमैं छन। ज्ञान गरुवाई प्रभुताई औ बड़ाई मान रहत सदाई सेव-काई धरि करि पन॥ पावैं निरवान दान कीटऊ पतंग द्वार गावैं हैं उदार वेद तो जस अपार घन। औढर ढरन असरन के सरन हर पीर के हरन बलवीर नेहु देहु मन॥ ९॥

दोहा।

दीनदयाल गिरीश को यह नवरतन विसाल।
विपति विदारनि-हार है अति उदार सु रसाल॥ १॥

—:०:—

५—श्रीगंगा-विनयाष्टक॥

कवित्त।

धूरजटी जटा तें धराधर कों वेधि बही आनि लहलही धरा मध्य धार जब तें। अधम अपार कों उधार कियो ता दिन तें लगी नहिं धार बार बार सुन्यो सब तें। तेरी धुधुकार धाराधर के समान सुने पाप के पहार छार भए ता सबब तें। तो जस पुकार परयो देव-लोक के मँझार लागी जमद्वार कों किवार मात तब तें॥ १॥

शंकर कोदंड पै उदंड राम बाहु दंड जैसे तम को विहंडि डारै मारतंड है। जैसे वक्रतुंड व्यूह विघन विनासत हैं जैसे कियो चंडी चंडमुंड खंड खंड है॥ जैसे गजगंज के विदारन को पंचानन जैसे पंडुरीक पै तुसार बरवंड है। तैसे दिनयाल गंग-महिमा विसाल आप पाप के कलाप पै प्रताप ही प्रचंड है॥ २॥

पाप के कलाप आप आपके प्रताप दाप करिके विलाप भूरि दूर भजि जात हैं। होत है मिलाप हरिजू तें तव नाम जाप जपे तिहू ताप किहूँ भाँति न लखात हैं॥ तापित सरीर हौं तो आयो तव नीर तीर होय कै अधीर धी मैं धीर न धरात हैं। ख्यात है सुजस जग बात यह कैसी होय सोय रहो मनों मात तातें उतपात हैं॥ ३॥

दियो है न दान कछू कियो है न पुन्य रंच ऐस ही प्रपंच बीच वै सबै बिलै भई। कौने गुन देवनदी कौन कों पुकारों अब टेरे यह बेरे को सुनत है कृपा मई॥ सांझ हूँ सवेरे ये अनेरे मदनादि मूढ़ देत हैं दरेरे मोहि खेरे घालि कै कई। अंब अवलंब यह दीन कों न कोऊ एक तेरे बिन मेरे को कवन देव देखई॥ ४॥

येरी मात गंग यह पाप जंग कियो बड़ो मोसों वैर ठानि आनि आनि अरुझायो है। करयो बार बार दगादार तें पुकार मैं तो छाँडि संग अधम-उधार नाम गायो है॥ गहि कै दयाल महा महिमा विसाल जाल खल को बिहाल करि बल बाँधि ल्यायो है। तीछन तरंग तरवारन तें याके अंग कीजिये निरंग यह संतन सतायो है॥ ५॥

किए हैं उधार गंग अधम अपार तूनें जब तें धरा में आनि धौल धार चमकी। चंद की कला मलान लागति हिलोरें लखि लखे न लखाति लेस महा मोह तम की॥ ताप कै कलाप आप दाप तें विलाप धरें कौन करै कथा तो अथाह अनुपम की। पापन की पांती बिलपाती न दिखाती कहूँ छाती फटि जाती धुनि तेरी सुनि जम की॥६॥

ठौर ठौर गंग तेरे भैांर चसमा की तौर सोभा सिरमौर ये लखावैं सुखखानी को। पाप के कलाप पैं कुठार हैं तरंग तुव फेन सित सेज मनो मुक्ति महारानी को॥ महानंद मन्दिर मैं आनैं दोरि दूर ही तें कहै को प्रताप तो समीर दरवानी को॥ सरि सिरताज ये री तेरी ये अवाज सुने भाजसी परत जमराज-राजधानी को॥ ७॥

कोन सरि करै सरि सरि सरिसिरताज साथ माथ पीटि हाथ करि पाप विलपाय है। पन करि तपन-तनुज को बढ़ायो तेज तासु तेनु जाको किये चेरी लिए जायहै॥ तातें दिसि पूरब अपूरब बनाय बेस उदै गिरि ऊपर दिनेस रह्यो आयहै। करै फिरियादि यादि करिकै अनादि पा हिँ लालिमा न भोर भाल भगवाँ सुहाय है॥ ८॥

दोहा ।

अष्टक नासक कष्ट को हितमय विनय बखानि ।
विरच्यौ दीनदयाल गिरि थिरमति अति सुखदानि ॥१॥

—:०:—

६—गंगा-नवरत्न ॥

कवित्त ।

जा दिन तें बाँध्यो हर जू जटान बीच याहि ता दिन तें है मुरारि रारि कों बढाई है । पापिन कों घेरि घेरि शंकर बनावति है आवति न संक एक नेक न लजाई है ॥ वक्रित ह्वै चलै लखि चकित ह्वै मेरो मन कैसी यह नदी भगीरथ नै बहाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥१॥

किधों हर भूषन समग्री यह राखी धरि किधों हर रचिवे की संचति उपाई है । कोटिन मलीन मुंड धरै निज अंग संग कहा होति जगमग जग में बडाई है ॥ यापैं लखि मेरो मन कांपै करुना निकेत चेरी करि.मेरी अनुजाहुँ संग लाई है । सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥२॥

कोऊ महा पापी सो मिलापी भयो याके तीर त्यागि के सरीर नीर छ्वै के छवि पाई है । धाए तव गन तेहि छन रावरोई तन धरै लै विमान तो समान छवि छाई है ॥ पीछे मम दूत मजबूत गए लैन तेहि दूर ही तें जम की जमाति को भगाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥३॥

त्यागि पदकंज मंजु रावरो हे कृपापुंज सुनो यह बेमुख ह्वै ठोर ठोर धाई है । जानत जहान पान कीन्हों रिखि लै महान तब या कहाई तऊ विष लों बिहाई है ॥ जाय कै समाई खार पारावार तासु

लाज भली भई कई बेर मों मति डराई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥४॥

हा हा विधि हूं तें विपरीति रचना कों रची एकमुख लैलै पंच मुख भावनाई है। पूरो द्विज ईस कों अधूरो करि धरयो सीस व्यालन की माल बकसीस पहिराई है॥ वेद को बनाय बैन मो पितु को कियो नैन पापिन अदंड दंड फाँस मों नसाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥५॥

औरैं यह दोष बड़ो देखिये कृपा-प्रवाह चाह कों अचाहन के हिए मैं जगाई है। घेरि गंग तालु अंग नाग-फांस कों फँसाय नागही बनाय नागछालन ते छाई है॥ धूरतावतंस अंत समै लाय छार कियो प्रेत सरदार विष औषधी खवाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूर-ताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥६॥

गंग नीर तीर मैं सरीर मंद निंदत हैं का कहूं बलाक नाम पति प्रभुताई है। आक कल्पसाल कों निसाक कहै कहा माल मोहि लै पिनाक-पानि सीस श्री बढ़ाई है॥ कीट हू पतंग याके संग ते गरूरी गही रही काल संक नाहिं विधि की बड़ाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥७॥

याके बीच मच्छ कच्छ लच्छ पच्छ पात गहैं कहैं स्वच्छ गंग रहै हम तो सदाई है। दूषत प्रतच्छ दूर देसन के दच्छन को तच्छन लहैं सुरूप ईसता बडाई है॥ कोऊ जग जाल तृन-जाल के समान गनै कोई भनै महाकाल की रज उड़ाई है। सुनिए जू जदुराई गंग की गरूरताई गरजी ह्वै जमराई अरजी लगाई है ॥८॥

कहैं जम लखो गुन त्रिदस-तरंगिनी के नीके अवनी के बीच याकी कला जाने को। रचति अनेक हर एक ही लहर माहिं कहर निहारे होय हहर सयाने को॥ नाम है अनंत सो अनंत हार ह्वै है गरैं खंड

खंड सुधा-निधि ह्वैहै सीसवाने को। बाहन तो एक है सवार के ठिकाने नाहिं दरद न जाने याने बरद पुराने को ॥९॥

दोहा।

यह नवरतन सुजतन करि ब्याज-स्तुति के मांह।
बिरचे दीनदयाल गिरि सुमिर राधिकानांह ॥१०॥

—:०:—

७—भगवती-पंचरत्न ॥

कवित्त।

उतपति पालन प्रलय की करनिहारी तुही देवि दासन के दुख की विनासिनी। भजैं देव-मंडलीक मंडली तें आदि तोहि तुही चिदानन्द रूप जग की प्रकासिनी॥ तुहीं दीनद्याल रक्षपाल होति गाढ़े दिन तुही संभु-हृदै-कंज-मंजु की विकासिनी। पावन कै पावन की पादुका छुआय मोहि दीजै अवलंब अंब विंध्या-चल-वासिनी ॥१॥

तेरे पद-पंकज की रंच रज पाय माय रंक ह्वै निसंक करै तिहूं लोक दान कों। पारावार पान करै पल मैं पिपीलिकाउ मारि डारै स्यार घेरि सिंह बलवान कों॥ पंगु धाय चढ़ै सैल ऊपर उमंग संग मूक ह्वै अचूक करै राग तान गान कों। महिमा विसाल कों कहां लों कहै दीनद्याल करैं तो कृपा तें मूढ़ गूढ कवितान कों ॥२॥

गौरि तेरे तीछन द्वै ईछन निरीछन तें पापी सुर-लोक जाय पाय के विमान कों। वज्र को विदारै खग-नख पैं सुमेरु धारै जीगन छपाय डारै महा तेज भान कों॥ विस्व को रचै जो अति बापुरो मलीन मति दूरि करै छन मैं लै विधि के गुमान कों। महिमा विसाल कों कहां लों कहै दीनद्याल करैं तो कृपा तें मूढ़ गूढ़ कवितान कों ॥३॥

मारतंड मंडल के बीच प्रतिबिंबित ह्वै तिहूँ लोक तम कों प्रकास करि हरयो है। देवन के हृदै तामरस कों विकास कियो देखि

देखि जाकों खल-दैत बन जरयो है ॥ कै कोटि दीनन के दारिद विदारि डारे दै कुबेर कोसिक कों संपदा सोभ रह्यो है। पहुँचै प्रनाम ताहि दानद्याल देवि तेरे एक पद तेजनैं कितेक काम करयो है ॥ ४ ॥

जा दिन तें जाई नगराय के निकेत जाय वही हेत पाय तासु सेत तन ह्वै गयो। तो जस कों गाय भये सेस सित सारदाऊ धरे ध्यान संभु अवदात गात कों लयो ॥ तेरे मुख-बिंब को परयो है प्रति-बिंब अंक ताहि ते मयंकऊ निसंक गैारि ह्वै छयो। सोई सुनि गैारि गह्यो दैारि पद तेरो जन पाय रूप स्याम मन चहै सुभ्रई भयो ॥ ५ ॥

दोहा।

पंच-रतन जगदंब को विरच्यैा दीनदयाल।
है प्रसाद गुन मैं भरो करो कंठ की माल ॥ १ ॥

—:०:—

८—समस्या-पूरित उपालंभ पंचक ॥

कवित्त।

द्रुपद-सुता की दिसि ताकी वलवीर तुम चीर कों बढ़ाए जित बड़े बड़े बीर सब। बाढ़े दुख दीन भयो दीनद्याल काढ़े आनि गाढ़े गज-राजहि गयो है भखराज जब ॥ जब जब दासन पैं भारी भीर परी आय धीर दै समीर बेग धाय पीर हरी तब। मानो वह बानो गो विहाय नहिं जानो जाय काहे अलसानो है बुढ़ाई तो न आई अब ॥ १ ॥

खंभ तें प्रगटि प्रभु पाल्यो प्रहलाद पन पावन ते पावन करी है मुनि-तीय तब। रावन कों दाँवन कै दले दुख दीनद्याल दासन के हृदय सुहावन किये न कब ॥ बावन को रूप रचि सची मनभावन कों राज दै विराजमान करे साज सजे सब। मानो वह बानो गो विहाय नहिं जानो जाय काहे अलसानो है बुढ़ाई तो न आई अब ॥ २ ॥

धूँ धरि निहारि धारि काँपैं धराधर कों धाराधर धार तें बचाए गोपी

ग्वाल सब। व्याल विकराल कौं विहाल कियो नंदलाल हरी ज्वालं माल देर करी न गुपाल तब॥ दीन के दयाल ततकाल दीन दासन कौं धीर दै उबारी भीम भारी भीर परी जब। मानो वह वानो गो विहाय नहिं जानों जाय काहे अलसानो है बुढ़ाई तो न आई अब॥ ३॥

तोरि कै पिनाक कौं मनाक तें तुलौं निसाँक नाक वीर ताकी राखी साखी सुर-सभा सब। बालि को विसाल दाप दले ताल बेधि आप कियो है सुकंठ कौं नृपाल दै प्रताप नव॥ सजे सेत-बंध कृपासिंधु सिंधु मैं सुहाए दीन-बंधु बिरद बढ़ाए सुनि दीन रव। मानो वह वानो गो विहाय नहिं जानो जाय काहे अलसानो है बुढ़ाई तो न आई अब॥ ४॥

काजे सरनागत के सिकता ते तेल साजे सेवक-समूह कौं निवाजे कै अनेक ढव। तारिए सवेर हरि कीजै हेर फेर नाहि घिसो घोर घरे कितै रहे हो दिलेर दव॥ मेरी वेर देर कहा दीनदयाल दीन जेर दीन टेर सुने मोन आपकौं न तो न फव। मानो वह बानो गो विहाय नहिं जानो जाय काहे अलसानो है बुढ़ाई तो न आई अब॥ ५॥

दोहा।

उपालंभ-रतनावली विरची दीनदयाल।
किये कंठ सोभा करे रीझैं राम कृपाल॥१॥

—:०:—

८—विवेक-पंचक॥

कवित्त।

सुमति सुपट रानी जाहि जग मैं बखानी सोई सुखदानी के सहित मुद पायो है। मुदितादि चारि परिचारिका विचारिए जू साथ सहचरी सरधा को गन गायो है॥ साँति है सहेली दीनदयाल अति अंतरंग ताहि संग ह्वै उमंग अंग को बढ़ायो है। देत अभैदान जासु गान करैं हैं सुजान जान उर-पुर सों विवेक भूप आयो है॥ १॥

सम दम आदि जासु सचिव महा-प्रवीन दीनद्याल जाके बल मोह डरपायो है। बीरन को नायक सहायक वरूथिनी को अनुज विराग वर अग्रनी बनायो है॥ लोभ को विनासकारी भारी अति-रथी तोष धर्म-हितकारी करि कंठ सों लगायो है। देत अभैदान जासु गान करै हैं सुजान जान उर-पुर सों विवेक भूप आयो है ॥२॥

सेना सुभ वासना उपासना सनाह सजैं बजै राम-नाम डंक सो अति सुहायो है। सेनापति वस्तु को विचार मार की अराति ज्ञान राज को कुमार व्यूह साजि ल्यायो है॥ संजमादि बीर धीर राजत दयाल दीह जिन्ह को विसाल तेज तिहूँ काल छायो है। देत अभैदान जासु गान करैं हैं सुजान जान उर पुर सों विवेक भूप आयो है ॥ ३ ॥

प्रेम है हरोल आगे आवन सबन के जू भागे छल यूथ सील बल सों भगायो है। छड़ीदार ह्वै उदार दौरैं सतसंग-रूप भूप सिर चौरैं सत-गुन ने डुलायो है॥ सजैं दीनद्याल सुभ केतु सदाचार चारु वंदी वर सद ग्रंथ जासु जस गायो है। देत अभैदान जासु गान करैं हैं सुजान जान उर पुर सों विवेक भूप आयो है ॥ ४ ॥

छिमा करवाल है विसाल धीर कर बीच बरनै दयाल कोप नीच कों नसायो है। ऊँचे सुर बोलत नक़ीब हैं हितोपदेस देस देस में विजय सँदेस कों सुनायो है॥ बाजति सु नौबति सकल जाम सत्य वानी मुक्ति राजधानी पद प्रभु प्रति पायो है। देत अभैदान जासु गान करैं है सुजोन जान उर पुर सों वियेक भूप आयो है ॥ ५ ॥

दोहा।

यह वैराग्य दिनेस को सुखप्रद प्रथम प्रकास।
विरच्यो दीनदयाल गिरि ज्ञान-सुवनज विकास ॥ १ ॥

—:०:—

द्वितीय प्रकास ।

कवित्त ।

रंच हू न धरे धीर उठै रोय पाय पीर ढके चीर पिये छीर पागि लागि छतियाँ । चलै किलकारैं चूइ चूइ परैं लोल लारैं लोग हूं निहारैं भई दूइ दूइ दूतियाँ ॥ भयो सो कुमार तबै ह्वै गयो लटू लटू चकई लै चकई लौं धावै दिन रतियाँ । जहाँ तहाँ ठनै ठाँन खेल मैं अजान महा तहाँ तहाँ बूझि परैं ज्ञान-ध्यान-बतियाँ ॥१॥

तिनका समान ज्ञान-ध्यान उड़े फिरैं भूमैं धूमैं मन पथी पंच-बान तम घोर मैं । पात से उड़ात हैं बिराग त्याग तासु माहिँ सुनी परैं नाहिँ दीन बात ताहि सोर मैं ॥ धूँम धाम मची खची धुंध धूरि राजस की भूलि जात प्रेम-पंथ नेम ताहि ठोर मैं । चहूँ ओर काय-तरु झूमैं थहराय जोर कछु न लखाय जुवा-बायु के झकोर मैं ॥२॥

सजैं ठोर ठोर कामना कतार तारन की काम-कोह धूतभाव भूत भ्रमैं भाँति भाँति । करैं मद-मान के उलूक कूक तामस मै रही मुँह मूँदि ज्ञान-ध्यान पुंडरीक पाँति ॥ मिलै चित चकवान रंच छमा-चकई सों फिरैं बिखै घोर चोर लालच के बीच माँति । खोज कहूँ लहै ना बिचित्र मित्र माधव को जुवा-जामिनी मैं जगैं जोमैं जुगनू जमाति ॥३॥

बालपनो सपनो ह्वै गयो राम कों न चह्यो रह्यो चपलाई माहिँ गह्यो नाहिँ तिस मैं । जीवन के जोर बढ़ी मद की झकोर घोर जप्यो नाहिं तप्यो बिषै ताप के तपिस मैं ॥ मेरो धन मेरो धाम रोयो कहि सब जाम खोयो हरिनाम सोयो बाम-संग निस मैं । मालिस करत अंग बालिस कुसंग गहि सालिस भयो न अजों चालिस बरिस मैं ॥४॥

कैसे कुच पीन नैन मीन बैन वे प्रवीन छीन कटि केहरि सी-

कैसी गर्ज-गामिनी। अलप उमंग मैं अनंग-रंग-राती राजै चेरी बहुतेरी संग मेरी सजै कामिनी ॥ तजि तन घन को सपन सी कहूँ न लही जाति रही छन मैं दमकि जुवा-दामिनी। जौलौं करै गौर मन भौर बिषै बारिज मैं आई दौर तौ लौं यह जरा-जौर-जामिनी ॥५॥

पिघलि गई है कठिनाई पीनताई अंग आई दीनताई मलिनाई काढि मन तैं। रोगन की बाय कौं बहाई सोग फूंकनि सौं बिलगि रूप गयो रंग तन तैं॥ मिटी है सफाई सनमान हूँ बिदाई पाई कीमति नसाई लघु गनो जात जन तैं। समय-सुनार ने तपाई है बुढ़ाई-आगि कलई जुवा की भागि गई ताहि छन तैं ॥६॥

गई चपलाई चारु चपला चमक चलि मद इन्द्रचापहूँ की लालिमा नसाई है। दूरि भई भाई काम-कामना की काई सनै सनै पथी इन्द्रीगति समति सिधाई है॥ लखिए अपार लोभ-लालच अकार नए सोक मोह तारन की अवली सुहाई है। घटा जोबनाई कौं उड़ाई चहुँ घांई केस-कासि उतराई आई सरद बुढ़ाई है ॥७॥

द्विजन की पाती हैं कँपाती ताप-भीति पाय जीवन सुखाय दुख की दवागि लाई है। आस-मृगबारि भ्रमै प्यासा मन ह्वै कुरंग मुख-सरसीरुह की सुखमा सुखाई है॥ जाती बर वेला जपा नाहिँ यहि औसर मैं आमय अनेक आक-अवली सुहाई है। मित्र-दुखदाई बात चलैं चहुँ घाईं घोर किधौं यह ग्रीषम कै भीषम बुढ़ाई है ॥८॥

गति गजराज को समाज दलि मलि डार्‌यो कटि-मृग-राजहि झपटि कै गरासें हैं। नाभि कूप त्रिवली-तरंगिनी विनासि कुच-कनक कँगूरनि पसायो जौन खासे हैं॥ काम की कमान भौंह तीछन कटाछ बान नासवान किए सब अजब तमासे हैं। अबला कहत भला कहो मरा कैसे यह याकी कलावली बीर विपुल विनासे हैं ॥९॥

मरदि मदन भूप हर्‌यो है अनूप रूप धाम सुबरन छीनि धूम

धाम कीनो है। विद्रुम अधर दंत हीरक कपोल गोल मुकुर अमोल को सरोस करि छीनो है।। कंधर वृषभ नैन मृग को कियो है मंद लूट्यो गति को गयंद फंद डारि पीनो है। अबला जरा की कला अहो चाँदनी जगाय जोवन-बजार को उजारि लूटि लीन्हो है ॥१०॥

किधौं यह नाहरी अहार किए जाय पलमति को डराय गज गति को नसाई है। किधौं है हिमंत रितु दंत नहि लायो आप अंग सुकुचाय चाय अधिक कपाई है।। किधौं डाकिनी है ग्रस्यो तोष धीर बालनि को किधौं यह धुनी जुबा बल्लरी बहाई है। किधौं मलिनाई छाई तन के तड़ाग काई किधौं यह आई दुखदाई जराताई है ॥११॥

बेसहि बदलि केस चोरन चुराई छवि बाँधे गये हैं कपोल दीन त्रिवलीन सों। लखि कै अनीति द्विज सभा भयभीति भई भागि गई सनै सनै मन कै मलीन सों।। पायो पंचसाखा बान नाहक प्रचंड दंड ता छन तैं ह्वै गयो विचारो बलहीन सो। येरे जीव पथी जागि रागि हरि हाकिम सों काहे इत पागि रह्यो नींद मैं अधीन सो ॥१२॥

अंग सुकुचान लागे लागे मुरझान रंग संग जान लागे केहि के उमंग पागे तूँ। प्रान अकुलान लागे बधिरान कान नैन तिमिरान लागे देखत न आगे तूँ।। भागे भरि जन्म बूढ़ त्यागे करुनानिधान जैहै जमपुरी दिना दोय होय नागे तूँ। नागे नहि एक बार बार तो पकान लागे अजहूँ अभागे नहि राम रंग राँगे तूँ ॥ १३ ॥

भोग न पयाना ठाना लोगन दिवाना जाना नाना विधि रोगन की अबली गजति है। आजु कालि बीच यह सालि खेत कटो चहै जम की जमातिन मैं नौबति बजति है।। अरि हूँ न त्रास करै सेत केस पास वेस काल की कपास धास पास ज्यों सजति है। हाड घट अनुरूप सीस की दसा कुरूप जानि ज्यों चमार कूप जुवती तजति है ॥ १४ ॥

भयो दिन को मयंक संक करैं सब कोन फँस्यो जरा पंक अंक

लंक अतिं हीं नई। चल न सकै न चाल लागे दुख दैन वाल वैन लटपटे भए नैन अंधता छई॥ श्रात हूँ न सुनै बात बूत के नसात समै पूत जमदूत भये वामा वाम ह्वै गई॥ अज हूँ न हेत करै हरि सों हरामखोर मोर मोर ररै घोर ममता छई भई॥१५॥

जोबन जलूस फूस लाये लों नसाय कहा पाप समुदाय मान माते सान धरि कै। भूलि रह्यो ललना के लोल प्रेम पलना मैं फूलि रह्यो नीच कौनि भूलि बीच परि कै॥ पल मैं चपल प्रान पथिक निसरि जैहै जैसे जलजात पर जल जात ढरि कै। चेत अभिराम नाम तेरो कामतरु जानि वसु जाम धन धाम धोख करि कै॥१६॥

गौन कियो नाहि रमारौन मग द्वै हूँ डग रम्यो देस देस ठग प्रेम धारि धन तैं। गई केस स्यामता न स्याम सों भयो सनेह स्वान के समान छयो मान गेह जन तैं॥ नै गयो कमान लों कलेवर तो बीच ही पै तूँ न नयो मान छाँड़ि माधव सों मन तैं। काम मैं भुलायो काम-तरु को न नाम गायो कौन काम आयो न बनायो नर तन तैं॥१७॥

तेरो है न कोऊ इत डेरो कित करै एक निसि को बसेरो है सराय मैं न पागि रे। साथ लै सुसंग गौन आतुर सों चातुर ह्वै चलिवो है दूर देस राहै अनुरागि रे॥ राखि यह ठौर निज धन को सजग होय चोर चहु ओर रहे लैन लोभ लागि रे। सोर लायो खगन गई है घोर रैन बीति सोवै क्यों बटोही अब भोर भयो जागि रे॥१८॥

रजनी अँधेरी है न सूझति हथेरी रंच चोर करैं फेरी लखि मुख ना लुकोवै तूँ। मारिहैं प्रचारि फाँस डारिये दुखद अति गति को सम्हारि सति पीछे करि रोवै तूँ॥ करै नहिं हेला अब गढी ढंही ठौर ठौर घोर यह बेला कहु काहि ओर जोवै तूँ। अरे पाहरू डरु प्रपंची नींद पागि पागि औरन सो जागि जागि कहै आप सोवै तूँ॥१६॥

जिनके उदंड दंड डरैं बरबंड बीर अमल अखंड खंड नवो

दीप सात रे। भाँवरी भरत भारी भूप भूमि मंडल के भीति मीनि भली भाँति भाव सों प्रभात रे॥ जाकी धूम धाम मची सची नाँहि धाम हूँ लौं भए पची मीच माँह सोऊ न लखात रे। दलके अपार गज हलके हजार गये पलके मँझार यार तेरी कहा बात रे॥ २०॥

भानु से प्रताप जसचंद से अमंद जाके गिने जात डील बड़े दान-सील दानी मैं। सात हूँ समुद जासु रथ की लकीरन मैं बोरन मैं धीर महा सिरमौर मानी मैं॥ सुन्दर अतन से जतन कै बनाए बिधि गये वेर तन लों लखाय जग खानी मैं। गड़े मीच धुनी कीच बीच बड़े बड़े गुनी सुनी जाति बात ताकी अब तो कहानी मैं॥ २१॥

बड़े बड़े भूप जो सलोने रूप हे अनूप चर्‍यौ ताहि जाको जस सोम सो विसाल है। रैन दिन दंतन सों और जीव चने चभै माया मुख जासु मोह रसना प्रवाल है॥ अछक छकै न पिये जाय आप आसव कों झूँमि झूँमि धरै पाय करै नैन लाल है। जाते हैं न साते ना लखाते ये बिहाल हाल काल मदमाते की गजक जगजाल है॥ २२॥

तात मात भ्रात सुत प्रिया प्रिय के सँघात जात ए नसात फेरि मिलिहैं न हेर पैं। दिना चारि की बहारि है जग बजार यार भयो छन संग जथा पथी पथ बेरे पैं॥ फौजन की भीर भार देखि कै अपार धन भूलै न गँवार यह जरदार डेरे पैं। येरे मन मेरे टेरे चेत तूँ सबेरे राम चेरे जम केरे करै फेरे सीस तेरे पैं॥ २३॥

सज तन सीव साज बढ़ो सैन को समाज चढ़ो गजराज राज लियो है अनीति कै। भूल्यो धाम बीच कूर फूल्यो दाम के गरूर भूल्यो काम पलना मैं ललना सों प्रीति कै॥ मानुष जनम पाय जान्यो नहि जदुराय जोवन रतन डारि हारि गयो जीति कै। भीनो रूप रंग चाहि दीनो मन विषै माहि कीन्हो कछु नाहिँ गयो योंही दिन बीति कै॥ २४॥

लोग सब गेह के प्रवीन हैं अपानी घाईं देह जुवाताईं नयो नयो नेह जोरिहैं । जाहिंगे मसान लगि लोक लाज संग तेरो फेर फिरि आय तेरी गठरी टटोरिहैं ॥ भूलि न गँवार इनकेरे इतबार मानि बार बार तोहि भव-वारिधि मैं बोरिहैं । भारी हितकारी भजु रास के विहारी खास बँध्यो जासु माया सोई आसु पासु छोरिहैं ॥ २५ ॥

यह बैरागदिनेस को सुखप्रद दुतिय प्रकास ।
विरच्यो दीनदयाल गिरि ज्ञान सुबनज विकास ॥१॥

—:०:—

तृतीय प्रकास ।

प्रीति मति अतिसैं तू काहू सन करै मीत भले कै प्रतीति मानि प्रीति दुख मूल है । जामैं सुख रंच है बिसाल जाल दुख ही को लूटि औं बतौरन की बरछी की हूल है ॥ सुनि लै एकादस मै कान दै कपोतकथा जाते मिटि जाय महामोह मई सूल है । तातें करि दीन-दयाल प्रीति नंदलाल संग जग को संबंध सबै सेमल को फूल है ॥१॥

काहू की न प्रीति दिढ तेरे संग हे रे मन कासों हठि प्रेम करि पचि पचि मरै है । ये तो जग के हैं सब लोग ठगरूप मीत मीठे बैन मोदक पै क्यों प्रतीति करै है ॥ मारिहै प्रपंच बन बीच दगा फाँस डारि काहे मतिमंद मोहि दुख फंद परै है । प्रेम तूँ लगाउ सुख-धाम घनस्याम सों जो नाम के लिये ते ताप पाप कोटि हरै है ॥२॥

वारि के विलूलन की सेज रचि कौन सोयो ओस कन पियें हिए कौन तोस पायो है । ओढि मकरी को पट सीत कौं निवारगो कौन भेटि सरनागति मैं भय को भगायो है ॥ त्योंही जगजीवन को आसरो है झठो सब ओछन सों प्रीति लाय को को सुख पायो है । तातें तजिए दयाल वृथा जग मोह जाल भजिए गुपाललाल जाहि वेद गायो है ॥ ३ ॥

ये रे मन मीन तोहि प्रीति की सुरीति कहों तहाँ प्रीति कीजै

जहाँ होय न वियोग है। दिनै दिन बाढत आनन्द को प्रवाह महा जाके परिनाम में न मिलै दुख सोग है ॥ साचो सो सनेह थिर स्याम को सराहैं सुधी और जग प्रीति वृथा सती कैसो भोग है। सदा काल एकरस पूरन गुपाललाल तासों हठि दीनद्याल प्रीति कीजै जोग है ॥ ४ ॥

जननी जनक गये तेरे सुनि तात जहाँ तहाँ दिना द्वै मैं हलि तैहूँ चलि जावैगो। पूत कलबूत से रहैंगे सब ठाढ़े तब कछू न चलैगी जब दूत धरि पावैगो ॥ देखि कै विसाल विभौ भूलै जनि दीन-द्याल अवहीं सम्हाल नहीं पीछे पछितावैगो। चेत हरि नाम संग सबही निकाम अंत राम बिनु तेरे नहि काम कोऊ आवैगो ॥ ५ ॥

धाम आम खास मैं मुकाम मानि एक साम फेरि यह ठाम जानि सुपनो ह्वै जावैगो। भाई अभिराम भाम भूषित ललाम सजैं बजैं हैं दमाम सबै ग्राम जस गावैगो ॥ देखि दीनद्याल दाम एतो इत माम कहा बाम होय चलै चलै चाल धूर मैं समावैगो। चेत हरि नाम संग सबही निकाम अंत राम बिनु तेरे नहिँ काम कोऊ आवैगो ॥६॥

खेलन मैं ख्वारी करि डारी लरिकापन वै सुधि न सम्हारी दीनद्याल हितकारी है। जोवन सुमनिहारी नारी के अधीन होय भारी मद मान माते कछू न विचारी है ॥ इंद्रिन की सारि छवि जरा ने विगारी आनि देखि तूँ निहारी जग जीवो दिन चारी है। प्यारी हरि प्रीति धरि सुमति सुधारी क्यों न धारि गिरिधारी कहाँ मंदमति धारी है ॥ ७ ॥

देखिवो चहै तो दुति देखि नंदनंदन की बंदन चहै तो बंदि बंदि छोरि ध्यान मैं। सुनिवो चहै तो सुनि मुरली की मंद ध्वनि मोहन चहै तो मोहि मोहन नैनान मैं ॥ डोलन चहै तो डोलि कुंडलीक डोलन मैं बसिवो चहै तो बसि वारिज-प्रदान मैं। गावन चहै तो गिरि-धारी गुन गाय मन पावन ह्वै जातैं नर जनम जहान मैं ॥ ८ ॥

पावन था देह पाय दीनद्याल मलोदाय गोविंद को गुन गाय जाते भव तरैगो। सुन्दर तड़ाग बाग औधन सदन हूँ सों होयगो वियोग भोग कब लौं तू करैगो ॥ ये सब बहुरि हेरि सुपने की मोहै मति इनके लै संसकार हिये माहिँ मरैगो। देखि लै बिचारि मुख बाय रह्यो काल-ग्राह कीट औ भुजंग भूत अंत होन परैगो ॥ ९ ॥

चूकत तूँ आयो बहु काल जाल मैं भ्रमायो रह्यो भ्रम भौर चल्यो कछु न उपाव रे। बार बार भौनिधि मैं भयो काल ग्राह ग्रास अजहूँ लों तोपै मुख रह्यो वाय बावरे ॥ अब नर चिंतामनि जन्म पाय चूकै जनि अब के तो चूकै फिरि मिलैगो न दाव रे। ताते जग सिन्धु तरि स्यामै वसु जामैं धरि प्रेम पतवारी हरि नामै करि नाव रे ॥ १० ॥

रथ है विचित्र काय चक्र पाप पुन्य चाय इँद्रीगन आतुरायं ज्यों तुरंग धायो है। मन तो है रज्जु रूप मति सारथी अनूप रथी जहाँ जीव भूप सुन्दर सुहायो है ॥ प्रेरयो मग मोह माहिँ विषै ठग रूप पाहिँ मारि जग कूप ताहि अंध मैं छपायो है। तहाँ एक दीनधाल रच्छपाल नन्दलाल सुमिरयो जो ताहि काल ताहि कों बचायो है ॥ ११ ॥

कामिनि की हाँसी दिठ फाँसी मति फँसै मीत मारि है फँसाय कै बड़ाई ठग मैन है। मरे हैं अनेक परे लोटत नरक बीच ताहू पै कहत हमैं बडो सुख चैन है ॥ अहो मोह महिमा न जानी जग जाति कछू देखि दहैं दँव दुख मैं न सुने साधु बैन है। त्यागि जग जाल तूँ गुपाल भजि दीनद्याल चार दिना चाँदनी अँधेरी पुनि रैन है ॥ १२ ॥

तेरे नहिँ कोऊ हित हेरे मन मूढ़ मानि तेरे नहिँ सुंन्दर ए चामीकर ऐन हैं। तेरे नहिँ राज काज कै समाज वादि सबै तेरी नहि संगी चतुरंगी यह सैन हैं ॥ तेरे सनबंधी सब बीछू बाल के मिसाल तोहि को भखैंगे कहि तोतें मृदु बैन हैं। त्यागि जग जालहि गुपाल भजि दीनद्याल चारि दिना चाँदनी अँधेरी पुनि रैन है ॥ १३ ॥

आयो बहु माल औ खजानें निज घर तें लै भयो अब चोर रह्यों बड़ो साहुकारा है। निज के करम हीन हुआ विषै जुआ बीच खोयो सब धनै नीच बनिकै बिगारा है॥ चेत अजौं आपनो विसाल देस दीनदयाल इतै तो बिचारि दिना चारि को गुजारा है। मालऊ बिकाना है पयाना किये साथिन हूँ उजरो बजार चलो लादि बनिजारा है॥१४॥

धरे रहे धरा माँहि लाखन खजाने खैंचि जाने नहि जाहिँ जासु धन को सुमारा है। धरे रहे राज काज के समाज साज सजे बाजि गजराज रहे गाजत अपारा है॥ तात मात भ्रात तनै अंगना हूँ तज्यो अंग कोऊ नहिँ संग रह्यो एक ही बिचारा है। मालऊ बिकाना है पयाना किये साथिन हूँ उजरो बजार चलो लादि बनि-जारा है॥१५॥

[कालगति बर्णन]

भूप थे अनूप जहाँ नगरी गरीय रूप गरजैं हैं गजराज जिनमैं विसाल है। गए दिना चारि के उजारि ह्वै भयो अरन्य कूक दैं अभै भये उलूक औ सृगाल हैं॥ कानन तें भयो खेत खेती तित करैं लोग वही फेरि नदी प्रेत देत जहाँ ताल हैं। जानी नहिं जाति कालगति अति ही विसाल या जग के ख्याल इन्द्रजाल के मिसाल हैं॥ १६॥

देखे जहाँ केते जन एक ही सदन माहिं बीते कछु काल तहाँ रह्यो एक नर है। एक ते अनेक फेरि भए कछु दिना गये फेरि एक कहूँ न रह्यो पीछे तेहि घर है॥ बाजीगर कैसो ख्याल जग को लखो विसाल काल ही उताल तो नचावै चराचर है। चेत रे अचेत चेत श्रीनिकेत तातें अब हेत कै सबेरो सोई तेरो दुखहर है॥ १७॥

सुन्दर जवाहर ते मन्दिर जडास जिन अन्दर मैं जगैं जोति जाकी जनु दामिनी। सामुहैं सुचन्दमुखी मंद मंद नाचति हीं तात थई तातथई कै कै गज-गामिनी॥ कंकन मंजीर धुनि धीर मन हरै

जहाँ ताल के कूतूहल मैं जाति हूती जामिनी। ताहि ठौर दीनद्याल देखे कछु गये काल कूक देत फिरिहै उलूक भूत भामिनी ॥१८॥

भनै दीनद्याल जहाँ भारी भूमिपाल रहे मंदर पुरंदर लों सुन्दर विसाल हैं। अन्दर मृदंग धुधुकारन की धीर धुनि सजैं चन्दमुखी राग रंग जे रसाल हैं॥ बाहर धुरंधर समूह धराधीस बड़े जोरे कर खड़े रहे लीने नग लाल हैं। तहाँ अहो तासु ख्याल देखे कछ गये काल रोवैं विकराल हाल स्यालन की बाल है॥ १६॥

सुन्दर तड़ाग बाग मंदिर बनाए बहु बसुधा सिँगारे जस भारे करि करि कै। मारे तरवार तें हजार जिन वीर धीर हाथिन के हौदन बिदारे दरि दरि कै॥ लूटि लूटि बैरिन के धन कों धरा मै धरे करे सिलसिले किले कोट भरि भरि कै। सानवान बलवान जानिए जहान बीच जात भे समान की कुसान जरि जरि कै॥ २०॥

आपने प्रचण्ड भुज-दण्डन के विक्रम तें खण्डन किये है बल-वण्ड आँनि जे लरे। रिपु गजराज जे उदण्ड दण्ड तिन्है दिये मारतण्ड लौं प्रताप दीनद्याल जे करे॥ जस के अखण्ड महि मण्डल अखण्डल से कोटि गढ़ लूटि धन दाबि धरा में धरे। तेई अब बीर धीर देखिए जरापन मैं ठाढ़ ह्वै रह्यो सरीर झखैं खाट पैं परे॥ २१॥

देखे जिन्हैं ठाढे ह्वै अखाड़े बीच देत ताल नाल को उठावैं ह्वै उताल चूमि चूमि कैं। मण्डिकै प्रचण्ड भुजदण्ड रज करे दण्ड लरे बलवण्ड मल्लहूँ ते हूँमि हूँमि कै॥ धरि कै सरीर मनो वीर रस ह्वै विसाल चले जे महा मतङ्ग चाल भूमि भूमि कै। हाय दई देखे तिन्हैं गये कछु दिना बीति देत पाय गिरे परैं भूमि घूमि घूमि कै २२॥

जासु सीस पैं महीस चमर करैं हैं छजे अमर समान सजे सीस महलान मैं। जगैं जगमगित जवाहर जराय जोति जैसी ही मुकट प्रभा तैसी नहिं भान मैं॥ कुसुम कली सुरुली गुथी हुती भली भाँति वारैं कवि काम अली जाहि अलकान मैं। देखो दीनद्याल

ता कपाल कों शृगाल श्वान खेलत चौगान हैं मसान की दिसान मैं ॥ २३ ॥

झूमत मतङ्ग कोटि जिनके जंजीर जरे घूमत तुरङ्ग रहे तीखे हहनाय कै। गरजैं गँभीर गिरा वीर धीर व्यूह द्वार तरजै हैं आसमान मानो बल पाय कै॥ चपला सी चमकैं कृपान, कुँत चहूँ ओर धमकैं भुसुण्डिन के झुण्ड झहनाय कै। जाहि दीनद्याल ए विसाल हे प्रताप ताहि लै गयो कराल काल चीलह सो उठाय कै॥ २४ ॥

बनि कै भूपाल जे विसाल सुखपाल चढ़े चले दुहु ओर सोर नौबति के बोल ते। बढ़े जाय यों नकीब करिकै पुकार कहैं छरीदार ह्वै उदार दौरैं गति लोल ते॥ नीके रमनी के सनमान तें भरे उमङ्ग रङ्ग महलान बीच रहे जे कलोल ते। तिन्हैं दीनद्याल अहो देखे कछु गये काल दीन ह्वै गलीन मैं मलीन भए डोलते॥ २५ ॥

रावन से वीर घन सावन लौं प्रभा जासु झलकैं किरीट बिज्जु अलकै की घेरी मैं। जिनकी गिरा गँभीर गरज सुने ते धीर नाचतहीं किन्नरी मयूरी चहुँ फेरी मैं॥ कैसी रन कला रहे दीनद्याल वे प्रवीन वरषैं अपार सरधार एक बेरी मैं। ऐसे जग व्योम बीच जडिकै कई विसाल गये उड़िकै कराल काल की अँधेरी मैं॥ २६ ॥

दाता को महीप मान धाता औ दिलीप ऐसे जाके जस अजहूँ लौं दीप दीप छाये हैं। बाली ऐसे बलवान कौन भे जहान बीच रावन समान को प्रतापी जग जाए हैं॥ बान की कलान मैं सुजान द्रोन पारथ से जाके गुन दीनद्याल भारत में गाये हैं। कैसे कैसे सूर रचे चातुरे विरंच पूर फेरि चकचूर करि धूर मैं मिलाये हैं॥ २७ ॥

सवैया।

जिनकी गति मन्द विलोकत हीं अति मत्त बिलन्द गयन्द लजाये।
जिन जङ्गनि तें कदली कमनीय किए विफली जग मैं जस पाये॥

जिनकी कटि तें कटि केहरि की घटि होति दिए उपमा कवि भाये ।
तिनकों निरखे दिन चारि गये छिन मैं चकचूर ह्वै धूर समाये ॥२८॥
जिनकी भृकुटी अभिराम सजी धनु वाम है ज्यों भट काम चढ़ाये ।
जिनके दृग घायक सायक से रतिनायक मानहु सान सजाये ॥
जिनकी वर वंक विलोकनि तें बसि ह्वै बुध बीर विराग बिहाये ।
तिनको निरखे दिन चारि गये छिन मैं चकचूर ह्वै धूर समाये ॥२९॥
जिनके अधरान तें बिम्ब लजे अरु विद्रुमहूँ द्रुमता पद पाये ।
जिनकी मुसकानि बड़ी सुखदानि करैं कुलकानि विदा मुद आये ॥
जिनके रद की दुति देखत ही मद कों तजि हीरक कुन्द लजाये ।
तिनको निरखे दिन चारि गये छिन मैं चकचूर ह्वै धूर समाये ॥ ३० ॥
जिनकी भृकुटी भट कोटि लखैं भले भूप रखैं मरजी मन लाये ।
छवि चन्द की मन्द लगै जस तें रवि हूँ छबि जात प्रताप लखाये ॥
जिनके गुन गावत वन्दिन के गन सन्मुख ह्वै धन लाखन पाये ।
तिनको निरखे दिन चारि गये छिन मैं चकचूर ह्वै धूर समाये ॥ ३१ ॥
जिनके मृदु बैन सुने पिक मैन ठगे चित बैन न जे सुनि पाये ।
छलकैं छवि पुञ्ज छजैं अलकैं झलकैं कल कुण्डल श्रौन सुहाये ॥
जिनके मुख निन्दत हे अरविन्दहि मन्द करैं छवि छाये ।
तिनको निरखे दिन चारि गये छिन मैं चकचूर ह्वै धूर समाये ॥ ३२ ॥

छप्पै ।

जड़ित नील मनि जासु वगर सुन्दर चामीकर ।
नगर परम रमनीय सुथर सुरलोकहुँ तें वर ॥
राजैं राज सुसाज बाढि गजराजि गरज्जति ।
सेवैं जुवति समाज जिन्हें लखि रति अति लज्जति ॥
निति भूप कोटि भृकुटी लखत रहैं निकट जेहि निपट डरि ।
तिनको धरि व्याल विसाल जिमि लियो काल इक कौर करि ॥३३॥

सहसभुजहुँ दससीस खीस ह्वै गये सहित कुल ।
सगर दधीचि दिलीप दीप से भूप भये गुल ॥
जादव छप्पन कोटि बिकट भट कौरव पाँडव ।
लै सब साज समाज गये दिन द्वै करि तांडव ॥
नहि थिर कोउ दीनदयाल गिरि रहत नाट पर चर अचर ।
यह तातें त्यागि कुतर्क भजि सूत्रधार नटवरहिं नर ॥३४॥

संबन्धी दिन द्वै दिखाय जैहैं ज्यों घनपट ।
जैहै तन तरु नीच मीच नटिनी तटिनी तट ॥
नहि रइहै ठहराय आय चल लाय धुआँ की ।
जुवा खुसी छन जाय सपन ज्यों जीति जुआ की ॥
यह झूठो दृश्य प्रपञ्च है लखि नट नाट समाज तजि ।
निज घट मैं दीनदयाल गिरि कपट त्यागि नटवरहिं भजि ॥३५॥

करन चहै जो कालि काज सो आज करै किन ।
करि विचार तूँ देख नहीं मिलिहै ऐसो दिन ॥
समै.स्वास जे जात बहुरि तेती नहि आवत ।
औसर भए बितीत मीत रहिहै पछतावत ॥
सुनि हे नर चतुर चूक जनि ह्वै सुचेत आलस्य तजि ।
अब प्रथमै दीनदयाल गिरि त्याग फन्द गोबिंद भजि ॥३६॥

अमल कमल दल नैन मैन अरि जिन्हैं न भावत ।
नन्द नन्द आनन्दकन्द गोविन्द न गावत ॥
दया धरम शुभ करम सील समता नहिं आई ।
प्रीति प्रतीति सुरीति नीति नहिं सज्जनताई ॥
हिय ह्वै उमङ्ग सतसङ्ग जे विषय रङ्ग तजि नहिं चहैं ।
तिनको गुनि दीनदयाल गिरि धुनि मृदङ्ग धिग धिग कहैं ॥३७॥

[प्रमदा दूषण]

कवित्त ।

कहाँ गयो है अनन्दकारी मुख चन्द जाहि करिकै पसन्द रहे पीतम निहाल हैं । कहाँ गई अलकैं जे झलकैं हिए रसाल कहाँ गये बिम्ब लौं जु रहे ओठ लाल हैं ॥ कहां गये दाडिम से दंत कंत मोहन वे कहां गई बाँकी वह भृकुटो विसाल हैं । कवि उपमान कौं मसान मैं कृसान दह्यो बिधि के बिधान कौं विदारत सृगाल हैं ॥३८॥

कहाँ गई केहरी समान कटि कामिनि की दामिनि भाकि तै गईं रहीं जे विसाल हैं । कहाँ गये लोचन सलोने वंक कोने लाल कहाँ गई गर ते वे मोतिन की माल हैं ॥ कहां गई कुंडल की डोलनि कपोलनि तें कहां गई बोलनि वे सुधा सी रसाल हैं । कवि उपमान कौं मसान मैं कृसान दह्यो बिधि के विधान कौं विदारत सृगाल हैं ॥३९॥

कहां गये लोने सोने कुंभ के समान कुच टोने सम करैं सब लोगन विहाल हैं । कहाँ गये कोमल वे लाल पानि पल्लव लों कहाँ गई नख की वे श्रेणी नगजाल हैं ॥ कहाँ गईं जंघ रहीं कदली के जे मिसाल कहाँ गई हैं मराल गज की वे चाल हैं । कवि उपमान कौं मसान मैं कृसान दह्यो बिधि के बिधान कौं विदारत सृगाल हैं ॥४० ॥

कहाँ गयो कंबु औ कपोत से उदोत कंठ पीक लीक नीक जामैं झलकै थी लाल हैं । कहाँ गई नासा जौनि कीरचंचु हाँस करै देखिए तमास वह कहाँ गे जमाल हैं ॥ कहाँ गयो है विसाल भाल ससि के मिसाल कहाँ गये गुथे व्याल बाल कैसे बाल हैं । कवि उपमान कों मसान मैं कृसान दह्यो बिधि के बिधान को विदारत सृगाल हैं ॥४१॥

थूक और खखार को अगार मुख ताकों कहि चंद अरविंद कंद मोहै मतिहीन कों। हाड़ के लसंत दंत दुरगंध के समेत देत उपमान तिन्हें कुंद की कलीन कों ॥ मास के निवास कुच तिन्हें कहैं श्रीफल से कंचन की बेलि कहैं ती-तन मलीन कों। देखत मसान माँहि खाल को विहाल हाल होत नाहिं लाज अहो निलज कवीन कों ॥४२॥

नारी कों विचारो नाहिं प्यारी भई ता नर की ऊपर ही टँगे चाम देखि कै रँगीन कों। जैसे सुक सेमल के रूप कों बिलोकि छल्यो बेर बेर भ्रमै को सिखावै मतिहीन कों ॥ मल अरु मूत को बनौ है कलबूत ताहि धूत चेत देत महा उपमा मलीन कों। देखत मसान नाँहि खाल को बिहाल हाल होत नाहिं लाज अहो निलज कवीन कों ॥४३॥

तीको तन सिंधु घोर मान है तरंग जोर तामै दृग कोर हैं कहर दरियाव रे। बेसर सिकंदर भुजा है तेहि अंदर मैं भूलि भूलि बरजैं जो भूलि जनि आव रे ॥ भौ निधि को दीनदयाल चाहत जो पार हाल तातैं बरकाव क्यों न मनकी तूं नाव रे। जे जे मन गये प्रेरि ते ते नहिं फिरे फेरि हिय मै हीं बूझि हेरि हेरे नर वावरे ॥४४॥

नारी है सिकारी भारी भीषन भौ-वन-चारी मारी बनि प्यारी भट मति को प्रचारि कै। नैन विष सने मैन वान के समान बने भृकुटी कमान वंक मान सों सुधारि कै ॥ घूँघट की ओट छपि छल की चलाय चोट करै लोटपोट एक पल ही मै मारि कै। होय न सिकार तेहि साँमुहैं सम्हार यार कहों मैं हजार बार तोहि पैं पुकारि कै ॥४५॥

सवैया।

लखिहै बिनु तोय तरंग कोऊ बरु सिंधव नाव तें सिंधु तरै।
प्रगटै रवि तें तम की पुतरी बरु ताहि कों ढाँपि प्रकास हरै ॥
वरु मार विराग सनेह सनै कोऊ लोभ अकास को पेट भरै।
विपरीति यहै वरु होहिँ सबै बिनु राम न पूरन काम सरै ॥४६॥

वरु वारिधि खार सुभाव तजै सफरी मिलि छार सोँ प्यार करै ।
सविता वरु सीतल ह्वै कबहूँ ससि तेज विलोकत लोक जरै ॥
कबहूँ रद व्याल ते दीनदयाल पियूष श्रवै सब मीच हरै ।
विपरीति यहै वरु होहिँ सबै बिनु राम न पूरन काम सरै ॥४७॥
वरु आक उदार बनै जग मैँ हरि चंदनहूँ कृपिनाई धरै ।
वरु सिंह को मारि कै स्यार बडो सरदार बनै वनराज करै ॥
सतसंगति पाय कोऊ बिगरै वरु मूढ की संगति तै सुधरै ।
विपरीति यहै वरु होहिँ सबैँ बिनु राम न पूरन काम सरै ॥४८॥
जो प्रहलाद विषाद दह्यो हित कीन्ह निषाद बराबरि कै ।
जो सवरी सबरी तिय तैँ हरि कीनी बरी उबरी तरि कै ॥
जो सुख दीन विभीषन कोँ दुख मेटि विभीषन हो धरि कै ।
सो करुना करि दीनदयालहि पालहिगे अपनो करि कै ॥४९॥
जात सबै जग ते रहि देखत तूँ पतियात न नैन निहारे ।
तोहि को ऐसहिँ एक दिना गहि दूत पठावैंगे जम द्वारे ॥
जायगी भूलि कला सकला सुनि जौँ नहिँ नंदलला हित धारे ।
दीनदयाल गुपाल बिना नहिं है कोऊ या महि मैं रखवारे ॥५०॥
पाइए जू परमातम कोँ यह देह धरे को है काम ही ।
जानत हो सब छूटहिँगे सुदती सुत औ धन धाम सही ॥
सोवै न चोर चहूँ दिसि हैं थिरता नहिं कोऊ सरायल ही ।
दीनदयाल लखो जगि कैं निसि बीती सबै इक जाम रही ॥५१॥

—:०:—

[अलंकार अन्योक्ति]

मालती छंद ।

सुनहु पथिक भारी कुंज लागी दवारी ।
जहं तहं मृग भागे देखिए जात आगे ॥

फिरत कित कित भुलाने पाय ह्वैहैं पिराने ।
सुगम सुपथ जाहू बूझिए क्यों न काहू ॥५२॥
बहुत दिवस बीते गैल मैं तोहि मीते ।
मुख रुख कुँभिलाने बैठि लैया ठिकाने ॥
अहह संग न साथी दूर है देश पाथी ।
निकट थल भलो जू सर्व लै लै चलो जू ॥५३॥
बहुत बिधि दुकानैं हैं लगी तू न जानै ।
बनिक बहु विधान के सोहते रूप जाके ॥
निपुननि रखि लीजै वस्तु मैं चित्त दीजै ।
पथिक नहि ठगावै देखि तूँ रैन आवे ॥५४॥
निपट निसि अँधेरी नाहिं सूझै हथेरी ।
बहु बिधि ठग घेरे मित्र कोऊ न तेरे ॥
पथिक इत न सोवै भूलि वित्तै न खोवै ।
जगत रहि सुचेतैं हौं कहौं तोहि हेतै ॥५५॥

[श्लेष]

अभिनव घन स्यामै ध्याव आभा सु जामैं ।
विसद वकुल माला सोभती हैं विसाला ॥
द्विज गन हरषावैं ध्यान कै मोद पावैं ।
पथिक नयन दीजै ताप को सांत कीजै ॥५६॥

कुंडलिका ।

बीती सोवत सब निसा होन चहै अब भोर ।
पथी चेत करि पंथ को चिरियन लायो सोर ॥
चिरियन लायो सोर देखि चहु ओर घोर वन ।
चोर लगे वरजोर सखे यह ठौर राखि धन ॥
बरनै दीनदयाल न गाफिल ह्वै इत भीती ।

साथो पाथी भए जागि अजहूँ निसि बीती ॥५७॥
हारे भूली गैल मैं गे अति पाय पिराय ।
सुनो पथी अब तो रह्यो थोरो सो दिन आय ॥
थोरो सो दिन आय रहो है संग न साथी ।
या वन हैं चहुँ ओर घोर मतवारे हाथी ॥
बरनै दीनदयाल ग्राम सामीप तिहारे ।
सूधे पथ जों जाहु भूलि भरमो कित हारे ॥५८॥
बोहित वत नर देह है यह भवसिन्धु मँझार ।
प्रभु की कृपा सुपवन जहँ सतगुरु खेवनिहार ॥
सतगुरु खेवनिहार धार ते पार उतारत ।
कोह मोह संद्रोह तोय चर त्रास निवारत ॥
बरनै दीनदयाल न जो यहि साज कियो हित ।
सो रहिहै पथ ताय पाय नरतन सो बोहित ॥५९॥
चिन्तामनि यह जन्म है मानुष को पहिचान ।
ताते आतमज्ञान धन पायो नाहिं अजान ॥
पायो नाहिं अजान स्वान खरवत जग जायो ।
खायो काल प्रहार महा भव मार उठायो ॥
बरनै दीनदयाल नहीं कछु आई है बनि ।
दई गवाइ गँवार जनम मानुष चिन्तामनि ॥६०॥

कवित्त ।

बालपनो सपनो ह्वै गयो लख्यो अपनो ना चेतन-सुरूप भूलि रच्यो रँगे चाम सों । गरब विसाल चाल झूमत चलो है जामै गई तरुनई बीती प्रीति लाय वाम सों ॥ मोह की अंधेरी अजों घेरी कहै मेरी मेरी रहो है निकाम अरु झाय धाम काम सों । चेत रे अचेत चेत काल बली डंक देत भए केस सेत पै न हेत कियो राम सों ॥६१॥

द्वै द्वै घर दीप बारि सोवै परजंक डार खोवै निज मनी करि

प्रीति पर भाम की। भाँति भाँति भूषन कों भूषत हैं अंग अंग लावत हैं तेल औ फुलैल देह चाम की ॥ चेतै नहिं आपको भुलाय पाप बीच अंध बली काल बधिक रह्यो है साधि जाम की। जैहै ध्रुव धूरि चाल या तन तो अंत काल कहैं संत दीनद्याल दै दोहाई राम की ॥६२॥

कुल को धरम त्यागि कुलटा के साथ लागि तासु राग रागि निज खोवै धन धातु है। दै दै अति खेद हनै जीवन को स्वाद हेत सो तो सब हे अचेत पाप लिखि जातु है ॥ तू तो खल संग पाय रह्यो मद मैं भुलाय तातें जम भीम भय भारी न लखातु है। कैसै सुख रंच हाल फेरि ताडना विसाल पीछे तें परैगी जानि जे जेये कुवातु हैं ॥ ६३ ॥

गयो जमराज एक दिना निरै कुंडनि पैं पाप पुंज पीडित ह्वै सोर सो मचायो है। कह्यो जमनायक तूँ धाम काम वह्यो मूढ़ वाम होय रह्यो राम नाम कों न गायो है ॥ हासन विलासन मै कीने बहु पापन को आई नहिं लाज दया जीवन सतायो है। किधौं कील चक्र ज्वाल आए घोर सुने नहिं रह्यो उतपात माहिं कछू ना डरायो है ॥६४॥

उठि कै प्रभातकाल काल निज प्रेरै गन धाओ दिसि दसो कोन प्रभु कों पुकारा है। देखो कौन पाप पुंज जीव सतावत है कौन उपदेश साधु वेदन को टारा है ॥ ल्याओ गहि ताको दंड मारि मारि ताके सिर कहै गिरि दीनद्याल दै करि नगारा है। चीरो धरि आरा बाँधि कारागार डारा करो टेरै जम भारा यह हुकुम हमारा है ॥६५॥

कोऊ कहैं दिनमनि कोऊ तो विराट नैन कोऊ जम तात कहै टेरि बार बार है। मेरे जब दीनद्याल लौनिमेख आदि जुग प्रलै परिजंत जासु दंत को सुमार है ॥ जाहि गतागत मैं अपार जीव नास होहिं सूर जन होय यह कियो मैं विचार है। कारीगर काल कला चातुरी सुधारी भारी आरवल काटिवे कों घोर धार आर है ॥ ६६ ॥

कहा कोसलेस सुख पायो प्रभु तनै पाय कहा सुख दीनो

प्रहलाद जू के तात जू । कहा सुख दिया प्रिया राघव कों दुखी किया को सुख सुकंठै दिया बालि वली भ्रात जू ॥ कहा सुख दीनो धन हेतु भो मथन सिंधु कहा सुख कौरव को दियो राज ख्यात जू । निजानंदकंद बिन लह्यो सुख लेस किन कह्यो सनबंध छिन दुख को संचात जू ॥ ६७ ॥

जैसे निसि तरु पै सजोग होत पच्छिन को जैसे पनिहारिन को कूप पैं संघात है । जैसे पथगामिन के संग नाव पौ सर पैं जैसे रैनि संगम सराय मैं सुहात है ॥ तैसे सनबंधिन को जग मैं समागम है जात भले चले नाहिं कोई विरमात है । ताते तजिए उताल वृथा यह मोह जाल सपन समान छगल तामै क्यों फँसात है ॥ ६८ ॥

जा दिन ते वासना कुनारि विभिचारिन कों आनि देह गेह वीच चित कों लुभायो है । ता दिन ते सांति औ विवेक मातु पितु हूँ कों तोहि ते निरादर दिवाय विलगायो है ॥ संजमादि भ्रात बड़े तोष सखा जे अनूप तिन सों लै वैर रूप अंकुर बढ़ायो है । ताते तजि दीनद्याल तमा तिय कों उताल देखिए कुचाल संग कौन सुख पायो है ॥ ६९ ॥

धीरज जनक जासु जननी छिमा है बनी नारी अति प्यारी सुख पाँति साँति जेकी है । साँच है सपूत पूत भ्रात संजमादि दाया भगिनी गिनी गुनी न गुनि तेकी है ॥ सम दम आदि मंत्री भारी हितकारी तोष वल्लभ विराग संग अति सो विवेकी है । येते ए कुटुम्बिन मैं राजैं मुनि दीनद्याल सुख सो भूपाल समो सोवै भीति केकी है ॥ ७० ॥

चोरी नहिं करै पार नटवर दरबार बार बार तासों छलि बचैगो न जाय कै । सबही जहान तासु नाट को वितान जान राख्यो सचराचर जो नटी सो नचाय कै ॥ सोई नट तेरे घट पट मैं विराजि

रह्यो अंतर बहिर ते सुठाटहि ठठाय कै। ताते अब दीनंद्याल त्यागि फरफंद जाल ताही के पाय नरहि नीके लपटाय कै॥ ७१॥

[विराट वर्णन]

कवित्त।

पद है पताल दिग श्रुति अजधाम भाल वाल घनमाल काल भृकुटी विलास है। नैन मारतंड दिगपाल भुज हैं प्रचंड और लोक अंग मही मास वात स्वास है॥ आनन अनलरूप रसना है वारि भूप वेद बैन हैं अनूप माया मुख हास है। कुच्छ सिन्धु रोम वृच्छ अस्थि सैल नसाजाल नदी दीनधाल यों गुपाल विस्ववास है॥७२॥

भ्रमत चौरासी यह जीव अविनासी परयो माया को भ्रमाया गुनं काल कर्म घेरी मै। सुपन विधान विस्व वंदि साल वीच आनि फस्यो सनबंधिन की प्रीति दिढ वेरी मै॥ भयो दुखी दीन हाल ममता विसाल गहि अद्वय स्वरूप भूलि फस्यो मेरी तेरी मै। भूल्यो निज वलवाँह भूल्यो देह सुख मांह जैसे सिसु सिंह को भुलायो मिलि छेरी मै॥७३॥

लखो भूलि या विसाल उलटी जगत चाल दिग भ्रम सम रहे सबही भ्रमाय कै। आनँद पै लागि विषै आकन को ढूँढत हैं काम-धेनु आतमं कों आपमैं भुलाय कै॥ जैसे निज अंतर मैं मद को कुरंग भूलि हेरत है ताको बन तासु गंध पाय कै। तैसे निज घट मैं बिसारि चितानन्दकन्द खोजै मतिमन्द ताहि ठौर ठौर धाय कै॥७४॥

जैसे गहि सूक हाड़ कूकर चवात जात ता दरेर आवै मुँह लोहू प्रगटायं कै। ताको वह बेर बेर चाटत है स्वाद मानि तासु रस जानि मूढ़ लगो मोद पाय कै॥ तैसे जड़ गोचर तें पावत अनन्द नर चिदा-नन्द चेतन की लेस कौं छवाय कै। जा कन अनन्द तें अनन्द सवै लोक माँहि ताहि नाहि चेतै निज घट मैं भुलाय कै॥ ७५॥

तुहीं रिझवार है वितान तानि रहयो तुहीं तुहीं नट नटी अरु तुहीं तो तमासो है। तुहीं अस्ति भाँति प्रिय रूप है विराजि रह्यो

तेरोई प्रकास सब जग को प्रकासो है ॥ अंतर वहिर बीच तुही है अनन्त भेव तुहीं वासुदेव यह विस्व तव वासो है । सदा निरलेप ओत प्रोत भासमान होत जथा आसमान घट मठ माहिं भासो है ॥७६॥

करम परम जोई धरम बढावत है धरम विसद जो विराग कों दिढ़ावई । भलो सो विराग जो विवेक उपजावत है भलो सो विवेक जौन ज्ञान कों जगावई ॥ भलो सोई ज्ञान मान कियो जो अनन्दवान भलो सो अनन्द जो समाधि साधि ल्यावई । या विधि सों दीनदयाल राख्यो क्रम जो सम्हाल ताहि वली भाँति भली धन्य वेद गावई ॥७७॥

छप्पै ।

को दिसि ते हैं आय धाय चितरूप कलन्दर ।
डारि रज्जु अज्ञान जीव जिन कीनो बन्दर ॥
स्वरग नरक मृतु जन्म ठौर ही ठौर भ्रमायो ।
दै दै दुखहि नचाय त्रास बहु भाय दिखायो ॥
चल सिला दारू मृदु चित्र ढिग जाय नवावत सीस डर ।
यह लखिए दीनदयालगिरि गूढ चरित आचर जतर ॥७८॥

कहूँ राग रंग ताल बाजत मृदंग झाल कहूँ हाय हाय करि रोदन करत हैं । कहूँ मौन साधि साधु आराधत राधावर कहूँ मद-माते खल सोर सों लरत हैं ॥ कहूँ दानसील दान देत नेत हेत करि कहूँ चोर चोरि लेत पाप ना डरत हैं । कहैं दीनद्याल यह लखि अचरज हाल जग के अनन्त ख्याल जाने ना परत हैं ॥ ७९ ॥

एक नर सबै जग जस तें प्रकास करैं एक प्रभाकर ज्यों प्रकासै चराचर हैं । एक नर धरा पर सुर के समान सजैं एक नर फिरैं जथा सूकर गोखर हैं ॥ एक नर मिले मिलैं आनँद अनेक आँनि एक नर देहिं डर दुख के निकर हैं । एक नर वर हैं जवाहर तें दीन-द्याल एक नर ऊसर काँकर तें वतर हैं ॥ ८० ॥

बात ही तें राम ऐसे त्यागे सुत कोसलेस बात तें रमेश द्वार

सेवैं बलिराज कोँ। बात तेँ महेसऊ प्रजेस जा बिसारि दई बात हारि पंडु-तनै तजे राज साज कोँ॥ बात ही बाँधे मद्दि तेँ उतंग खड़े सिन्धु अजहूँ लौं परो विन्ध्य मानि बात लाज कोँ। पालत जो बात बड़ो सोई जग जसी ख्यात बात के छुटे तेँ नर गात कौन काज कोँ॥ ८१॥

द्वारे गज घटा सोर घंदन को चहूँ ओर कीने भट भूप कोटि आपने अधीने तूँ। भीतर अटान पैं छटा सी जगमगै भाँम करी काम-केलि पाय जोबन नवीने तूँ॥ राजन के राजा महराज अधिराज बनो कहैं दीनद्याल सुर साज छीनि लीने तूँ। दीने प्रभु पथ पीठि ऐसे भये कहा भयो जौंपै मतिहीने नहिं रामरंग भीने तूँ॥ ८२॥

जानो जग जन्त्र मन्त्र जादू जप जोग जज्ञ जानो है मारन अरु मोहन उचाट कोँ। जानो चतुराई कविताई को सुर सरूप जानो निगमागम औ राग रंग नाट कोँ॥ जानो बहु बयपार पारख हथ्यार मार जानो गिरि दीनद्याल ठोटेँ सबषठ कोँ। फिरो तिहूँ लोक हाट ह्वै सुजान घाट वाट राम कों न जानो तो बिकानो नवराट कोँ॥८३॥

रागो मन राज काज गजराज पै विराजि रागो धन धाम के समाज साज सार मैं। रागो रस नृत्यन के तान राग रंगन मैं रागो सुख रमनी के रूप मान मार मैं॥ रागो सिधि चेटकादि माय कर मूजन मैं रागो खग कूजन मैं पूजन संसार मैं। ऐसे इन रागन मैं रागि कहा भयो अंत राम सो न रागो सब रागो गयो आर मैं॥८४॥

प्यारे भुज वारे नित नन्द के दुलारे हित जा मुखारविन्द पैं कविन्द इंदु वारे हैं। कारे रतनारे सितवारे दृग दीरघ पैं दीनद्याल मीन मृग छीन छवि डारे हैं॥ सबै जग धारे जन प्रान के अधारे प्रभु अधम उधारे जब नेसुक निहारे हैं। हारे जिन भीषम सोँ भारेपन को लगाय सोई निसि बासर तिहारे रखतारे हैं॥ ८५॥

बरनै बराकन कों बिधि की बराबरि कै बार बार बहकी आलस न गहति है। गोबिंद के गुन नहिं गावति गरूर भरी हरी के सुजसि बिनु जस ना लहति है ॥ रस के जे चसके हैं तामैं फसके बिहाल है रही बिबस क्यों हूँ बस ना रहति है। रसना रसन ठाम रसना तूँ बसु जाम रसना रिजाली राम कस ना कहति है ॥८६॥

जीभ मुरी स्वादन ते बाँग मुरी वादन ते नैन मुरे नाना बिधि रूप न लखात हैं। श्रौन मुरे श्रौनन तें पाँय मुरे गौनन तें घ्रान मुरी सुन्दर सुगन्ध न सुहात हैं ॥ हाथ मुरे गाहन तें चाह मुरी चाहन तें तुचा मोरी कोमल परस न सुखात हैं। घोर उतपाती ए अनेक बर जोर एक मन के मरोर तें सकल मुरि जात हैं ॥ ८७ ॥

[शांत रसमय वसंत वर्णन]

कवित्त।

हृदय रसाल मैं रसीली रसना की डाल राम नाम बसु जाम कोकिल अलाप है। पुलकलता मैं सुख साजत सनेह सुक भगति बयारि त्रय हरै तिहूँ ताप है ॥ सेवत सकल बेला जाय बाग अबला मैं जहाँ अनुरागमय कुसुम कलाप है। ध्वनि संतसंग को बसंत है लसंत जहाँ बनि कै सुतन्त रमाकंत सौं मिलाप है ॥ ८८ ॥

लसैं विषै वासना प्रसून के समूह जहाँ गुंजैं चित चोप चंचरीकन के जाल हैं। त्रिबिधि बयारि बार बार इहै ईखना की हालरैं चहूँघा लता लालसा बिसाल हैं ॥ बोलैं काम कोकिल कलोलैं कीर कोपन के लहकैं ए लाल लाल लोभ के प्रबाल हैं। धिग है बसंत जग जामैं कंत को वियोग सोगमई मति गति बाल ह्याँ बिहाल हैं ॥ ८९ ॥

[शांत रसमय ग्रीष्म वर्णन]

लोभ लवैं बीच चलैं लालच लहरि लोल जामै मन मूढ़ मृग त्रिषित पगत है। काम को समीर महा पीर बसु जाम करे जाहि देखि कै विशेषि धीरज भगत है ॥ दुख की दवागि जागि रही देह दिसि

बीच भागि नहि सकै जीव जरिवो लगत हैं । मोह मारतंड को प्रचंड तेज तपै जहाँ ग्रीषम को रूप धरे भीषम जगत है ॥

[शांत रसमय पावस वर्णन]

नाचैं चहुं ओर मो ममता के ठोर ठोर माचैं करि सोर दुख दादुर जमाति हैं । छलकी कला है छन छटा छिति छोर छई मोह मई वाय को झकोर बहु भाँति हैं ॥ गाजै मेघ मद के विराजैं विषै इंद्र चाँप छाजैं ताप जोगन ए दम्भ बगपांति हैं । धिग जग पावस को पातक की घटा जहाँ हित चित चातक की प्यास न बुझाति हैं ॥९१॥

[शांत रसमय शरद वर्णन]

काम कंज फूले जहाँ चंचरीक लालच को मंजु गुंज पुंज करै भाँति भाँति भाँति है । चमकैं चहूँघां चारु चलता कतार तार चाह चन्द चढ़ो चोप चाँदनी विभाति है ॥ जितै नागरज ज्ञान ना गुविन्द ध्यान विज्जुमान को मराल मन्द चाल जा सुहाति है । जगत सरद काल लगत रसाल है न स्याम के वियोग मति वाम विलपाति है ॥९२॥

[शांत रसमय हेमन्त वर्णन]

पद सों सनेह नीको लागत धनंजै प्रिय जाको लखि कूर मुख कंज मुरझाय है । सबकों सुखद मित्र सीतल सुवात जहां जा समीप जाय दुर दिन घटि जाय है ॥ बढ़ति विभावरी है जासु संग दीनद्याल ओक सुख साजै सोक कोक विलपाय है । संत को समाज धनि सोहत हिमन्त बनि जाहि मैं अनन्त कंत सुख सरसाय है ॥९३॥

[शांत रसमय शिशिर वर्णन]

काँपैं द्विज धीर पीर जाहि के समागम तें जती दुख लहैं होत कामिन उमंग है । जड़ को प्रताप जहाँ निपट कपावै अंग वाम के सनेह तें बढ़ावत अनंग है ॥ बात उतपात जासु लगे तें हृदै को दरै जीवन दुखद करै मित्र तेज भंग है । परनै विनासै बहु कुजन विकासन हेत सिसिर सरूप किधों सोहत कुसंग है ॥९४॥

[शांत रसमय होरी]

बाजत हैं काम कोह डफ औ मृदंग दोऊ लागी उदवेग की उमंग सों टकोरी है। चाव पिचकारिन सों भरि कै विषय रंग तातें मति गोरी अति भोरी करि बोरी है॥ रही उजराई है न घट पट सूझै नहिँ लै गुलाल मोहमई झोरी झकझोरी है। सुने नाहिँ जाहि सुर सोहँ सुभ दीनद्याल मची धूम करि हिय खोरी माहिँ होरी है॥ ९५॥

दंभ के वितान मैं विराजत हंकार भूप काम कोह सखा संग राग फाग रची है। लालच गुलाल कुमुकुमा हैं कुचालन के रंग हैं कुसंग नहिँ तातें मति बची है॥ मद के मृदंग बजैं ताल झाल झूठ मई तैसईक गीति लै अनीति नटी नची है। गई बुधि सुधि भूलि विषै बरजोरी करैं कैसी हिय खोरी मोह होरी धूम मची है॥ ९६॥

सरधा सहेली साथ खेलत विवेक फाग भरे अनुराग खरे सखा सबै संग मैं। संजम नियम सम दम धीर ध्यान तोष सील सुभ भूषन सजे लसै सुअंग मैं॥ मुदितादि चारि परिचारिका के जूथ चारु सांति है प्रधान सजै सुख के उमंग मैं। ज्ञान को गुलाल पूरि रह्यो मुद होरी मची प्रेम पिचकारी चलैं भरी छेम रंग मैं॥ ९७॥

मति अभिरामिनी विवेक पति प्रेमपगो जगी जग जामिनी तें उमगे उमंग हैं। फाग मुदि तामैं अनुराग के गुलाल लसैं आतम प्रकास के मसाल सजैं संग हैं॥ नाचति सुरति गति लीन मोद मंडप मैं सवद अनाहद के बजत मृदंग हैं। सजत बिसाल सुख अनुभो को दीनद्याल बढत रसाल निज रंग के तरंग हैं॥ ९८॥

यह वैराग्य दिनेस को, सुखप्रद त्रितिय प्रकास।
विरच्यो दीनद्याल गिरि ज्ञान सुबनज विकास॥१॥

—:०:—

चतुर्थ प्रकास।

[अंतर्लापिका छप्पै]

कहा राज तें होत ? सूर केहि मैं जस पावत ?
    कहा धरे निरुपाधि कृत्य कह को यह आवत ?
कहा कियो मिथिलेस ? कौन चंचल जग माहीं ?
    दाता केहि दै जात देव पुर देवन पाहीं ?
गुरु कहा कहत हैं शिष्य पैं ? का भंगुर भाषे बुधन ?
    को जग है दीनदयाल गिरि **मार मोह प्रमदा सुधन*** ॥१॥

का पथिकन दुख देत चलत ग्रीषम ऋतु मै मग ?
    कहा भलन को होय खलन करमन तें या जग ?
का लागे हरि मिलत ? कहो किहि जोग विषै रस ?
    मन को करिए कहा ? होत अंकुस तें को बस ?
सुत कौन करत पालन परम ? कौन धरत छबि नृप हृदय ?
    अघ तें है पुरुष प्रताप कह ? **लोभ लहे जग मान छय**† ॥२॥

को हुतास को बीज ? होत चित काह कनक मैं ?
    का मैं सिर दै सूर लेत सुर सदन तनक मैं ?
बरनत कहा कबीस ? साधु हिय को ? हरि हित अति ?
    दाता का नहिं कहत ? देत कासी मैं को गति ?

---

* (१) मा = लक्ष्मी। (२) न = युद्ध, अथवा (मा) र (सुध) न = रन। (३) मोह। (४) प्रन। (५) प्रमदा। (६) सुधन। (७) सुन। (८) प्रमदा सुधन। (९) मार मोह प्रमदा सुधन।

† (१) छय = शिथिलता। (२) मान। (३) लगन। (४) जगमान = संसारी। (५) भल = अच्छा। (६) गज (जग का उलटा) (७) लहे = धन पानेवाले। (८) लोभ (राजाओं के लिये लोभ अच्छा कहा गया है) (९) छय।

का सब जंग दीनदयाल गिरि करत एक छन मैं भ्रमन ?

कहि कवन धातु तें बनत है **प्रगट नाम सीता रमन**‡ ॥३॥

निज वस्तुहि उच्चरैं कहा केहि तरै प्रवीने ?

राम भजे नहिं होय कहा ? हरि जन दुख दीने ?

प्रिया स्याम की कौन ? कहैं सुकुमारि सुघर मति ?

ध्रुव वाचक है कौन ? भौन विश्राम बहुरि अति ?

सुभ अरथ विहारी लाल को दोहा दीनदयाल कह ।

सब **मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोइ यह**॥ ॥४॥

[बहिर्लापिका छप्पै]

कौन सेज रचि महाबली भीषम त्यागे तन ?

कहा बढ़त दलि मान जगत में ? गहैं न बुध जन ?

अनुचर को अभिधान कहा विद्वान बखानत ?

श्रोतन को बकतार कहा कहि कथा सुठानत ?

घर नगर त्यागि जोगी जनहिं कहो परम प्रिया लगत को ?

मन कै थिर दीन दयाल गिरि को विरचै सब जगत को * ?५॥

वारिज सुवन

—:०:—

कौन कमल की खानि ? काम करि पंच कहावर ?

को भोजन सुखरूप ? विपति लखि होव कहा घर ?

कौन सुदुरलभ जन्म ? करन को किन रन मारे ?

कहा धरनि धर धरे ? काहि मैं तृन गन जारे ?

---

‡ (१) र = अग्निवीज = सोना । (२) रमन । (३) रन । (४) रमन = श्रृंगार । (५) म = विष्णु । (६) म = शिव । (७) न = नहीं । (८) म = महादेव । (९) मन । (१०) रम (धातु) ।

॥ (१) मेरी (कह कर) (२) भवबाधा । (३) भव = ऐश्वर्य्य । (४) राधा । (५) नागरि । (६) सोइ । (७) नागरि = नगरी ।

* (१) वा = वाण । (२) जसु = यश । (३) वारि = पानी । (४) जन । (५) सुन । (६) वन । (७) वारिज सुवन = ब्रह्मा ।

नर पार इतर का कहत हैं ? कहा करत जोधा महा।
जग केहि चह दीनदयाल गिरि ? धरि विराग करिये कहा † ॥६॥

सदन भावार

—:o:—

को है रामा रमन ? देवता देत कहा सद ?
को नासा को पवन ? देव वाची है को पद ?
को वासर को कहै ? कौन अवसर को वाची ?
कातैं कमल, कुमार जनम वदवानी साची ?
पुनि नाम पराभव को कहा ? मुकतावलि को का वदत ?
कहि सकल लोक काकों चहैं ? चोर नाम कोँ का गदत ? ‡ ॥७॥

वसु वास हार

—:o:—

मंगल पद केहि कहैं ग्रन्थ के आदि बनावत ?
को जग पूजन जोग जीव जड़तादि नसावत ?
केहि तें तरु पै पान करत ? सब जन सुख पावत ?
कौन विधाता तात सुमन अलिगन जेहि धावत ?
को सोभित दीनदयाल गिरि नीरजात मैं निति रहत ?
का प्रथम चरन की चौपाई भाषा रामायन कहत ॥८॥ ||

---

† (१) सदन = जल। (२) ? (३) भाव (का) (४) भार। (५) नर। (६) नर = अर्जुन। (७) भार। (८) भार = भाड़। (९) वार (जैसे, वार पार) (१०) वार = प्रहार। (११) सदन = घर बार। (१२) भाव = भजन भाव।

‡ (१) व = समुद्र (रामा = नदी) (२) सुवास। (३) सुवास = श्वास। (४) सुर। (५) वार। (६) ? (७) वसु = जल (कमल जन्म)। सर = शर (कुमार वा कार्त्तिकेय जन्म) (८) हार। (९) हार। (१०) सुवास। (११) हार = चोर, हरन करनेवाला।

॥ (१) वंदौं। (२) गुरु। (३) पद = पैर वा जड़। (४) पद = दरजा। (५) पदुम। (६) पराग। (७) वंदौं......परागा।

वन्दौं गुरु पद पदुम परागा

—:o:—

[मध्याक्षरी]

कौन सुवन को रूप निरखि अति डरी जसोमति ?
को विरचत सब विश्व होय उतपल तें उतपति ?
केहि भंज्यो रघुवीर वीर ? का समर लगावत ?
विदुषन को मन कहा होत नहिं दुख के पावत ?
हैं लोक लोक इनके वरन आदि अन्त महिमहि तजत ।
जो मधि सो दीनदयाल गिरि हित करि नित चित मैं भजत ॥९॥*

विराट विधाता पिनाक सायक विकल

—:o:—

नहीं सूर का होत समर मैं जब लागत सर ?
गहत काहि सारङ्ग मानि अपनो अति हित तर ?
जारत विरही चैत कौन ? पद मैं धुनि ठानत ?
नाचत कामैं मोर ? कौन सिय तात बखानत ?
इन सब के दीनदयाल गिरि तीनि वरन दुहूँ दिसि तजो,।
कलि कपट त्यागि प्रति चरन के आदि वरन जुत मधि भजो †॥१०॥

विकल कमल पलास मंजीर पावस जनक

—:o:—

राधिका के नायक सहायक हैं तेरे नित हेरे चित चेतै किन. आछे दिन जात हैं। करि लै निकाई काई हिय की छुड़ाय धीर आई जराताई जानि अंग सिथिलात हैं ॥ नीरज चरन जाके हरन अखिल

* (१) विराट । (२) विधाता । (३) पिनाक । (४) सायक । (५) विकल ।

† (१) विकल । (२) कमल । (सारंग = भौंरा) (३) पलास । (४) मंजीर । (५) पावस । (६) जनक । (७) ?

खेद तिनकी सरन लगि तेई जगतात हैं । आनँद के कंद-नंदलाल दीनद्याल सेइ या जग के ख्याल इंद्रजाल से लखात हैं ॥११॥

[शब्द चित्र प्रश्नोत्तरमय एक वाक्य मैं]

का कहै महा मलीन खग में प्रवीन बड़े का कहैं महा मलीन खग मैं प्रवीन जू । कौन मैं विलासै तम मोसन सुनाय साची, कौन मैं विलासै तम झूठ है रती न जू ॥ को कहैं निसा मैं दीन शोक के अधीन परे ? कोक हैं निसा मैं दीन सोक के अधीन जू । के सब ही मा रहै बखानो गिरि दीनद्याल केसव ही मा रहै बखानो पुर तीन जू ॥१२॥

के की गिरा गिरि पैं सुहाति रितु पावस मैं ? को कल गिरा वसंत रितु मांहि सोहई । कामै मुनिराज को तपोधन विनासै घन ? कामैं लीन होत चेत कामै मन सोहई ॥ मै न कासौं मोहि रह्यो देवन के दिलै वसि ? चन्द्र कासौं ताप हरै सीतलता पोहई ? मन कासौं करै शुद्ध जपी जन दीनद्याल ? या जग मैं को हैं सब जीवन विछोहई १३॥*

निसरै प्रवीन बानी वेदमई बार बार जन सुख रूप मन सरस जनात हैं । सहैं गुरु सेवन को सुख दै अनेक विधि, चलैं सुष्ट चाल अति जीवन सुखात हैं ॥ रसमै है जाति बात ताकी बुध-मंडली मैं होय वसकरी लगैं सब ही के गात हैं । मिलैं ये सुसंग तें सकार आप दीनद्याल पाय कै दुसंग कौं दकार बनि जात हैं ॥१४॥

जिनके पदारविन्द दरद दरत दंद सेवत वृंदारवृंद मुख मकरंद कौं । देहिं पद दीह कौं विदारि दहैं दारुन भौ, मदन द्विरद

---

* (१) केकी = किसकी; मोर । (२) को कल गिरा = किसकी सुंदर वाणी; कोकिल की वाणी । (३) कामैं = किसमें; काम ही, (४) मैन = कामदेव; मेनका = अप्सरा । (५) चंद्र कासों = चंद्रमा किससे ? चंद्रिका से । (६) मन-कासों = मन किससे, मनका (माला) से । (७) को है = कौन है, कोह ही, क्रोध ही ।

लजैं देखि गति मंद कोँ ॥ दानि संपदा के देव दुर्लभ जु दीनद्याल दासन के दलै दोष दारिद अमंद कोँ । बृंदावन चंद चिदानंद नंदनंदन कोँ ध्याय फंद दलि, दिल दै अनंदकंद कोँ ॥१५॥

जागैं जगमगी जाकी जेहरी जराय जरी जूथ जुवतिन के जगावैं जाय गाय तान । जासु तेजजाल तैं लजाय जाय जाँबूनद, दीनद्याल जाहि छुए जात जलजात मान ॥ ये जग-जलूस मृगजल को समाज जुरो, जुवा जामिनी मैं जगैं जोंम जीगनैं समान । जान दै अजान जान जानकीजीवन जन जाने जिन नाहिँ तिन्हैं जानिए जहान स्वान ॥१६॥

[मुद्राऽलंकार]

छाँड़ि फंद बंद तू अनंदकंद रामचंद लच्छन सुलच्छन हैं जाके सुनु, हे सखे ! हार है सुकंठ जाके अंगद सुबाहु बीच नल है मनोज प्रभा नील छवि के लखे ॥ महावीर धीर दसरथ के हरन पीर जाठर विभीषन बिथा तैं जिन तो रखे । जामवंत जात चलो संवत दयाल भलो होय गो न तोष विषै ओस कन के चखे ॥१७॥

ध्याय रघुवंश के कुमार को विहंगमन कामादिक हैं किरात ताहि जाल क्यों फँसै । ऐसी विस्व-मोहिनी प्रभा लखी न मेदिनी मैं देखत अमर जाहि प्रेम रस मैं रसैं ॥ जासु मुखचंद की सुकौमुदी मनोरमा मैं चित्त चंदसेखर हूँ को चकोर सो बसैं । तासु अब दीनद्याल नाम लै शिरोमणि कै यही तत्वसार माहिँ मुकतावली लसै ॥१८॥

कितै तूँ विमोहो मन मैन वली फंद माँहि दोह राग करै कहा सोरठानि क्यों लरै । तरल नयन करि कामिनीविमोहन हैं कीने मन हरन न काम ताते तौ सरै ॥ सारदूल-छाल-धर शंकर जू भजैं जाहिँ सोई जौ त्रिभंगी अनुकूल हिए मैं धरै । छूटि जाय त्रास

दीन प्यास दीनद्याल गिरि कंद की सिखरनी लौं प्रभा प्पान जौं करै ॥१६॥

कहा मीनकेतु की कलान बीच मेली मति कुंदमई होय गई जाती न निवारी है। सेवती मदन बान माधवी माया भुलाय कोई नहिं जामैं बात सारस विचारी है॥ ताते कर वीर भली जुही है समग्री सुभ जपा कर राम कथा करनै जु प्यारी है। धार दीनद्याल जोग मख मल धोय डार वेला यह बार बार सबों होति ख्वारी है॥२०॥

आदि ते भुलायो छेम, सोम सों न लायो प्रेम जाके नित नेम मोद मंगल उदै करै। कैसी बुध हीन भई मानैं उपदेस नाहिँ रटैं गुरु बार बार ताहि ना हिए धरै। सुक्र को सम्हारै किन, डारै कित ठौर ठौर, अजौं मति बौरि चाह विषै मै सनी चरै। आयो वह चहै काल तेरो जौन दलै भाल बचै दीनद्याल जौं गुपाल पाँय मैं परै॥२१॥

[सिंहाऽविलोकन]

धाई है कुमति तव विषै विष काँटनि मैं हरि की न छन भरि चरचा चलाई है। लाई है न प्रीति कहूँ संतन के संग जाय, कबहूँ न काहू सन करी तू निकाई है॥ काई है मलीन मन छाई अति दीन-द्याल ताकी नहि करै कूर रंचक उपाई है। पाई है न कछू सब उमर गँवाई अजौं, आई नहिं लाज सुने जम की बधाई है॥२२॥

पास है गरे मैं तव ममता के जौलौं दृढ़ तौलौं नहिं दीनद्याल तोहि सुखाभास है। भास है विचार जौन चार ओर, भ्रमै कहा? देखि तूँ विचार दिना चार को निवास है॥ वास है प्रसून बीच तौ लौं ई भवै गो भोर छन छन जाति घटी तेरी वय स्वास है। स्वास है निरादर ज्यों त्यों हीं कियो सेत केस आसपास फूली जनु काल की कपास है॥२३॥

मार है बड़ो ई बटपार कायकुंज बीच जानो नहिं जाय जासु छल को सुमार है। मार है भुलाय तोहि ताहि लखि तू न मोहि

तब हीँ बचैगो जोँ विवेक लै जु मारहै ॥ मारहै अचेत, वीर, हो चित सुचेत धीर तेरो हित दीनद्याल नंद को कुमार है । मा रहै न सदा गेह, जलजा सोँ कहा नेह, देह छनभंगी की दिना द्वै सुखमा रहै ॥२४॥

तार है सु तेरो मार मोह के विहार माँह जब ते संसार बीच लीने अवतार दै । तार है पसार किए त्योँ ही धन को सुमार तन छनभंगी को छन विसतार है ॥ तार है विसै सनेह रूप ताहि तोरि डार तामै कहा यार दिन ख्वार करता रहै । तार है गुपाल ताहि भजौ क्योँ न दीनद्याल यही कार करिवे मे तोहिकोँ सुतार है ॥२५॥

वार है अनेक तूँ करार कियो प्रभु पाहिं भूलि गयो तोहि जब जाठर दबा रहै । बार है सु कौन जामैँ हरि गुन गायो सुन ऐसही गँवायो वै बडोई तूँ लबार है ॥ बार है जसोमति को सुंदर संसार बीच जासु छवि गावैँ कवि वेद बार बार है । वार है दिनेस दुति कुंडल तेँ लागै लघु ताहि अब दीनद्याल ध्याइए सबार है ॥२६॥

कुंडलिका ।

वनिता के अनुचर परे महा मोह के कूप ।
कूपर परमा जासु की वरनहिँ नरक विरूप ॥
वरनहिँ नरक विरूप बदैँ बुध वेद विहारी ।
हारी मति जो पाय नहीं नर देह सुधारी ॥
धारी दीनदयाल विरत मन को धनि ताके ।
ताके तन को नाहिँ फँदे फन्द न वनिता के ॥२७॥

छप्पै ।

वरजे रहो सुजान सबल ये सबतेँ गोचर ।
चर अरु अचर नचाय सकल करि डारे खरभर ॥

भरमावै सब जोनि, यहै डारै भवसागर ।
गरल सरिस है दुखद सुधा हैं जैसे रविकर ॥
कर करन देहिँ नहि चित्त कों इनतें हारे अखिल नर ।
नर नर पै दीनदयाल गिरि ये रिपु ज्यों मृग पर सबर ॥२८॥

सवैया ।

देरी करै मति, हे मति ! तूँ कहै दीनदयाल बिसाल समे री ।
मेरी सिखापन मानि तजै किन मान भजै नँदनन्दहि हेरी ॥
हेरी नहीं हरि ही न हितू जग के समबंध न बंधन बेरी ।
बेरी भली यह जाति चली वृषभान लली की गली दृग दे री ॥२९॥

सो रहै जहान माहिँ अधम उधारिवे को केतक अजामिल से पापीं तरे जोर हैं । जो रहैं कृपाल सरनागत पै काहू विधि ताके नहिं गनैँ पाप किए जे करोर हैं ॥ रो रहैं सु हिये हारि दूत सुने नाम जासु सोई प्रभु वासुदेव जमुना के छोर हैं । छोरहैं सु रमानाह कालपास दीनद्याल धाता दिक देव जासु लगे रज सोँ रहैं ॥ ३० ॥

सोँ रहैं रमेस तव पालन मैं दीनद्याल खरे व्है कँपात काल जिन डर सो रहैं । सोर हैं गुनन के जे गाय न सकैँ गनेस से ई तौ सहाय नित नन्द के किसोर हैं ॥ सोँ रहैं कुफन्द फँसि मन्द नार चेतैं नहिं मृग के समान लगे भानुकर सो रहैं । सोरहैं कलान करि सुन्दर सुवेष स्याम दरसोँ कों देव जासु हर तरसो रहैं ॥ ३१ ॥

अनुप्रासमयी सवैया ।

हर से हरि से नहिँ हेत कियो खर से जग जीवन हैं नर से ।
कर से नहिं पूजन कै परसे बचि है किमि कै जम के डर से ? ॥
दरसे मुख नाहिँ कलाधर से तरसे मतिमन्द विषै सर से ।
अर से बिन ही जर से वह जाहिँ जे हैं मद के भर से गरसे ॥३२॥
मन को नहिँ हाथ कियो छन को नितसंग गहे विषयी जन को ।
तनको धन को अभिमान करैँ नहिं चेत धरैं मनमोहन को ॥

घन को जिमि लोह सहैं तिमि वै निसि बासर सोकन को ठनको ।
उन को गन दूखन भूखन जे, पन भूलि रहे जठरापन को ॥३३॥

काकावलोकनम् ।

पनिहारि समौ सब जात चले रुचि को जल लै जग के सर सों ।
सुदतीसुत लौं धन धामहुं तें इनके छन संग नहीं सरसो ॥
करि हैं मन घायल तोहि सही मरिहैं जब मोह महा सर सों ।
जिन दीनदयाल भजे न गुपाल बने नर ते खर सो सर सो ॥ ३४॥

कवित्त । शांत रसमय ।

मर्‌यो है कुरंग वीन सबदविषय संग, जर्‌यो है पतंग ह्वै उमङ्ग रूप रागि रे । पर्‌यो है मतङ्ग गाड़ परस विषै अधीन दर्‌यो मीन रस तें, मधुप गन्ध पागि रे । एक एक विषै ते मरे हैं एक एक जीव, नर क्यों न मरै जाहि पंच विषै लागि, रे । एतो उर साल ज्वाल काल-व्याल तें कराल जानि विषै विषतें विसाल ताहि त्यागि रे ॥ ३५ ॥

अपने मैं अपने कों अपने सों पेखि तूँ, न सपने मैं मोहै भ्रम ढपने कों त्याग रे । लगी तिहूँ ताप लाय पाय कामरूप वाय, जग कों जराये जाय अजौं जागि भाग रे ॥ गदगद होय कहा रह्यो देखि मृग नद छन मै जरैगो मद कागद को बाग रे । लौ सुख संजोग फेरि हूँ वियोग सूल सोग एतौ सब विषै भोग सती को सुहाग रे ॥ ३६ ॥

नहीं राजकाज, न समाज साज राजधानी, नहीं सैन ऐन कोऊ अन्त ठहरातु है । नहीं जाति पाँति न जमाति कोऊ नेह नात, नहीं तात मात भ्रात गात साथ जातु है ॥ सपन समान जान, हे जन, जहान प्रान चञ्चला चलान समौ चञ्चल चलातु है । छाँड़ि कै जवाल जाल गहि तूँ गोपाललाल तातें कहि दीनद्याल फन्द क्यों फँसातु है ? ॥३७॥

मरे हैं कुरङ्ग कई परे फिरैं बान संग, बीन सों नवीन नेह जा दिन ते लाए हैं । दीन होय मरै मीन अति जल तें विहीन, लीन दीप मैं पतङ्ग अङ्ग को जराए हैं ॥ कंज के अधीन भए छीनतन भवैं

भौंर, मनी के वियोग तें मलीन फनी ताए हैं। चातक मरहिँ रटि स्वातीहीन दीनद्याल, नेह को लगाय कौन देह सुख पाए हैं ॥ ३८ ॥

दई दई करै कहा दई ने दई है देह दुर्लभ सनेहमई सुख सेज सोइ ले। लहि कै जतन गहि रतन दयाल नाम तजि कैं निकाम धाम कामसुधा कोइ ले। हरि सों लगाय हे तसीख सबै संत देत बनो है सुखेत है सुचेत बीज बोइ ले। मानुस जनम पाय जदुराय गुन गाय बहो दरियाब जाय अहो हाथ धोइ ले ॥ ३९ ॥

श्लेषघटित अनेक प्रश्न के एक उत्तर। कवित्त।

कौन जग जीवन दै जीवन कों पालत है ? स्याम रूप धरे हिये चपला कों लै रह्यो। कियो को सुमन माहिँ सुमन लगाय बास पीत बास ऊपर लै नील तन कै रह्यो। काको गुन गावत रसाल ह्वै सुकादि द्विज को न छमा[1] बीच छवि छैल बनि छै रह्यो ॥४०॥

प्रतिपद यमक सहित समस्या।

तन को न तनको प्रमान है पतन को, जू, धरो दीनद्याल धराधर के धरन को। पावन कलेस यह जन्म अब पांवन लै पांवन परन ह्वै अपावन नरन को ॥ मानस मैं धरि धीर मानस विराग माँह मानस-मराल राखि दीजै विहरन को। सीत को परन[2] गनि, परन कों जांचो जनि, परन[3] कों लैकै वरू पैन्हिए परन[4] कों ॥ ४१ ॥

राज के कुमार सुकुमार मार हूँ तें अति, धन को सुमार मार मानि विरमात भे। छाँड़ि खटराग राग एक दीनद्याल स्यामपद के पराग और तें विराग गात भे ॥ ते भे बन जात वनजात से चरन जासु तासु काम राम नाम कों लै वन जात भे। त्यागि उतपाती जग विषै भोग नासपाती, नासपाती खात ते बनासपाती खात भे ॥ ४२ ॥

सुन्दर पुरन्दर के मन्दिर से मन्दिर मैं आदरैं न दरबानी

---

१ छमा = क्ष्मा = पृथ्वी । २ परन = पड़मा । ३ परन = प्रन, प्रतिज्ञा । ४ परन = पर्ण, पत्ता ।

भूपन कों जात भे । अन्दर मैं दरसैं हीर मनी सुरमनीय ताके नहिँ ताके नहिँ, तिन कहँ तृनसेज जात भे ॥ मानस मैं मान समै भयो यों विराग जिन्हैं तेई दीनद्याल सबै मानस में ख्यात भे । त्यागि उतपाती जग विषै भोग नासपाती, नासपाती खात ते बनासपाती खात भे ॥४३॥

देखि कै विराग की बड़ाई जग मैं विसाल केतिक भूपाल राज तजि बन जात भे । ऋषभ ऋषोश आदि बड़े चक्कवै जु हुते गात मैं रमाय भूति भू मै भरमात भे ॥ अतिसै उमंग संग काहू जन को न करैं भू पर सयन बसैं तरु तर रात भे । त्यागि उतपाती जग विषै भोग नासपाती, नासपाती खात ते बनासपाती खात भे ॥ ४४ ॥

देखो कलिमन्द मैं भरथरी औ गोपीचन्द छाँड़ि राजफन्द बनि जोगी बन जात भे । कंथा सतखँडमयी तैसई लई कुपीन, रहे धूरि धूसर ह्वै कूसर पैं प्रात भे ॥ माते प्रभु प्रेममद राते गिरधारी गुन ऐसे दिन दीनद्याल तिनके बिहात भे । त्यागि उतपाती जग विषै भोग नासपाती, नासपाती खात ते बनासपाती खात भे ॥ ४५ ॥

पुनः समस्या । छप्पै ।

पंडुतनय हित लागि दूत बनि दयासिन्धु हरि ।
गे दुरजोधन गेह नेह करि राजनीति धरि ॥
देखे द्वार उदार वार प्रतिहार हँकारत ।
खरे भूप सरदार अरे जनु मार बिहारत ॥
बहु कनक छरी बरदार तित आनि प्रभुहिँ विनती करी ।
तहँ स्याम प्रभा परतहिँ सु भइ जातरूप नीलम छरी ॥ ४६ ॥

कवित्त ।

चिदानन्द कन्द जाको सोभित अनन्दप्रद साधु हिय आल बाल कोमल लखाता है । दया दल तापहारि, मन्द मुसुकानि फूल, मोद मकरन्द, श्रेय फल दिन राता है ॥ सील सुभ साखा झूली एक

रस अनुकूली, आनन आमोद सोई सुरभि सुहातो हैं। पारिजात लता फूली जनकलली अतूली, देखि राम भौंर रातो सदा मड़रातो है ॥४७॥

संतत विमोहै जोहै सुमन सिँगारनि कोँ देखे छिन एक बिन अति अकुलातो है। गुंजत रहत गुनग्राम वसु जाम जाको रूप मकरन्द छवि हिये हरखातो है ॥ सुखमा सुगन्ध की सदाई रहै चाह जाहि पीतवास धरे सुभ करे स्यामगातो है । पारिजात लता फूला जनक लली अतूली, देखि राम भौंर रातो सदा मँड़रातो है ॥४८॥

गहि गुन मति सूची पट मैं सजति अति सूछम ते सूछम जा मुख बुध गाए हैं । तहाँ वि॰ कूप के समूह तम रूप सजैं तापैं नेह नगरि अनूप जन छाए हैं ॥ तितहीं लसति है भगति देवधुनी धार छ्वै॰ अपार जातेँ पापभार बिनसाए हैं । सूची पर कूप वृन्द, तापैं नगरी गरीय तहां गङ्ग के तरङ्ग तुंग सुन्दर सुहाए हैं ॥ ४९ ॥

कण्ठ मैं पुनीत तासोँ सूची सतेगुन गुथी जाको अति सूछम प्रमान कवि गाए हैं । तहाँ संस्काररूप कूपन के संघ सजैं, सुपन सहर तापै मति ने बनाए हैं ॥ तामैं हरिदास लखैं ताप दमैं देवनदी दीनद्याल जाके जस तिहूँ काल छाए हैं । सूची पर कूप वृन्द, तापैं नगरी गरीयं तहाँ गङ्ग के तरङ्ग तुंग सुन्दर सुहाए हैं ॥ ५० ॥

सवैया ।

एक समय सर पाचहुँ लै रति नायक नाकहिँ जीतन धायो ।
ताहि कोँ जीति जयो नरलोकहिँ, दीनदयाल सबै बसि ल्यायो ॥
फेरि पंताल गयो पथ सिन्धु मैंनाक के नीचे ह्वै चाप चढ़ायो ।
ता धनुफूल रह्यो अलि है, तित भृंग पैँ सैल समुद्र सुहायो ॥ ५१ ॥
मैं अति ऊजल हौँ प्रभु कोँ प्रिय पाप न रंच गहौं गुनगाही ।
हा ! जल नीच की संगति तैँ तिनहूं गहि मोहि हुतास मैं डाही ॥
ह्वै जु मलीन रहे हरि वे मुख पाप कुसंगति के अति चाही ।
ता दुख भावी विचारन कै इहि कारन छीर फफात कराही ॥ ५२ ॥

सूखमना[1] सुर की सरिता अघ ओघहि दीनदयाल हरै।
ता तट साखी अपात है ब्रह्म, सुचेतन मैं दल सुद्ध सरै॥
लै मनमीन तहाँ करि लीन जमी[2] वर जीव विनोद भरै।
गङ्ग के तीर करीर के पत्र जती इक मच्छहिँ भच्छ करै॥ ५३॥
अपनो अति राजित रूप दिखाय सबै जन को चित लेत चुनै।
लखि कै तमरूप मलीन महा सुत कज्जल को अति हीन गुनै॥
चल वङ्कित नैन कुसंगति मैं, दुख देत तनै की अनीति सुनै।
सोइ दीनदयाल विचारन कै इहि कारन दीपक सीस धुनै॥ ५४॥

पुनः समस्या। दीपकपञ्चक। कुण्डलिका।

तमग्रासक या दीप मैं पूरित पीत सनेह।
बाती विसद हुतास पितु ललित तासु की देह॥
ललित तासु की देह कहाँ तें प्रकटो कारो?
है आचरज महान धीर मन माहँ विचारो॥
बरनैं दीनदयाल भेद यह जानि लियो हम।
असन कियो है जौन कढै हिय तें सोई तम॥ १॥

अपरम्

लागो है अति प्रीति सों भाँवरि भरन पतङ्ग।
अहो, लालची रूप को निरखै बड़े उमङ्ग॥
निरखै बड़े उमङ्ग अङ्ग कों मोरत नाहीं।
अरपै मन तन प्रान, प्रानप्रिय गहि गलबाहीं॥
बरनै दीनदयाल ताहि यह जारत जागो।
वहै पाप फल आय दाप मुहँ कारिख लागो॥ २॥

अपरंच

कारे, कुंचित, नीचगति कुन्तल नाम कहाय।
तिनकों नेह सनेह सों दीपहि तासु सहाय॥

---

१ सूखमना = सुषुम्ना नाड़ी। २ जमी = यमी = यम नियम करनेवाला, योगी।

दोपहि तासु सहाय, रहै तेहि पास प्रकासत ।
होहि संग तें दोस, गुनहु गुन मानहिँ भासत ॥
बरनै दीनदयाल आप छवि है बहु धारे ।
प्रिय के पाप कलाप कढ़ैं ये मुह तें कारे ॥ ३ ॥

मण्डित कीनो मित्र निसि दै निज तेज प्रकास ।
ठौर ठौर यहि नाम कोँ द्यौस न करत विकास ॥
द्यौस न करत विकास गेह ही मैँ चल झूमै ।
प्रिय को नाम नसाय, नेह कोँ नासत भू मैं ॥
बरनै दीनदयाल स्याम यह जानत पण्डित ।
है कृतघ्न को पाप दीप के मुख मैं मण्डित ॥ ४ ॥

नेही दीपक है बड़ो तपत रैन प्रिय ताप ।
तापै निदरै सब दिना मित्र सामुहैं आप ॥
मित्र सामुहैं आप दीन, कृस देह दिखावै ।
गात धुनै तेहि हेतु नैक जग बात न भावै ॥
बरनै दीनदयाल देखियत कारन येही ।
कढ़ैं सोक मैं स्वास, स्याम योँ दीप सनेही ॥ ५ ॥

इति दीपक पंचक ।

चकोर पञ्चक ।

कुण्डलिका ।

प्रिय सोँ मिलौ विभूति बनि ससिसेखर के गात ।
या विचार अङ्गार कोँ चाहि चकोर चबात ॥
चाहि चकोर चबात, चहै चित चारु चन्द रुचि ।
नीके नैन निमेष निवारन कै निरखै सुचि ॥
बरनै दीनदयाल प्रेम पावन यह हिय सोँ ।
सहि नहिँ सकै वियोग दूरि को मिलिबो प्रिय सोँ ॥ १ ॥

अपरम् ।

निज प्रिय पितुहि पयोधि कोँ बडवानल ह्वै ग्रास ।
करत सदा तेहि लागि तेँ असन चकोर हुतास ॥
असन चकोर हुतास करै जो जगत प्रकासै ।
गिलत हृदै नहि हिलत मिलत यामैं यह आसै ॥
बरनै दीनदयाल देखि द्विज को सहृदै हिय ।
अहो एकटक लाय विलोकत नभ मैं निज प्रिय ॥ २ ॥

निज प्रिय की प्रिय औषधी ताको दहै दवागि ।
भखत जानि अरि आगि कों गहि चकोर यहि लागि ॥
गहि चकोर यहि लागि कोपि रिपुबीज नसावै ।
मीत रीति की नीति भली जग कोँ दरसावै ॥
बरनै दीनदयाल प्रीति धनि गनिए हिय की ।
सनमुख नैन लगाय प्रभा निरखै निज प्रिय की ॥ ३ ॥

घोर अनल कोँ भखत है सीतमयूख सहाय ।
तन को मन कोँ संक नहिँ सदा रहै हरखाय ॥
सदा रहै हरखाय, मीत सनमुख मुख जोरे ।
बाधा होय न कोय महान प्रनै करि भोरे ॥
बरनै दीनदयाल देखावत प्रिय के बल कोँ ।
है चकोर तिहि हेतु चबावत घोर अनल कोँ ॥ ४ ॥

नेही बड़ो चकोर लखि दूरदेस प्रिय बास ।
दहि तन मन तेँ मिलन हित तातेँ भखत हुतास ॥
तातेँ भखत हुतास तासु धनि आस कहैं मुनि ।
"मन विलीन ह्वै चन्द' बदैँ श्रुति अन्त समै गुनि ॥
बरनै दीनदयाल धीर सुप्रनै रन तेही ।
मोरत है मुख नाहिँ अहो द्विजराज सनेही ॥ ५ ॥

चित्रकाव्य । मध्याक्षरी रोला छन्द मध्ये द्रुतविलंवित ।

गङ्गा जय जन जननि देवि संपद तन श्री तन ।
हे मंजुल गति कलनि पुरातन शिव ताके गन ॥
कुसुम मलय तिल छिपा सुतट भावन जल पावन ।
टरि भव भव भा करी सिवै तैं केते भुवि जन ॥१॥
परसे दिव्य विमान कामजित वपु ते पाए ।
पाप ताप बिन जना सदा शिवलोकै छाए ॥
सनितपनादि दिवेस शंभु श्री कुजगुरु सेवैं ।
शंभु मुकुट उरु माल काल सशि दिवि के देवैं ॥२॥

पुनः मध्याक्षरी छप्पै ।

हंस बंस हे देव अचर चर रमण सरस रुचि ।
रोष निजं तर तजे राव श्रीवर ना लघु सुचि ॥
बीर धरमु रमु धरनि सकल मंगल करुना उरु ।
मिलि तव बिलसे संत तुंग भा मालव कुस गुरु ॥
इह धीर बीर जुग जुग बरन तजि इक दीनदयाल लहि ।
कियं वरजन छल नति नील नल राम चरन नति वरन गहि ॥३॥

पुनः मध्याक्षरी अंतर्लापिका छप्पै ।

चह कह भूधर ? कहा छली छल ? को करमन कर ? ।
रसाधोस[1] का देत ? बंध काते कह पर धर ? ॥
काहि चहै भूपाल ? चह न केहि ? को है भयकर ? ।
रखत काह नरनाह ? चपल को ? हरत कौन जर ? ॥
पर उत्तर वाह कुवार बल अरु तुकादि के वरन वर ।
रचि आदि अंत लै फिरि दए ऊतर दीनदयाल तर ॥ ४ ॥

---

१ रसाधीस = पृथ्वी का स्वामी, राजा ।

अथ टीका ॥

यहि छप्पै के प्रथम चरन मैं तीन प्रश्न हैं, तिनको उत्तर 'वाह' शब्द करिकै दियो ॥ यथा—चह कह भूधर कहा छलीछल को करमन कर। भूधर वाह चाहै हैं। भूधर पर्वत, वाह मेघ, अथवा भूधर राजा। वाह तुरंग। अथवा भूधर महादेव, वाह वृषभ। वाह शब्द कै विषै कोष प्रमान। वाहो युग्मं घनो वाहो, प्रवाहो वाह उच्यते। वाहो माया विशेषश्च वाहो बाहुरितिस्मृत: ॥ इति अनेकार्थध्वनिमंजरी ॥ वाहो भुजायां वाहस्तु मानभेदे वृषे हये। इति विश्वसार ॥ अथवा वाह प्रवाह महादेव चहै हैं। जल धारा शिव प्रिया, इति वचनात् ॥ द्वितीय प्रश्न को उत्तर यथा—वाह नाम छल भेद को है, सोई छली को छल है ॥ तृतीय प्रश्न को उत्तर यथा—वाह भुजा को कहै हैं सोई कर्म नाम क्रियान को कर्ता है ॥

दूसरो तुक—रसाधीस का देत बंध कातैं कह पर धर। रसाधीस राजा कु देत, कु कहैं भूमि देत ॥ कुं पापे चेषदर्थे च कुत्साया च निवारणे ॥ इति मेदनी ॥ पृथिव्यां कु: समाख्यात:। इत्येकाक्षराभिधानम् ॥ कुं पाप ताही ते बंध होत है ॥ दूसरो तुक मैं तृतीय प्रश्न को उत्तर, यथा—पर शत्रु कु धरत हैं, कु नाम निंदा को है ॥

तृतीय तुक—काहि चहैं भूपाल ? चह न केहि ? को है भयकर। भूपाल वार चाहै हैं वार नाम द्वार को है; अर्थात राजा द्वार नाम उपाय चाहै हैं ॥ अथवा, वार नाम वैरी के ऊपर प्रहार चाहैं हैं। किंवा वार है वाल ताको चाहै हैं, अर्थात् उत्तम वालक वा वाराङ्गना ॥ रकार लकार की सवर्णता है। तृतीय तुक मै द्वतीय प्रश्न को उत्तर। यथा—भूपाल काकों नहीं चाहैं हैं ? निज ऊपर वार नहीं चाहैं अर्थात शत्रु को प्रहार नहीं चाहैं हैं; अथवा वार मूढ़ को न चाहैं हैं। तृतीय प्रश्न को उत्तर। यथा—वार क्रूर ग्रह भयकर्त्ता अथवा

वारो महादेवो दुष्टानां च भयंकरः ॥ वारः । सूर्यादि दिवसे द्वारे वारोऽवसर वृंदयोः । कुले वृत्तो हरे वारो वारमद्यस्य भाजने ॥

चतुर्थ तुक—रखत काह नरनाह ? चपल कह ? हरत कौन जर ? ॥चतुर्थ चरन को प्रथम प्रश्न—रखत इति, नरपति वल रखत ॥ बल नाम सेना अथवा सामर्थ्य ॥ चपल कौन ? बल है, बल नाम काम को है ॥ अथवा पुरुषतेज अथवा बलदैत्य । कोषश्च—बलो हली । वलं सैन्यं बलं सत्यं बलौषधिः रत्नज्योतिर्वलो दैत्यो बला लक्ष्मीर्वलामही ॥स्थौल्य सामर्थ्य सत्येषु वलं ना काकसीरिणोः ॥ चतुर्थ तुक के तृतीय प्रश्न को उत्तर यथा—जर नाम ज्वर को लोक मैं है, अरु बल नाम औषधि ज्वर को हरत अथवा ज्वर सरीर बल हरत अर्थात् देह तेज हरत ॥

पंचम चरण पर उत्तर—पर उत्तरवाह कुवार बल अरु तुकादि के वरन वर ॥ पर कहैं श्रेष्ठ, उत्तर 'वाह' 'कुवार' 'बल' इन पदों करिकै भये ॥ रचि आदि अंत लै फिरि दए उत्तर दीन दयाल तर ॥ पुनः छप्पै के द्वै द्वै चरन के वरन लैके उत्तर दये—प्रथम चरन मैं आदि चकार, द्वितीय चरन को आदि वरन रेफ दुहुँ मिलि कै चर भये ॥ यथा ॥ 'चह कह भूधर ?' भूधर जे राजा, ते चर चाहैं हैं; चर नाम धावन को हैं । अथवा भूधर महादेव, चर सेवक कों चाहै हैं । कहा छली छल ? छली को छल चर है; चर नाम चल है, छिन भंगुर है, उघरि जाय है ॥अथवा द्यूतभेद कों चर कहैं हैं सोऊ छल ही है ॥ को करमन कर ? को करमन को करै है ?चर नाम सेवक सो करमन कों करै है,-अथवा जंगम सकल जीव कर्मों को करै हैं । चरोऽच । द्यूतभेदे च भौमेचारे त्रसे चले । इति मेदिनी। चरो द्यूतप्रभेदस्याच्चार जंगमयोश्चले । इति विश्वसार । अथवा 'को' कहै कौन कर्म नहीं कर । चर कहैं चल कर्म नहीं करो ॥ अब तृतीय चरन को आदि वरन 'का' और चतुर्थ चरन को आदि वरन रेफ है दोनो मिलि 'कार' भयो । यथा ॥ रसाधीस

का देत ? कहैं कार देत । कार नाम जतन को है, प्रजा पालन जतन करत हैं ॥ अथवा कार नाम निश्चय को है राजा निरनै करत हैं । अथवा कार नाम बध को है राजा दुष्टन को वध करत है ॥ अथवा रसाधीस कों लोक कहा देत ? कार नाम वलि को है सो देत अर्थात कर देत हैं । द्वितीय चरन को दूसरो प्रश्न—बंध का तें ? बंध कार तें होय है, कार नाम रति को है रति कहिये पदार्थन के विषै आसक्ति। ताते बंध होय है । अथवा कार बंधन ताते बंध होय है । कार शब्द मैं कोष प्रमान— कारो वधे निश्चये च वलौ यलेरतावपि । कारस्तुषार शैले च कारादूत्यां प्रसेवके ॥ बन्धने बन्धनागारे हेमकारिकयोरपि । कह पर धर ? कौन श्रेष्ठ पर्वत है ? (वर नाम श्रेष्ठ । धर नाम पर्वत) उत्तम शैल हिमाचल ताको कार कहैं हैं सोई पर धर है । अथवा पर नाम श्रेष्ठ जन कहा धारन करत हैं ? कार नाम बलि को है अर्थात् पूजा धारन करत हैं ।पंचम षष्ठ चरन के आदि वरन पकार अरु रेफ क्रम तें लिये तो 'पर' भयो ।

तृतीय चरन में प्रथम प्रश्न—काहि चहै भूपाल ? पर उत्तमता चहै है । चह न कह ? पर जो हैं वैरी ताको नहीं चाहैं हैं । को है भय कर ? पर अनात्मा सो भय कोँ करै है। द्वितीयाद्धयं भवतीर्ति वचनात् ।

अब प्रथम चरन छप्पै को आदि चकार, अन्तिम छठएँ चरन को रकार; छप्पै के आदि अन्त को वरन मिलाए चर शब्द भयो ताते अर्थ करैं हैं । चतुर्थ चरन को उत्तर चर शब्द तें । रखत काह नर नाह ? चर । चर जो त्रसित नरनाह तिनको रच्छत हैं । दूसरो प्रश्न— चपल कह ? चर चल पदार्थ ते चपल हैं।अथवा चर दूत सोऊ चपल हैं । छप्पै के चतुर्थ चरन को तीसरो प्रश्न—हरत कौन जर ? जर नाम द्रव्य ताकोँ चर हरै है । चर नाम द्यूत को है सो जर को नास करै है। अथवा, हरत कौन जर ? जर जो है ज्वर सो कौन को हरन करै है, प्राप्त करै है ? त्रसित दीनता दुर्वलता कोँ। चर कहैं त्रसित त्रास युक्त।

अथवा, ज्वर कहैं ज्वर सो चर जङ्गम मात्र को हरत सर्व प्रकार तें । यह छप्पै के विषे जे प्रश्न कहे हैं तिन प्रश्नों के उत्तर एक बेर पंचम चरन के मध्य 'वाह' 'कुवार', 'वल', इन शब्दन तें दिए। फेरि छप्पै के छवो चरन के आदि वरनोँ कोँ दो दो मिलाय करिकै उत्तर दिए। 'चर कार पर' चतुर्थ चरन के प्रश्नोँ के उत्तर छप्पै के आदि अन्त के वरन जे चकार अरु रेफ दोनोँ मिलि चर भयो ता करि उत्तर दियो। दो वार छप्पै के अन्तर्गत जे जे प्रश्न रहे तिन प्रश्नोँ के उत्तर दो वेर कै प्रकार तें दिए। यह छप्पै अन्तर्लापिका मध्याक्षरी के भेद में है ॥ ४ ॥

पुनः अन्तर्लापिका छप्पै ॥

काहि धरे सिर सेस ? कहा खगजन सुखदायक ?।
तुरग त्याग के जोग कौन ? मृगगन भनभायक ? ॥
का लै दहति दवागि ? कुसुत केहि दोष लगावत ?।
को पालक सब जगत ? काह कर माँह सुहावत ? ॥
कहु को जल प्रेरक केहि लगे दीनद्याल हरि वस कियो।
करि वरन वृद्धि पुनि इक कतनि **कुज वन लै उत्तर दियो*** ॥५॥

अनेकानेकोत्तरम् ॥

वासर को कहैं कहा ? कौन वाची औँसर को ? कहा करैं वली ? कौन अली को सिँगार है ?। वृन्दपर जाय कहा ? कौन निंद्य भाजन है ? पार के समान कौन प्रानिन कोँ प्यार है ? ॥ कौन तरु नाम कौन चाम पैं रचे हैं स्याम ? केते रवि रूप ? भूप कापैं हितकार है ?। कौन दीनद्याल देव ? कौन की न कीजै सेव प्रश्न ये अनेक ज्वाव दीनो एक **बार है** ॥ ६ ॥

---

* (१) कुज = पृथ्वी । (२) कुज = वृक्ष, पेड़ । (३) कु = दुष्ट, बुरा । (४) वन । (५) वन । (६) ज = जनक, पिता । (७) ज = विष्णु । (८) वलै = वलय । (९) वन = निर्झर, सोता । (१०) लै = लौ, प्रेम ।

यामैं आठ उत्तर कोष तें लिए हैं ॥
वार: सूर्यादिदिवसे द्वारेऽवसर वृन्दयो: ।
कुले वृक्षे हरे वारो वारं मद्यस्य भाजने ॥

अर्धगतागत सवैया ।

ते न रजे लै भलो दम सैं न नसैं मद लोभ लै जे रन ते ।
ते निज कौं लखि आतम लाभ भलामित आखिल को जनिते ॥
ते मन कौं वसि कै नित न्ही जे तेहीं तनिकै सिव कौं नमते ।
ते रलि के तहि दीनदयाल लयाद नदी हित केलिरते ॥ ७ ॥

सर्वगतागत सवैया ।

है नर जीवन सोई भलो सज लोकन मैं सुर मानत हैं ।
है नत नेह सुमाधव सों नहि तो तन मास बखानत हैं ॥
है नकली ठस सोह नही भल मानस तो तन जानत हैं ।
है नव पारव दीनदयाल लयाद नदी मन तानत हैं ॥ ८ ॥
है तन मार सुमैन कलो जस लोभ इ सो नव जीरन है ।
है तन खावस मानत तोहि न सोव धमा सुहने तन है ॥
है तन जानत तो सन लाभ हीन हसो सठ लोक न है ।
है तन तानम दीनदयाल लयाद नदी वर पावन है ॥ ९ ॥

सर्वगतागत अंतादि मुखचित्रम्

सकलाभ सदा जस भास सुसीलल सी सर सावन

सज है रस बासर जो नव जीवन लाभ भलावन

सनमान भलो जग है बसि दीन दयाल मिलावन

सर सारस सार लसै बर सैल भला सब भावन

को

नव सारस सील लसी सुसभा सज [illegible]ास भला कस

नव लाभ भला नव जीवन जो रस बासर है जस

नवला मिलया दन दीसि वहै गज लोभन मानस

नव भाव सलाभ लसै रव सैल रसा सर सारस

को

अथ षोडशदलकमलबंधमध्ये यमकचित्रम् कवित्व सिंहाऽवलोकनम्
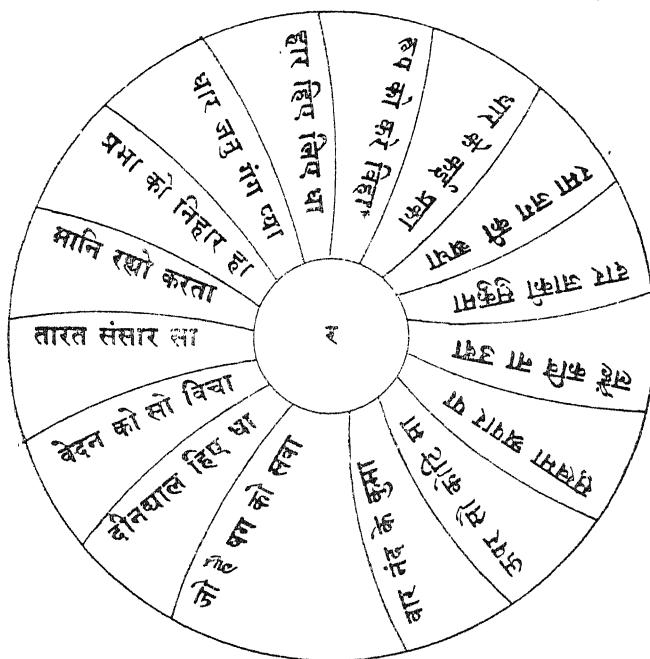
अथ अंतादिमुखचित्रम् डमरूबंधोपि च
नम कौं पाय के मन कहा लाग्यो

त्रिपदी चित्रम्

दी	ध्या	लै	म	ध	त	म	रू
न	ल	ना	कौं	र	रा	के	प
ही	चा	ध्वै	म	प	त	ग	कू

द्वादशदलकमलबंध मध्ये यमक निरोष्ठचित्रम्।

अथ चक्रबंधचित्रम्

फणीबंधचित्रम्

कवित्त

सिंहावलोकनम्

पुनः द्वादश दल कमलबंध चित्रम् । कुण्डलै ।

सजो न मंद काम को ।
भजो अनंद राम को ।
तजो कुफंद वाम को ।
सजो सुछंद धाम को ॥२०॥

यह वैराग्य दिनेश को, सुखद सुवेद प्रकास ।
विरच्यो दीनदयाल गिरि, ज्ञान सु वनज विकास ॥ ४ ॥
मोह महा तम मिटि गयो, गई अविद्या राति ।
भई विलीन विकार की लखत नखत की पाँति ॥ २१ ॥
कामी कैरव सकुचिहैं, लखिहैं नहि यहि ओर ।
चित चकोर लोभीन के, कहिहैं याहि कठोर ॥ २२ ॥
कुमती कुटिल मलीन मन, जे उलूक खल वृन्द ।
भते वैराग्य दिनेस की, क्यों नहि करिहैं निंद ॥ २३ ॥
पैहैं ज्ञानी मधुपमुद, और विवेकी कोक ।
सूरज वृत्ति विरक्त मन, ह्वैहैं निरषि विसोक ॥ २४ ॥
रितु नभ निधि ससि साल मैं, माधव कृष्ण रसाल ।
वर वैराग्य दिनेस यह, उदै भयो तेहि काल ॥ २५ ॥

—:o:—

अन्योक्तिकल्पद्रुम ।

दोहा ।

यह कल्पद्रुम बुधसुखद अरथ अनूप उदार ।
विरच्यो दीनदयालगिरि अभिमत-फलदातार ॥१॥

मंगलाचरण कुंडलिया ।

बंदों मंगलमय विमल ब्रजसेवक सुखदैन ।
जो करि-वर-मुख मूक ह्वी गिरा नचाव सुखैन ॥
गिरा नचाव सुखैन सिद्धदायक सबलायक ।
पसुपतिप्रिय हियबोधकरन निरजर गननायक ॥
बरनै दीनदयाल दरसि पदद्वंद अनंदों ।
लम्बोदर मुदकंद देव दामोदर बंदों ॥२॥

कल्पद्रुम ।

दानी हौ सब जगत में एकै तुम मंदार ।
दारन दुख दुखियान के अभिमत-फलदातार ॥
अभिमत-फलदातार देवगन सेवैं हित सों ।
सकल संपदा सोह छोह किन राखत चित सों ॥
बरनै दीनदयाल छाँह तव सुखद बखानी ।
ताहि सेइ जो दीन रहै दुख तौ कस दानी ॥३॥

षट्ऋतु-वर्णन तत्र बसंत ।

हितकारी ऋतुराज तुम साजत जग आराम ।
सुमन सहित आसा भरो दलहि करो अभिराम ॥

दलन्हि करो अभिराम कामप्रद द्विज गुन गावैं ।
लहि सुबास सुखधाम बातबर ताप नसावैं ॥
बरनै दीनदयाल हिये माधव धुनि प्यारी ।
श्रवन सुखद सुखबैन विमल विलसैं हितकारी ॥४॥

लूटे साखिन अपत करि सिसिर सुसजे बसंत ।
दै दल सुमन सुफल किये सो भल सुजस लसंत ॥
सो भल सुजस लसंत सकल द्विजगन गुन गावैं ।
अमल कमल जल जीव हंस हरि बर सुख पावैं ॥
बरनै दीनदयाल दुसह दुख तें द्रुम छूटे ।
भे तुरंत विकसंत अंत अतिसै जे लूटे ॥५॥

तौलों हे ऋतुराज नहिं कोकिल काग विचार ।
श्याम श्याम रँग एक से सोहत एकै डार ॥
सोहत एकै डार काक कछु वाक न बोलै ।
ऐंड़ो रहै निसंक तासु हाँसी करि डोलै ॥
बरनै दीनदयाल नहीं गुन आवत जौ लों ।
काक कोकिला ज्ञान जात नहिं जाने तौ लों ॥६॥

ग्रीष्म ।

ग्रीषम तुम ऋतुराज के पाले दीन सुसाखि ।
तिन को दाहत हौ कहा दावानल में माखि ॥
दावानल में माखि जारि फिर राख उड़ाई ।
उन दीनन की दशा देखि नहिं दाया आई ॥
बरनै दीनदयाल द्विजन तापत क्यों भीखम ।
मित्रहु तुमरे संग चढ़ै वृष दारुन ग्रीषम ॥७॥

सुखिया जे जे तव रहे लहि ऋतुराज उमंग ।
ते सब अब दुखिया भए हे ग्रीषम तुव संग ॥

हे ग्रीषम तुव संग साखि सर सूखि गए हैं।
विकल कमल द्विजराज सकल छविछीन भए हैं॥
बरनै दीनदयाल रह्यो जगप्रान जु सुखिया।
सोऊ तपि दुखदानि भयो जो हो अति सुखिया॥८॥

पावस।

पावस ऋतु सुखदानि जग तुम सम कोऊ नाहिं।
चपलाजुत घनस्याम नित विहरत हैं तव माहिं॥
विहरत हैं तव माहिं निलकंठहु सुखदाई।
अंबर देत सुहाय द्विजन की करत सहाई॥
बरनै दीनदयाल सकल सुख तो सुखमा-बस।
एकै हंस उदास रहे काहे हे पावस॥९॥

शरद।

पाई छवि द्विजराज कबि गुरुवर अंबर सोह।
दरे दरद हे सरद हिय करे मोद संदोह॥
करे मोद संदोह धरे गुन सज्जन केरे।
कुवलय खरे विकास भरे भासैं चहुँ फेरे॥
बरनै दीनदयाल जगत के तुम सुखदाई।
करिये कहा प्रशंस हंस विलसैं छवि पाई॥ १० ॥

हेमंत।

आवत ही हेमंत तो कंपन लगो जहान।
कोक कोकनद भे दुखी अहित भये जगप्रान॥
अहित भये जगप्रान संग जबहीं तुव पाए।
दुखद भए द्विजराज मित्र निज तेज घटाए॥
बरनै दीनदयाल दीन द्विज पाँति कँपावत।
कामिन को भो मोद एक ही तो जग आवत॥११॥

शिशिर ।

गाये सुजस समूह तो कविराजन अवदात ।
फैली महिमा रावरी महिमंडल में ख्यात ॥
महिमंडल में ख्यात फाग रागन को गावैं ।
शिशिर सु आप प्रसाद जगत सबही सुख पावैं ॥
बरनै दीनदयाल कुंद मिस तो जस छाये ।
एक विचारे पात तिने उतपात लगाये ॥ १२ ॥

पंचतत्वविषये अन्योक्तिः । आकाश ।

आपै व्यापक जगत के आप सरिस कोउ नाहिं ॥
सकल लोक रचना सजै हे अकाश तुव मांहि ।
हे अकाश तुव माहिं मित्र द्विजराज विराजैं ॥
तुमैं बीच सुचि जानि आनि घनस्यामहु छाजैं ।
बरनै दीनदयाल जाय जस बरनो कापै ॥
गहो न संग उपाधि रहो अति निरमल आपै ॥१३॥

पवन ।

जहँ धरि पीत पराग पट वर सम कियो विहार ।
तिहि बन पवन जती भयो रमत रमाये छार ॥
रमत रमाये छार घोर ग्रीषम दव लागे ।
दुख में मधुकर सखा संग सबही तजि भागे ॥
बरनै दीनदयाल रही छवि कुसुमाकर भरि ।
दूलह बन्यो समीर रम्यो पट पीरो जहँ धरि ॥१४॥

जिन तरु को परिमल परसि लियो सुजस सब ठाम ।
तिन भंजन करि आपनो कियो प्रभंजन नाम ॥
कियो प्रभंजन नाम बड़ो कृतघन बरजोरी ।
जब जब लगी दवागि दियो तब झोकि झकोरी ॥

बरनै दीनदयाल सेउ अब खल! थल मरु कों।
लै सुख सीतल छाँह तासु तोरयो जिन तरु को ॥१५॥

लागी भूति अगेह नित अलिगन सिख्य विसेख।
सरल साल भंजत मरुत करनी खल मुनिबेख॥
करनी खल मुनिबेख फिरै भरमत सब जग को।
नहीं छमा में रहै अधर पथ गहै कुमग को॥
बरनै दीनदयाल बनो जग प्रान विरागी।
जम आसा तें रमै अहो विरही दुख लागी ॥१६॥

अनल।

भीखन दुसह सुभाव तुव सुनो अनल जग माहिं।
करत कोटि अपराध ही तऊ तजत कोउ नाहिं॥
तऊ तजत कोउ नाहिं बगर पुर नगर जरावत।
हित सों वल्लभ मानि तुमैं ढूँढ़न को जावत॥
बरनै दीनदयाल तेज सब करैं निरीखन।
तुम बिन सरै न काज जदपि जग हौ अति भीखन ॥१७॥

जल।

हे जल वेग-तरंग तें करै विलग मति मीन।
ये तो तेरे विरह तें ह्वैहैं प्रान-विहीन॥
ह्वैहैं प्रान-विहीन देखि दसरथ को बानो।
प्रिय को देख्यो नाहिं प्रान को कियो पयानो॥
बरनै दीनदयाल नहीं जिन प्रेम किये पल।
ते किमि जानैं पीर वियोगीजन की हे जल ॥१८॥

भूतल।

भूतल तौ महिमा बड़ी फैल रही संसार।
छमाशील को कहि सकै सहत सकल के भार॥

सहत सकल के भार धराधर धीर धरे हो।
पारावार अपार धार सिर क्रीट करे हो॥
बरनै दीनदयाल जगो जग है जस ऊजल।
सब की छमत गुनाह नाह तुम सब के भूतल॥१६॥

दिवाकर।

लीने आभा आपनी हे अम्बक आधार।
दीजै दरशन प्रगटि कै तम दुख दलो अपार॥
तम दुख दलो अपार निसाचर गाजि रहे हैं।
भूत दीप खद्योत उलूक बिराजि रहे हैं॥
बरनै दीनदयाल कोकनद कोकहु दीने।
कब ह्वै हो हरि उदय तुमै बिन लोक मलीने॥२०॥

निसाकर।

मैलो मृग धारे जगत नाम कलंकी जाग।
तऊ कियो न मयंक तुम सरनागत को त्याग॥
सरनागत को त्याग कियो नहिं ग्रसे राहु के।
लिये हिये में रहो तजो नहिं कहे काहु के॥
बरनै दीनदयाल जोति मिस सो जस फैलो।
है हरि को मन सही कहैं नर पामर मैलो॥२१॥

दानी अमृत के सदा देव करैं गुनगान।
सुनो चंद बंदैं तुमैं मोद निधान जहान॥
मोद निधान जहान संभु सिर ऊपर धारें।
देखि सिंधु हरखाय निकाय चकोर निहारें॥
बरनै दीनदयाल सबै तुमको सुखखानी।
एक चोर बरजोर घोर निंदैं दुखदानी॥२२॥

केतो सोम कला करो करो सुधा को दान।
नहीं चंदमनि जो द्रवै यह तेलिया पखान॥

यह तेलिया पखान बड़ी कठिनाई जाकी।
टूटी याके सीस बीस बहु बाँकी टाँकी।
बरनै दीनदयाल चंद तुम ही चित चेतो॥
कूर न कोमल होंहि कला जो कीजै केतो॥२३॥

पूरे जदपि पियूख तें हरसेखर आसीन।
तदपि पराये बस परे रहो सुधाकर छीन॥
रहो सुधाकर छीन कहा है जो जग बंदत।
केवल जगत बखान पाय न सुजान अनंदत॥
बरनै दीनदयाल चंद हौ हीन अधूरे।
जौ लगि नहिं स्वाधीन कहा अमृत तें पूरे॥२४॥

दीपक।

मित्र नाम को दीप लघु करे कहा रे नास।
वे बर तो अभिधान को अधिको करत प्रकास॥
अधिको करत प्रकास भलाई उनकी छाई।
त्रिभुवन भवन-मँझार पूजि सब करैं बड़ाई॥
बरनै दीनदयाल करै तू कौन काम को।
रही कारिखो छाय जराय न मित्र नाम को॥२५॥

रत्न-दीपक।

भाजन सहित सनेह की करत चाह तुम नाहिं।
परहित देत प्रकास वर रतनदीप जग माहिं॥
रतनदीप जग माहिं तुमै चल बात न परसै।
अविचल बिमल सुभाव भाल कालिमा न दरसै॥
बरनै दीनदयाल लसे तातें सिर राजन।
तूल कुवतियाँ त्यागि भए सत-सोभा-भाजन॥२६॥

नीरद ।

दीजै जीवन जलद जू दीन द्विजन को देखि ।
इनको आसा रावरी लागी अहै बिसेखि ।।
लागी अहै बिसेखि देहु कुल कीरति छैहै ।
या चपला है चला लला धौं कित को जैहै ।।
बरनै दीनदयाल आप जग में जस लीजै ।
परम धरम उपकार द्विजन को जीवन दीजै ।।२७।।

करिये सीतल हृदय बन सुमन गयो सुरझाय ।
सुनो विनय घनस्याम हे सोभा सघन सुहाय ।।
सोभा सघन सुहाय कृपा की धारा दीजै ।
नीलकंठ प्रिय पालि सरस जग में जस लीजै ।।
बरनै दीनदयाल तृषा द्विजगन की हरिये ।
चपला सहित लखाय मधुर सुर कानन करिये ।।२८।।

भीखन ग्रीषम ताप ते भयो झाँवरो छीन ।
है यह चातक डावरो अनुग रावरो दीन ।।
अनुग रावरो दीन लीन आधीन तिहारे ।
कहै नाम बसु जाम रहै घनस्याम निहारे ।।
बरनै दीनदयाल पालिये लखि तप तीखन ।
सरी सरोवर सिंधु काहु इन माँगी भीख न ।।२९।।

जग को घन तुम देत हौ गज के जीवनदान ।
चातक प्यासे रटि मरे तापर परे पखान ।।
तापर परे पखान बानि यह कौन तिहारी ।
सरित सरोवर सिंधु तजे इन तुमें निहारी ।।
बरनै दीनदयाल धन्य कहिये यहि खग को ।
रह्यो रावरी आस जन्म भरि तजि सब जग को ।।३०।।

आयो चातक बूँद लगि सब सर सरित बिसारि
चहियत जीवनदानि ! तिहि निरदै पाहन मारि ?
निरदै पाहन मारि पंख बिन ताहि न कीजै।
याहि रावरी आस प्यास हरि जग जस लीजै ॥
बरनै दीनदयाल दुसह दुख आतप तायो।
तृषावंत हित पूर दूर तें चातक आयो ॥३१॥

जिन संसिन को सींच तुम करी सुहरी बहारि।
तिनको दई न चाहिये हे घन ! पाहन मारि ॥
हे घन पाहन मारि भली यह कही न वेदन।
गरलहु को तरु लाय न चहिये निज कर छेदन ॥
बरनै दीनदयाल जगत बसिबो द्वै दिन को।
लेहु कलंक न कंद पालि दलि जिन संसिन को ॥३२॥

भूले अब घन ! तुम कितै प्रथमै याको पालि।
लखत रावरी राह को सूखि गयो यह सालि ॥
सूखि गयो यह सालि अहो अजहूँ नहिं आए।
दै दै नाहक नीर सिंधु में सुदिन गवाँए ॥
बरनै दीनदयाल कहा गरजत हो फूले।
समै न आए काम काम कौने भ्रमि भूले ॥३३॥

चपला संगति तें भयो घन ! तव चपल सुभाव।
ता छिन तें परखन लगे अमृत को तजि ग्राव ॥
अमृत को तजि ग्राव हनत को तुमैं निवारै।
अहो कुसंग प्रचंड काहि जग में न बिगारै ॥
बरनै दीनदयाल रहैगि न है यह सचला।
ता बस अजस न लेहु देहु चित है चल चपला ॥३४॥

बरखै कहा पयोद इत मानि मोद मन माहिं।
यह तो ऊसर भूमि है अंकुर जमिहै नाहिं ॥

अंकुर जमिहै नाहिं बरष सत जो जल दैहै ।
गरजै तरजै कहा बृथा तेरो श्रम जैहै ॥
बरनै दीनदयाल न ठौर कुठौरहि परखै ।
नाहक गाहक बिना बलाहक ह्याँ तू बरखै ॥३५॥

समुद्र ।

रतनाकर ! महि माहँ तुम अति अथाह गंभीर ।
हैं प्रवाह दुस्तर भरे ग्राह प्रबल तो नीर ॥
ग्राह प्रबल तो नीर तीर पैठत बुध हारे ।
धीर न रहै सरीर तरंग निहारि तिहारे ॥
बरनै दीनदयाल जौन मरजीवा जाकर ।
लै मुकुतन को कढ़ै सोइ धनि हे रतनाकर ॥३६॥

गरजे बातन तें कहा धिक नीरधि ! गंभीर ।
बिकल बिलोकैं कूप-पथ तृषावंत तो तीर ॥
तृषावंत तो तीर फिरैं तुहि लाज न आवै ।
भँवर लोल कल्लोल कोटि निज बिभो दिखावै ॥
बरनै दीनदयाल सिंधु तोकों को बरजै ।
तरल तरंगी ख्यात वृथा बातन तें गरजै ॥३७॥

नद ।

सिंधु बड़ाई भूलि जनि नद ? नमि के चलि चाल ।
सहिबो परिहै खार ह्वै बड़वानल की ज्वाल ॥
बड़वानल की ज्वाल नाम रूपहु मिटि जैहै ।
ह्वैहै अधिक अपीव जीव कोउ नीर न छ्वैहै ॥
बरनै दीनदयाल ब्याज की कहा चलाई ।
जैहै मूल नसाय पाय नद सिंधु बड़ाई ॥३८॥

हे नद ! ढाहै तरुन जनि पावस प्रभुता पाय ।
ये तो तेरे तीर पै सोभा रहे बनाय ॥

सोभा रहे बनाय छाय फल फूलन तें अति ।
सीत सुगंध समीर धीर गति हरैं पथिक मति ॥
बरनै दीनदयाल बिबिध खग रटैं भरे मद ।
ये सुख रहिहैं नाहिं गये इन तरु के हे नद ॥३९॥

नदी ।

बहु गुन तो में है धुनी ! अति पुनीत तो नीर ।
राखति यह ऐगुन बड़ो बक मराल इक तीर ॥
बक मराल इक तीर नीच ऊँचो न पिछानति ।
सेत सेत सब एक नहीं ऐगुन गुन जानति ॥
बरनै दीनदयाल चाल यह भली न है सुन ।
जग में प्रगट नसाहिं एक ऐगुन तें बहु गुन ॥४०॥

सर ।

कोलाहल सुनि खगन के सरवर ! जनि अनुरागि ।
ये सब स्वारथ के सखा दुरदिन दैहैं त्यागि ॥
दुरदिन दैहैं त्यागि तोय तेरो जब जैहै ।
दूरहि तें तजि आस पास कोऊ नहिं ऐहै ॥
बरनै दीनदयाल तोहि मथि करिहैं काहल ।
ये चल छल को मूल भूल मति सुनि कोलाहल ॥ ४१ ॥

आए ग्रीषम देखिहैां लघु सर ! तेरी सान ।
कहा करै एतो बड़ो पावस पाय गुमान ॥
पावस पाय गुमान भरो अति भूलि रह्यो है ।
भेक बकन के संग उमंगन फूलि रह्यो है ॥
बरनै दीनदयाल दिना दस के चलि जाए ।
तब देखिहों तरंग तोय वह ग्रीषम आए ॥ ४२ ॥

सर ! तोमैं सरसे बसे भेकन हित बक बंस ।
सारस हैं सारस न हैं तातें रसैं न हंस ॥

वातें रसैं न हंस तोहि तजि दूरि गए हैं ।
तोको मानि मलीन नहीं मनलीन भए हैं ॥
बरनै दीनदयाल बकन हटि तू बरजो मैं ।
सरसैं समुझि न हंस कुसंगति को सर तो मैं ॥४३ ॥

कवित्त ।

अमल अनूप जल मनिमै नीसेनी जासु थल को बखान सुतो हुतो नरवर मैं । मीन के विलास लहरीन के प्रकास जामें लसी दीन-द्याल ऐसी प्रभा ना अपर मैं ॥ चितै रह्यो चंचरीक चारु कंज कलिका को हंस सरदागम रमन गो अधर मैं ॥ सर मैं लगे हैं अवसर मैं समुझि यह सूकर विहार करैं अहो तिहि सर मैं ॥ ४४ ॥

कमल ।

सुनो अरविंद हे मलिंद विन सजै नाहिं केलि मलकीटन की रावरे वितान मैं । जानैं कहा मंद ये सुगंध मकरंद गुन गानैं दीन-द्याल तव माधुरी जहान मैं ॥ तेऊ यह कला लखि भला नहिं कहैं अब मूँदि लेहु मुख गिने जाहुगे मलान मैं । हेरि हंस ओर फेरि खोलिहो भए तें भोर कीजिए सुजान बात भली जो जहान मैं ॥ ४५ ॥

कुंडलिया ।

हारा है हे कंज ! फसि चंचरीक तुव माहिं ।
याको नीके राखिये दुखित कीजिये नाहिं ॥
दुखित कीजिये नाहिं दीजिये रस धरि आगे ।
एक रावरे हेत सबै इन सौरभ त्यागे ॥
बरनै दीनदयाल प्रेम को पैंडो न्यारो ।
बारिज बँध्यो मलिन्द दारु को बेधनिहारो ॥४६॥

दोनेही चोरत अहो इन सम चोर न और ।
इन समीर तें कंज ! तुम सजग रहो या ठौर ॥

सजग रहो या ठौर भौंर रखिये रखवारे।
नातो परिमल लूटि लेहिंगे सबै तिहारे॥
बरनै दीनदयाल रहो ह्वै मित्र अधीने।
भली करत हो रैन कपाट रहत हो दीने॥४७॥

मधुकर।

सेवन करि अतिमुक्त को अलि! पलास मति सेव।
भ्रमत सदा तम रूप है गहन विकल या भेव॥
गहन विकल या भेव देख वेला वर जाती।
गए न मिलिहै फेरि रहैगो पीटत छाती॥
बरनै दीनदयाल सेइ कै सोभित देवन।
कोऊ बहुर मलीन भूत को करै न सेवन॥४८॥

होत उजागर बन बगर मधुप! मलिन तव आस।
तजि माधवी-सुप्रीति को विहरत पास पलास॥
विहरत पास पलास बास नहिं मोहत कामै।
निरस कठोर छलीक छलन की लाली जामै॥
बरनै दीनदयाल कहै कवि जे मतिसागर।
यथा नाम अरु रूप तथा गुन होत उजागर॥४९॥

सेमर मैं भरमै कहा ह्याँ अलि! कछू न बास।
कमल मालती माधवी सेइ न पूरी आस॥
सेइ न पूरी आस बास बन हेरत हारो।
सुरसरि बारि बिहाय स्वाद चाहै जल खारो॥
बरनै दीनदयाल कहा खटपद ये कर मैं।
हैं पग पसु तें ड्योढ़ रमै तातें सेमर मैं॥५०॥

एकै नाम न भूलि अलि इतो कथन मंदार?।
वह औरै मंदार है करनी जासु उदार॥

करनी जासु उदार देत अभिमत फल वेतो ।
याने ठगे सुकादि कला करि हारे केतो ॥
बरनै दीनदयाल सुखद गुन उन्हैं अनेकै ।
यामैं फोकट नाम अडंबर सुनियत एकै ॥५१॥

सोई विपिन विलोकिये हे मधुकर ! इहि बेर ।
हा ! छवि दही निदाघ अब रही राख की ढेर ॥
रही राख की ढेर जहाँ देखी वह सोभा ।
लता सुमनमय देखि सु मन तेरो जहँ लोभा ॥
बरनै दीनदयाल अहो दैवी गति जोई ।
बहै भँवर तू भूलि भवै न विपिन यह सोई ॥ ५२ ॥

भौंरे भूलि न वे भरम लखि इक सोभत भेस ।
कढ़िगो सौरभ सुमन तें रही लालिमा सेस ॥
रही लालिमा सेस कहूँ मकरंद न या मैं ।
पौन पराग उड़ाय गयो कहुँ मोहत का मैं ॥
बरनै दीनदयाल साँझ ढिग आई बौरे ।
चले विहंग बसेर कहा अब भूले भौंरे ॥ ५३ ॥

आई निसि अलि ! कमल तें क्यों नहिं होत उदास ।
नहिं ह्वैहै छन एक में सुखद अंत की बास ॥
सुखद अंत की बास नहीं बरु बंधन पैहै ।
ऐहै कुंजर जबै सखाजुत तो को खैहै ॥
बरनै दीनदयाल भलो बहु लोभ न भाई ।
तजि के रस की आस चलो अब तो निसि आई ॥ ५४ ॥

लै पल एक सुगंध अलि ! अपनो मानि न भूल ।
लैहै साँझ सबेर में वह माली यह फूल ॥
वह माली यह फूल कितै दिन लोटत आयो ।
फूले फूले लेत कली सब सोर मचायो ॥

बरनै दीनदयाल लाल लखि फँसै न है छल ।
लगी बाग में आग भाग रे गंधहि लै पल ॥ ५५ ॥

बौरे लखि ले लालिमा हे भौंरे मति भूल ।
है छलमय पल के असद ए कागद के फूल ॥
ए कागद के फूल सुगंध मरंद न या मैं ।
मृदु माधुरी पराग नहीं अनुरागत का मैं ॥
बरनै दीनदयाल चेत चित मैं इहि ठौरे ।
लुटि जैहै यह बाग छटा छन की है बौरे ॥ ५६ ॥

देखत ना ग्रीषम विषम इहि गुलाब की ओरि ।
सुनो अली ! यह नहिं भली ह्वैहैं कली बहोरि ॥
ह्वैहैं कली बहोरि तबै तुम पायन परिहौ ।
चायन कों करि काह बकायन मैं सिर मरिहौ ॥
बरनै दीनदयाल रहो हो पीतम पेखत ।
यहै मीत की रीति एक से सुख दुख देखत ॥ ५७ ॥

भौंरा ! अंत बसंत के है गुलाब इहि रागि ।
फिरि मिलाप अति कठिन है या बन लगे दवागि ॥
या बन लगे दवागि नहीं यह फूल लहै गो ।
ठौरहि ठौर भ्रमात बड़ो दुख तात सहै गो ॥
बरनै दीनदयाल किते दिन फिरिहै दौरा ।
पछतैहै कर दए गए रितु पीछे भौंरा ॥ ५८ ॥

तौ लों अलि तू बिहरि लै जौ लों मित्र प्रकास ।
पीछे बाँधो जायगो रजनी नीरज पास ॥
रजनी नीरज पास बँधे फिरि स्वास न ऐहै ।
यह तो बिधि को तात कला इत नाहिं चलैहै ॥
बरनै दीनदयाल सुमन सेयो कइ सौ लों ।
बुड़्यो कोकनद नहीं, रही चतुराई तौ लों ॥ ५९ ॥

श्रीहित स्याम बने छली भली पीत छबि गात ।
अली कला निसि नहिं चली गह्यो बली बिधि तात ॥
गह्यो बली बिधि तात बात वह जात रही है ।
जो जन औरहि छलै निदान छलात वही है ॥
बरनै दीनदयाल मित्र बिन जैहो अब कित ।
तब तो रचे प्रपंच रूप करि कपटी श्रीहित ॥ ६० ॥

हंस।

कीजे गमन सुमानसर यह दुखदायक ताल ।
हंस बंस अवतंस हौ मौन गहो इहि काल ॥
मौन गहो इहि काल काक बक खल या ठावैं ।
अति कठोर बरजोर सोर चहुँ ओर मचावैं ॥
बरनै दीनदयाल इनै तजि सुख सों जीजै ।
सठ संगति अतिभीति भूलि तहँ गमन न कीजै ॥ ६१ ॥

मानसचारी हंस करि गंग तरंग बिलास ।
सूकर-क्रीड़ा-सर विषै अब अभाग्यबस बास ॥
अब अभाग्यबस बास हास द्विज करैं चहूँ दिस ।
हा किमि धारैं धीर बीर या पीर कहूँ किस ॥
बरनै दीनदयाल अहो विधि-गति बलिहारी ।
कीच बीच फँसि रह्यो हंस यह मानसचारी ॥ ६२ ॥

नाहीं मानस हंस यह नहिं मुकुतन की रासि ।
यह तो संबुक मलिन सर करटन की मिरियासि ॥
करटन की मिरियासि रहैं याको सठ घेरे ।
तूँ मति भूले धीर जाहु याके नहिं नेरे ॥
बरनै दीनदयाल चलो निरजर सर पाहीं ।
जहाँ जलज की खानि सदा सुख है दुख नाहीं ॥६३॥

हितकारी मानस बिना नहीं हंस चित चैन ।
छिन छिन ब्याकुल बिरहबस सोचत है दिन रैन ॥
सोचत है दिन रैन बैन नीकै नहिं आवत ।
काक बलाकन संग साक तजि समै बितावत ॥
बरनै दीनदयाल मरालहि संकट भारी ।
मानस और न चहै बिना मानस हितकारी ॥६४॥

चक्रवाकी ।

चल चकई तिहि सर बिषै जहँ नहिं रैनि बिछोह ।
रहत एकरस दिवस ही सुहृद हंस-संदोह ॥
सुहृद हंस संदोह कोह अरु दोह न जाकै ;
भोगत सुख अम्बोह मोह दुख होय न ताके ॥
बरनै दीनदयाल भाग्य बिन जाय न सकई ।
पिय मिलाप नित रहै ताहि सर तू चल चकई ॥६५॥

बक ।

चाली हंसन की चलै चरन चोँच करि लाल ।
लखि परिहै बक ! तव कला झख मारत ततकाल ॥
झख मारत ततकाल ध्यान मुनिबर सो धारत ।
बिहरत पंख फुलाय नहीं खज अखज विचारत ॥
बरनै दीनदयाल बैठि हंसन की आली ।
मंद मंद पग देत अहो यह छल की चाली ॥६६॥

मंडूक ।

दादुर काकोदर दसन परे मसन मति ध्याउ ।
कहा लहैगो स्वाद को एक स्वास की आउ ॥
एक स्वास की आउ ग्रास यह तोहि करैहै ।
तोको नहिं विस्वास न कछु मन त्रास धरैहै ॥

बरनै दीनदयाल तोहि लखि बड़ो बहादुर ।
अरिमुख रह्यो समाय अजौं नहिं संकत दादुर ।।६७।।

कूप ।

पथिकन की अँसुवान को जल दरसाय अलीक ।
किन किन की मति नहिं छली तू मरुकूप ! छलीक ।।
तू मरुकूप छलीक सून हिय तामस बासा ।
खाली धुनि सुनि परै नहीं जीवन की आसा ।।
बरनै दीनदयाल कला न चलै गुनि जन की ।
गुन भो बृथा बिसाल सुमति हारी पथिकन की ।।६८।।

दोहा ।

यह अन्योक्ति-सुकल्पद्रुम साखा प्रथम बखानि ।
बिरची दीनदयालगिरि कवि द्विजवर सुखदानि ।।६९।।

इति श्रीकाशीवासी दीनदयालगिरिविरचिते अन्योक्तिकल्पद्रुमग्रंथे प्रथम शाखा समाप्ता ।।

भूधर

बलिहारी भूधर तुमैं धीर करैं गुन गान ।
सानमान कहि अचल कहि सब जग करैं बखान ।।
सब जग करैं बखान सकल जीवन को पालो ।
तीछन बात दवागि दाह तें नेक न हालो ।।
बरनै दीनदयाल कौन तुम सो उपकारी ।
सुखद रतन की खानि बार बहु ह्वै बलिहारी ।।१।।

मणि ।

चिंतामनि अरु नीलमनि पद्मराग सुप्रवीन ।
सुन्यो न पारस ! तुम बिना लोह कनक कोउ कीन ।।

लोह कनक कोउ कीन नहीं जग में जे मानिक ।
चमकैं ठौरहिं ठौर जगे हैं जे जेहि खानिक ॥
बरनै दीनदयाल अहो पारस तुम हो धनि ।
कियो कुधातु महीस मुकुट क्या है चिंतामनि ॥२॥

नीलमणि ।

मरकत पामर कर परी तजि निज गुन अभिमान ।
इतै न कोऊ जौहरी ह्याँ सब बसैं अजान ॥
ह्याँ सब बसैं अजान काँच तो को ठहरावैं ॥
तदपि कुसल तू मान जदपि यहि मोल बिकावैं ॥
बरनै दीनदयाल प्रवीन हृदै लखि दरकत ।
अहो करम गति गूढ़ परी कर पामर मरकत ॥३॥

मुक्ता ।

मेल्यो मुख घँसि सूँघ फिरि फेक्यो कीस अजान ।
मुक्ता ! बात कुशल भई जौ नहिं हन्यौ पखान ॥
जौ नहिं हन्यो पखान बन्यो तौ रूप अजौं लों ।
मिलैं जौहरी तोल मोल बिकिहै कइ सौ लों ॥
बरनै दीनदयाल खेल कपि कैसो खेल्यो ।
बच्यो आपनी भाग्य अहो मुक्ता मुख मेल्यो ॥ ४ ॥

रंग ।

लीने गुरुता गरब को अरे रंग ! मति भूलि ।
रंग न तेरो है कछू सुबरन संग न तूलि ॥
सुबरन संग न तूलि तासु गुन को नहिं जाने ।
धिग तव तौल प्रताप आप गुन आप बखाने ॥
बरनै दीनदयाल तिनै नृप क्रीटन कीने ।
तू पामर तिय पाय रहै लपटाय मलीने ॥ ५ ॥

लोहा।

लोहा ! द्रोह न कीजिये पारसमनि के साथ।
ताहि परसि पैहै प्रभा भूपमनिन के माथ॥
भूपमनिन के माथ तोहि लखि जग हरखैगो।
करि करि कोटि प्रनाम सुमन तो पै बरखैगो॥
बरनै दीनदयाल कौन सतसंग न सोहा।
पैहै रूप अनूप बढ़ैगी कीमति लोहा॥ ६॥

कानन।

राखे जरत दवागि तें दैदै धार उदार।
कानन गहन घनस्याम को वा दिन को उपकार॥
वा दिन को उपकार साखि ये कोकिल कूजैं।
फूली लता अपार सुभृंगन के गन गूँजैं॥
बरनै दीनदयाल धन्य तिनको जग भाखै।
जे मानैं उपकार तिन्हैं बुध मैं गनि राखै॥ ७॥

सामान्य वृत्त।

पाई तुम प्रभुता भली चहूँ दिसि अलि गुंजार।
हे तरु तटिनीतीर के करि लै कछु उपकार॥
करि लै कछु उपकार आज ऋतुराज विराजै।
डार सुमन के भार रहो झुकि के छवि छाजै॥
बरनै दीनदयाल पथिन दै छाँह सोहाई।
पच्छिन को प्रतिपाल करै किन प्रभुता पाई॥ ८॥

एहो द्रुम या सिसिर को दीजे दान तुरंत।
दीनें सूखे पात के दैहै हरो बसंत॥
देहै हरो बसंत फूल फल दलन समेते।
पैहो पुंज सुगंध भृंग गूँजेंगे केते॥

बरनै दीनदयाल लसैगो सोभा से हो।
भाखत वेद पुरान दिये बिन मिलै न एहो॥ ९॥

उपकारी हौ द्रुम महा हम भाखत तुव पाहिं।
राखहु नाहिं दुजिह्व को हिय कोटर के माहिं॥
हिय कोटर के माहिं देख दुख तो पच्छिन को।
पथी न आवैं पास त्रास उपजै लखि तिन को॥
बरनै दीनदयाल सकल गुन है तुव भारी।
यह कुसंग ततकाल त्यागिथे जग-उपकारी॥ १०॥

मन को खेद न करिय तरु! पच्छिन को भरु पाय।
भाखत साखा रावरी सोभा रहे बनाय॥
सोभा रहे बनाय सुफल में तुम को चाहैं।
सेवत प्रेम लगाय कहें जस दिसि के माहैं॥
बरनै दीनदयाल धीर रखिये निज तन को।
मंद बात को पाय कँपाइय नाहिं सुमन को॥ ११॥

वा दिन की सुधि तोहि को भूलि गई कित साखि।
बागवान गहि घूर तें ल्यायो गोदी राखि॥
ल्यायो गोदी राखि सींचि पाल्यो निज कर तेतें।
भूलि रह्यो अब फूलि पाय आदर मधुकर तें॥
बरनै दीनदयाल बड़ाई है सब तिन की।
तू झूमै फल भार भूलि सुधि को वा दिन की॥ १२॥

विशेषवृक्षः। तत्र चंदन।

चंदन! वंदनजोग तुम धन्य द्रुमन में राय।
देत कुकुज कंकोल लों देवन सीस चढ़ाय॥
देवन सीस चढ़ाय कौन तुव रीस करैगो।
बड़े बड़े तरु ईस सुगंधन पीस मरैगो॥

बरनै दीनदयाल पाय संताप निकंदन ।
नंदन बन तें आदि करैं तब बंदन चंदन ॥ १३ ॥

तुलसी ।

सब तरु धरा धरे रहे बेख बड़े प्रिय कीस ।
एकै ही तुलसी लसी लघु सरूप हरिसीस ॥
लघु सरूप हरिसीस रीस को तासु करैंगे ।
बास बिसे तरु ईस खीस ह्वै भार जरैंगे ॥
बरनै दीनदयाल बड़ो छोटो जनि चित धरु ।
भाग्यवंत है बड़ो बड़ो नहिं कहिये सब तरु ॥ १४ ॥

रसाल ।

एहो धीर रसाल ! अति सोहत हौ सिरमौर ।
साखा बरनै रावरी द्विजवर ठौरे ठौर ॥
द्विजवर ठौरे ठौर सुफल रावरो ही चाहैं ।
निकसे जो तव बात सुमन सो सुधी सराहैं ॥
बरनै दीनदयाल धन्य वा धात्री के हो ।
जातें प्रगटे आय आप उपकारी एहो ॥ १५ ॥

जेतो फल तैं नमत हो एहो धीर रसाल ! ।
तेतो ऊँचे होत हो सोभा होति बिसाल ॥
सोभा होति बिसाल बात तव है सुखदायक ।
रस तें करो निहाल तुमै सेवैं द्विजनायक ॥
बरनै दीनदयाल हिए हरि सों हित केतो ।
धरे रहैं छवि स्याम नमित रस देखैं जेतो ॥ १६ ॥

पाई तुम मृदुता नई भई कठिनई दूरि ।
गई स्यामता संग तजि छई लालिमा भूरि ॥
छई लालिमा भूरि पूरि आई मधुराई ।
सोभा बसी बिसाल नसी वह खोटि खटाई ॥

बरनै दीनदयाल सुगंध कला छिति छाई ।
जीवनमुक्त रसाल भये सुच संगति पाई ॥ १७ ॥

एहो सुमन समै सखे रखे रहो पिक डाल ।
आप विसाल रसाल हो एऊ बैनरसाल ॥
एऊ बैनरसाल मधुर सुरसाज सजैंगे ।
जाको देखि समाज सबै द्विजराज लजैंगे ॥
बरनै दीनदयाल महा महिमा महि लेहो ।
पै यह काग अभाग दाग गुनि तजिये एहो ॥ १८ ॥

ऐसी संगति रावरे संग सजै न रसाल ! ।
कागन के गन ये तुमै घेरि रहे इहि काल ॥
घेरि रहे इहि काल कहा कुसुमाकर आए ।
रसहु सुगंध समेत वृथा तुम देत बहाए ॥
बरनै दीनदयाल दई गति भई अनैसी ।
कोकिल कीर मलिंद तीर नहिं संगति ऐसी ॥ १९ ॥

जानैं नहिं तव माधुरी मंद मरंद सुगंध ।
हे रसाल अज कूट कपि कोल क्रमेलक अंध ॥
कोल क्रमेलक अंध फूल फल मूल विनासक ।
साख विदारनिहार दुखद दुतिग्रासक त्रासक ॥
एकै दीनदयाल रसज्ञ सिलीमुख मानैं ।
महामीत महि मांह प्रीति महिमा तब जानैं ॥ २० ॥

सुनिये कल कोमल कलित हे सद सुखद रसाल ।
ये सुक पिक सारंग हैं सोभाकरन विसाल ॥
सोभाकरन विसाल डाल सेवैं तव हित सों ।
चोंच चरन के घाय पाय नहिं दुखिये चित सों ॥
बरनै दीनदयाल चूक मन मै जनि गुनिये ।
जानि मधुर सुखदानि बानिबर इन की सुनिये ॥ २१ ॥

कदली ।

रंभा ! झूमत हौ कहा थोरे ही दिन हेत ।
तुम से केते ह्वै गए अरु ह्वैहैं इहि खेत ॥
अरु ह्वैहैं इहि खेत मूल लघु साखाहीने ।
ताहू पै गज गहै दीठि तुम पै प्रति दीने ॥
बरनै दीनदयाल हमैं लखि होत अचंभा ।
एक जन्म के लागि कहा झुकि झूमत रंभा ॥ २२ ॥

रंभाबन ! तुम निज विखे राखि गजन के ग्राम ।
चहत कुसल फल फूल को तिन खल तें बसु जाम ॥
तिन खल तें बसु जाम गुनत रखिबो दल अपनो ।
साखा राखै कौन मूल हू ह्वैहै सपनो ॥
बरनै दीनदयाल बात यह बड़ी अचंभा ।
बैरिन को सहवास राखि सुख चाहत रंभा ॥ २३ ॥

पलास ।

दिन द्वै पाय बसंत-मद फूल्यो कहा पलास ।
ग्रीखम भीखम सीस पै नहिं लाली की आस ॥
नहिं लाली की आस फूल सब तेरे झरिहैं ।
पीछे तोहि न दली अली कोउ आदर करि हैं ॥
बरनै दीनदयाल रहो नय कोमल किन ह्वै ।
ये नख नाहर रूप रहैंगे तेरे दिन द्वै ॥ २४ ॥

लोने कंटक बन करै बिरही मन झख त्रास ।
याही तें तेरो कबिन राख्यो नाम पलास ॥
राख्यो नाम पलास लाल मुख कोपित धारो ।
लह्यो न एक कलंक बिना कछु तातें कारो ॥
बरनै दीनदयाल संग सुकहू को कीने ।
माधव सों मिलि मूढ़ तऊ छल कंटक लीने ॥ २५ ॥

सालमली ।

किन किन की मति नहिं छली सालमली करि अंध ।
गीधे गीध अमिख डली जानत अली सुगंध ॥
जानत अली सुगंध भली लाली सुक भूले ।
जानि अँगार चकोर ओर चहुँतें अनुकूले ॥
बरनै दीनदयाल लखै गति को छिन छिन की ।
यह छलरूप लखाय छली नहिं मति किन किन की ॥२६॥

सेमल ! बिना सुगंध तू करत मालती रीस ।
छलि रे भ्रम दै सुकन को नहिं जैहै हरिसीस ॥
नहिं जैहै हरिसीस भूलि जिन लखि निज लाली ।
जैहै बेगि बिलाय ल्याय मति मद को खाली ॥
बरनै दीनदयाल जगत में बिन गुन जे खल ।
करैं बृथा अभिमान जथा तरु मैं तू सेमल ॥ २७ ॥

आक ।

तो मैं बहु ऐगुन भरे अरे आक मतिहीन ।
कहा जान केहि हेत तें हर तोसों हित कीन ॥
हर तोसों हित कीन तऊ उन केरि बड़ाई ।
तू मति मोहे मूढ़ मानि अपनी प्रभुताई ॥
बरनै दीनदयाल बात सुनि भाखत जो मैं ।
सिव की दाया एक आक बहु ऐगुन तो मैं ॥ २८ ॥

नाहीं कछु फल फूल तो बज्यो नाम मंदार ।
ताप गयो किन पथिन को सेवत तुमरी डार ॥
सेवत तुमरी डार कौन बिश्राम लह्यो है ।
नहिं पराग मकरंद मलिंदन भूलि रह्यो है ॥
बरनै दीनदयाल खगोहु न आवत पाहीं ।
केवल छल मैं नाम बज्यो कहुँ बासहु नाहीं ॥ २९ ॥

तजि ऋतुपति की माधवी आयो इह सारंग ।
आक आदरै ताहि किन दुर्लभ याको संग ॥
दुर्लभ याको संग राखि जस लै ग्रीखम भरि ।
ये तो पत्र प्रसून जाहिंगे पावस में सरि ॥
बरनै दीनदयाल कहै को दैवी गति की ।
तो पै भ्रमै मलिंद माधवी तजि रितुपति की ॥ ३० ॥

बंस ।

तो मैं बंस ! न सार कछु बकिबोहू अभिमान ।
ता तें मलै न तोहि को बिरचे आप समान ॥
बिरचे आप समान न तो हिय सून निहारत ।
तेरे पास हुतास तासु तें तिनहूं जारत ॥
बरनै दीनदयाल दोख तिनको न कहों मैं ।
गंधसार का करै सार है बंस न तो मैं ॥ ३१ ॥

दाड़िम ।

दारो तुम या बाग मैं कहा हँसो मुख खोलि ।
दिना चार की औध मैं लीजै नैक कलोलि ॥
लीजै नैक कलोलि दसन की जो यह लाली ।
जैहै कहूँ बिलाय होयगी डाली खाली ॥
बरनै दीनदयाल लगे खग हैं दिसि चारो ।
भीतर काटत कीट कौन रँग रातो दारो ॥ ३२ ॥

बबूर ।

दुख दै जिन इन पथिन को एरे क्रूर बबूर ।
जगकंटक कंटकन तें करि राख्यो मग धूर ॥
करि राख्यो मग धूर दूर के थकित बिचारे ।
छाय पाय पछिताय लगे फल फूल नकारे ॥

बरनै दीनदयाल दया करके कछु सुख दै ।
हिय कठोर अति घोर अंत बनि कोल्हू दुख दै ॥ ३३॥

करीर ।

धारयो दलन करीर ! तुम बहु रितुराजन पाय ।
यहै त्याग दृढ़ देखि कै प्रिय कीनो जदुराय ॥
प्रिय कीनो जदुराय रमै तव कुंजनि माहीं ।
और सबै तरुराज ताहि दिसि देखत नाहीं ॥
बरनै दीनदयाल ऊँच नहिं नीच विचारयो ।
जो जग धरयो विराग ताहि हरि हित सों धारयो ॥३४॥

असोक ।

सेवत तुमैं असोक ! यह माली गयो बुढ़ाय ।
अधिकै कियो ससोक तुम फोकट नाम सुनाय ॥
फोकट नाम सुनाय नहीं कछु काम सरै है ।
लगे वामपद अहो फूल अभिराम धरै है ॥
बरनै दीनदयाल सरल को कछू न देवत ।
योंहीं आसा लागि तुमैं निरफल को सेवत ॥३५॥

चंपक ।

धारे खेद न रहिय चित हे चंपक कमनीय ।
कहा भयो अलि मलिन हिय जौं नहिं आदर कीय ॥
जौं नहिं आदर कीय मानि तेहिं मंद अभागी ।
कुटज करीर कुसाखि कुसुम को भो अनुरागी ॥
बरनै दीनदयाल नील नीरद सम कारे ।
कुसल रहैं वे केस कुसेसै नैनि सुधारे ॥ ३६ ॥

निम्ब ।

एकै ऐगुन देखि कै नीब न तजो सुजान ।
याकी कटुता नहिं गुनो करि बहुगुन पहिचान ॥

करि बहुगुन पहिचान प्रथम सब रोग बिनासैं ।
जो कोउ सेवै याहि ताहि पीछे सुख भासै ॥
बरनै दीनदयाल छाँह मुद देति अनेकै ।
यह सीतलता खानि तजो कटु देखि न एकै ॥३७॥

कपास ।

जग मैं गुनमय करि तुमैं बरनै सकल महान ।
कहा भयो जो नहिं कियो चपल एक अलि मान ॥
चपल एक अलि मान कियो नहिं कछू नसायो ।
हे कपास सहि खेद धन्य परछेद दुरायो ॥
बरनै दीनदयाल स्याम याको गनि ठग मैं ।
मधुप मंद किमि जान तुमैं बुध जानैं जग मैं ॥३८॥

तुम्बिका ।

एरी घूरी तूमरी अहो धन्य तव भाग ।
मज्जति सुरसरि नीर मैं साधुप्रसाद प्रयाग ॥
साधुप्रसाद प्रयाग टूटि जब तें तू आई ।
तब तें भई सुरंग मलीन कुसंग बिहाई ॥
बरनै दीनदयाल छुटी कटुता सब तेरी ।
सुधरी संगति पाय घूर की तुमरी एरी ॥३९॥

गेंदा ।

माली की सहि सासना सुनि गेंदे मति भूल ।
बिन सिर दै पैहै नहीं बहै हजारे फूल ॥
बहै हजारे फूल जौन सुरसीस चढ़ैगो ।
दए आपनो आप अधिक तें अधिक बढ़ैगो ॥
बरनै दीनदयाल किती तू पैहै लाली ।
तेरे ही हित हेत देत सिख तोकों माली ॥ ४० ॥

गुलाब ।

सुनिये मीत गुलाब अलि क्यों मन रहिहै रोकि ।
रहत न धीरज रसिक चित कुसुमित कली बिलोकि ॥
कुसुमित कली बिलोकि चहूँ दिसि भरत भाँवरी ।
ताहि न कंटक बेधि करो मति बिकल बावरी ॥
बरनै दीनदयाल पालि हित अपनो गुनिये ।
रस पराग जुत राग सुगंधहि दै जस सुनिये ॥४१॥

नाहीं भूलि गुलाब ! तू गुनि मधुकर गुंजार ।
यह बहार दिन चार की बहुरि कटीली डार ॥
बहुरि कटीली डार होहिंगी ग्रीखम आए ।
लुवैं चलैंगी संग अंग सब जैहैं ताए ॥
बरनै दीनदयाल फूल जौलों तो पाहीं ।
रहे घेरि चहुँ फेरि फेरि अलि ऐहैं नाहीं ॥४२॥

सामान्य कुसुम ।

मोहै मति सुमना ! मना करौ बारही बार ।
महाछली है मधुप यह कहा करै इतबार ॥
'कहा करै इतबार बाहिरै भीतर कारो ।
गनिकादिक में रमै चपल भरमै दिस चारो ॥
बरनै दीनदयाल लालची यह रस को है ।
सुनि याकी धुनि मंद माधुरी तैं मति मोहै ॥४३॥

प्यारे करै गुमान जनि सुनि प्रसून ! सिख मोरि ।
तो समान इहि बाग में फूलि भरे हैं कोरि ॥
फूलि झरे हैं कोरि बहोरि किते बिनसैहैं ।
या बहारि दिन चारि गए फिरि ग्रीखम ऐहैं ॥
बरनै दीनदयाल न करि सारंगहिं न्यारे ।
तो रस जान निहार बड़े हितकारक प्यारे ॥४४॥

सोहै नहिं सज सुमन ! तो अज ढिग नखरो नाज ।
कौन आदरै बलि बिना अलि सुरसिक सिरताज ॥
अलि सुरसिक सिरताज भाँवरी भरै भाव सों ।
रस पराग अनुराग तासु चित लाग चाव सों ॥
बरनै दीनदयाल खोलि दृग तिहि किन जोहै ।
तो गुन को रिझवार एक यह सारंग सोहै ॥४५॥

सामान्य विहंग ।

सूको तरु सेवत कहा विहँग देवद्रुम सेव ।
सजैं सुकादिक धीर जहं सुन्यो न ताको भेव ॥
सुन्यो न ताको भेव फूल फल सौरभ जामैं ।
सदा रहै रस लसो बसो कुसुमाकर तामैं ।
बरनै दीनदयाल लाल तू तो अति चूको ।
सुखद कलपतरु त्यागि दुखद सेवै द्रुम सूको ॥४६॥

नहीं तरंगी तीर मैं ह्वै खग बास बनाय ।
यह सुतंत्र को कहि सकै दैहै कहूं बहाय ॥
दैहै कहूं बहाय हाय करिकै सिर धुनिहै ।
कोऊ नहीं सहाय पाय दुख पीछे गुनिहै ॥
बरनै दीनदयाल बड़ी यह है बहुरंगी ।
अहै चपल उड़ि चलो भलो यह नहीं तरंगी ॥४७॥

विशेष विहंग—तत्र शुक ।

सुनिए हे सुक यह नहीं सुखद रसाल रसाल ।
है सेमल छलरूप मति भ्रमो सुमन लखि लाल ॥
भ्रमो सुमन लखि लाल भँवर रस गंध न पायो ।
जानि अँगार चकोर प्यार करि डार लुभायो ॥
बरनै दीनदयाल कला याकी बहु गुनिए ।
पीछे तूल बढ़ाय सूल हूलत है सुनिए ॥ ४८ ॥

नहिं दाड़िम सैलूख यह सुक न भूलि भ्रम लागि ।
दल तें सूलिन को छल्यो चोंच बचै तो भागि ॥
चोंच बचै तो भागि जाहु ना तो पछतैहो ।
याके फल के बीच बड़ो श्रम कछू न पैहो ॥
बरनै दीनदयाल लाल लखि लोभ्यो है किम ।
यह तो महाकठोर भूलि सुक है नहिं दाड़िम ॥४६॥

तजि कै दाड़िम मूढ़ सुक खान गयो कित बेल ।
काँटनि सों बेधित भयो भूलि गयो सब खेल ॥
भूलि गयो सब खेल पंख लासा लपटायो ।
गिरयो राख मैं जाय जगत में काग कहायो ॥
बरनै दीनदयाल कहा बहु रोवै लजि कै ।
करु मति को धिक्कार कठिन सेयो मृदु तजि कै ॥५०॥

हे सुक प्रीति न कीजिए इन कागन के संग ।
कहुँ भुलाय लैजाय के करिहैं चोंचहि भंग ॥
करिहैं चोंचहि भंग नारियल फल के माहीं ।
निरफल जैहैं सकल कला पैहै कछु नाहीं ॥
बरनै दीनदयाल जानि इनको दुख हेतुक ।
न तु पछतैहै अंत खोय अपनो गुन हे सुक ॥५१॥

पछितान्यो इक बेर तू यह सेमल फल बीच ।
फिरि सुक सेवन ताहि को लगो कहा रे नीच ॥
लगो कहा रे नीच वहै तरु जानत नाहीं ॥
लखि लखि लाल प्रसून सून मोहत ता माहीं ॥
बरनै दीनदयाल अजौं लगि नहिं पहिचान्यो ।
बेर बेर लै तूल सूल सहि तू पछितान्यो ॥५२॥

तोरै चोंच न कीर ! तू यह पंजर है लोह ।
खुलिहै खुले कपाट के तजि कुल्हिया को मोह ॥

तजि कुल्हिया को मोह यही बंधन है तोको ।
यासों प्रेम लगाय छुटन पाए कहु को को ।।
बरनै दीनदयाल छुटै जौं नेह न जोरै ।
तो बसिहै आनंद बाग हठि चोंच न तोरै ।।५३।।

कोकिल ।

कोकिल लोचन ललित करि करिय न कोप विखाद ;
भयो कि मूढ़ द्रयो न जो सुनि कै पंचम नाद ।।
सुनि कै पंचम नाद द्रवैं सुर चतुर विवेकी ।
ते न द्रवैं जिहि लगै सुखद बानी कौवे की ।।
बरनै दीनदयाल लगै प्रिय साँपनि को बिल ।
कहा करै ते रंगभौन सुनिये हे कोकिल ।।५४।।

हे पिक पंचम नाद को नहिं भीलन को ज्ञान ।
यहै रीझिबो मानि तू जो न हनै हिय बान ।।
जो न हनै हिय बान बड़ी करुना इन केरी ।
मारैं ये मृगजूथ कहा गिनती है तेरी ।।
बरनै दीनदयाल थको रटि के तुम केतिक ।
ये नहिं रीझनिहार जाहु बन को तजि हे पिक ।।५५।।

कोकिल दिल दै कीर सों करिए प्रेम सुहात ।
दुहुँ रसाल बन सघन के बिहरन-सील कहात ।।
बिहरन-सील कहात कंठ कल कोमल दोऊ ।
सुजस जगत के माहिं नाहिं तुव पटतर कोऊ ।
बरनै दीनदयाल रहो इनहीं तें हिल मिल ।
प्रीति समान बखान करैं कविजन हे कोकिल ।।५६।।

सोरैं कीस करैं महा किलकारैं इत कोल ।
काक बलाक जुरे रटैं कोकिल ह्याँ मति बोल ।।

कोकिल ह्यां मति बोल नहीं इत बात तिहारी ।
कहा व्यजन की बाय जहाँ बहु बही बयारी ॥
बरनै दीनदयाल किते सुर पंचम जोरैं ।
सुनै कौन या ठौर जितै ये खल के सोरैं ॥ ५७ ॥

चातक ।

लागे सर सरवर परयो करयो चोंच घन ओर ।
धनि धनि चातक प्रेम तव पन पाल्यो बरजोर ॥
पन पाल्यो बरजोर प्रान परयंत निबाह्यो ।
कूप नदी नद ताल सिंधुजल एक न चाह्यो ॥
बरनै दीनदयाल स्वाति बिन सबही त्यागे ।
रही जन्म भरि बूँद आस अजहूं सर लागे ॥ ५८ ॥

बरषा भरि बरषत धरा धाराधर धरि धीर ।
कहा दोख चातक तिनै तो मुख परयो न नीर ॥
तो मुख परयो न नीर नदी नद सबही भरिगे ।
पालि किये बहु सालि बालि जग मैं जस करिगे ॥
बरनै दीनदयाल करो मति तुम आमरषा ।
बुझै नहीं तुव प्यास करै जो केतो बरषा ॥ ५९ ॥

काहे चातक बूंदहित सहत उपल पबिपात ।
कहा सरित सर सूखिगे जे भूखित जलजात ॥
जे भूखित जलजात हंस अवली धवली तें ।
सीतल मधुर पुनीत जासु जल भाँति भली तें ॥
बरनै दीनदयाल तिनै तजि सीकर चाहे ।
सोचत लाभ न हानि सहै द्विज दुख को काहे ॥६०॥

मयूर ।

बानी मधुरी बास बन परभा परम बिसाल ।
बरही ऐगुन एक अति भखत कुव्याल कराल ॥

भखत कुव्याल कराल चाल या नहीं भली मैं ।
ये सब गुन के जाल जाहिंगे अजस गली मैं ॥
बरनै दीनदयाल हाल गति यह तो जानी ।
कित वह असन भुजंग कितै यह मृदु बर बानी ॥६१॥

धुरवा नहिं दवधूम है नहिं गरजनि तरु सोर ।
भ्रमबस कूक करै कहा मरै नाच नचि मोर ! ॥
मरै नाच नचि मोर न ए दामिनि की दमकैं ।
एतो घोर हुतास जोर चहुँ ओर सु चमकैं ॥
बरनै दीनदयाल भूलि मति तू मन मुरवा ।
तज यह सिखर कराल जरैगो नहिं ये धुरवा ॥६२॥

चकोर ।

सोच न करै चकोर चित कुहू कु निसा निहारि ।
सनै सनै ह्वैहै उदै राका ससि तम टारि ॥
राका ससि तम टारि दूरि दुख करिहै तेरो ।
धीर धरै किन बीर कहा अकुलाय घनेरो ॥
बरनै दीनदयाल लखैगो तू भरि लोचन ।
जो तेरो प्रिय प्रान मिलैगो सो अब सोच न ॥६३॥

सोवै कितै चकोर ! तू सफल करै किन नैन ।
चार दिना यह चाँदनी फिरि अँधियारी रैन ॥
फिरि अँधियारी रैन सखे ! लखि सोच मरैगो ।
सजग रहै नहिं भूलि कालकृत जाल परैगो ॥
बरनै दीनदयाल लाल ! यह काल न खोवै ।
रोम रोम प्रति सोम कला फैली कित सोवै ॥६४॥

पतंग ।

वै तो मानत तोहि नहिं तैं कित भरयो उमंग ।
नहिं दीपहि कछु दरद क्यों जरि जरि मरै पतंग ॥

जरि जरि मरै पतंग तासु ढिग कदर न तेरी ।
तू अपनो हित जानि भाँवरै भरत घनेरी ॥
बरनै दीनदयाल प्रानप्रिय मान्यो तैं तो ।
मुखमलीन करि रहैं चहैं नहिं तोको वै तो ॥६५॥

उलूक ।

हे रे अंध उलूक तू दुरौ दरी मैं नीच ।
तेरे जान नहीं उदै भये भानु नभ बीच ॥
भये भानु नभ बीच सकल जग तासु अधीने ।
तू एकै खल कूर कहा तो निंदा कीने ॥
बरनै दीनदयाल दोख जनि दै उन केरे ।
अपनी भाग बिचार उतै बुध बंदत हेरे ॥६६॥

बायस (कौवा) ।

बायस ! तू पिक मध्य है कहा करै अभिमान ।
ह्वैहै बंस सुभाव की बोलत ही पहिचान ॥
बोलत ही पहिचान कानकटु तेरी बानी ।
वे पंचम धुनि मंजु करैं जिहि कबिन बखानी ॥
बरनै दीनयाल कोऊ जौं परसै पायस ।
तऊ तजै न मलीन मलहि खाये बिन बायस ॥६७॥

हे रे काग कठोर रट कीरहि दूखत काह ।
सुनि के इनकी मधुर धुनि मोहत हैं नरनाह ॥
मोहत हैं नरनाह हैम पंजर मैं राखैं ।
इनहीं के मुख लखै बैन इनके अभिलाखैं ॥
बरनै दीनदयाल लगै बिख लों तब टेरे ।
कोपे सब इहि लागि भागि ह्यांते खल हे रे ॥६८॥

बासा ।

बासा यह तरु पै तुमैं बासा बासर एक ।
बक नहिं इत व्याधा जुरे बहरी और अनेक ।।
बहरी और अनेक का कहों बाज रहै ना ।
जाल परेवा होय जौन दुख सो कहु मैना ।।
बरनै दीनदयाल करै तू केकी आसा ।
लाल मानि अब टेर भजो सर आवत बासा ।।६९।।

सिंह ।

टूटे नख रद केहरी वह बल गयो थकाय ।
हाय जरा अब आइ कै यह दुख दियो बढ़ाय ।।
यह दुख दियो बढ़ाय चहूँ दिसि जंबुक गाजैं ।
ससक लोमरी आदि स्वतंत्र करैं सब राजैं ।।
बरनै दीनदयाल हरिन बिहरैं सुख लूटे ।
पंगु भयो मृगराज आज नख रद के टूटे ।।७०।।

मातंग ।

भाजत हे जिहि त्रास तें दिग्गज दीरघदंत ।
नाहर नहिं नेरे फिरैं देखि बड़ो बलवंत ।।
देखि बड़ो बलवंत गिरैं गिरि कंदर हर तें ।
नदी कूल कुज मूल परसि बिनसैं रद कर तें ।।
बरनै दीनदयाल रह्यो जो सब पै गाजत ।
अहो सोई गजराज आज कलभन तें भाजत ।।७१।।

तोरै मति तरु मूल तें फूल सहित हित नूर ।
अरे निरंकुस दुरद बद दुखद महामद पूर ।।
दुखद महामद पूर लखै नहिं याकी सोभा ।
फल दल भल सुखदानि सकल जग जातें लोभा ।।

बरनै दीनदयाल प्रेम जो सब तें जोरै।
सो उपकारी मानि मीत ता प्रीति न तोरै ॥७२॥

बारन बारन मति करै ऐ सारँग सुखदानि।
हे मदमाते अंधमति ह्वैहै तुव छबि हानि ॥
ह्वैहै तुव छबिहानि नहीं छति कछु अलिगन की।
करिहैं प्रभा प्रकास बिकच बरबारिज बन की ॥
बरनै दीनदयाल जाय जान्यो नहिं कारन।
बिभौ बिनासि बिसोक बिपिन मैं बिहरै बारन ॥७३॥

आयो हुतो सरोज तजि बड़ी दूर तें भौंर।
दान देन पीछे रह्यो मारि गिरायो ठौर ॥
मारि गिरायो ठौर गौर गज कछू न कीनो।
तुम तो कृतघन बने प्रभा तजि अपजस लीनो ॥
बरनै दीनदयाल बूझि बेदन यों गायो ॥
सुख यह जग के माहिं समद तें किनको आयो ॥७४॥

भूपन तें आदर लयो दल को भयो सिँगार।
अजहूं तजी न बानि गज सिर पर डारत छार ॥
सिर पर डारत छार झूल डारे मखमल की।
चल्यो हठीली चाल भयो जग सीमा बल की ॥
बरनै दीनदयाल होत नहिं कछु रूपन तें।
छुटै न बंस सुभाय पाय आदर भूपन तें ॥७५॥

तुरंग।

घोरे नीकी चाल चल जातें होय बखान।
छाड़ि ऐब दै आड़ की पछलत्तहुं जनि ठान ॥
पछलत्तहुं जनि ठान सान सों कदम दीजिये।
बहकि चलै मति राह सीख सिर मानि लीजिये ॥

बरनै दीनदयाल समर तें भागि न भोरे ।
मालिक के सँग धाय खाय बनिहै हे घोरे ॥७६॥

कुरंग ।

धावै कहा कुरंग ए नहिं है तोय तरंग ।
एतो घोर निदाघ की रबिकिरनैं बहुरंग ॥
रबिकिरनैं बहुरंग देश मारू यह जानो ।
इतै न छाया कहीं नहीं विश्राम ठिकानो ॥
बरनै दीनदयाल सुधा जल प्यास न जावै ।
ह्वै कुरंग तजि गंग कहा मारू थल धावै ॥७७॥

तेरे ही बिच वस्तु वह जाको जगत सुगंध ।
खोजत कहा कुरंग तू ! अंबक आछत अंध ॥
अंबक आछत अंध कहा दिसि दिसि भरमैहै ।
अपनी दिसि अवलोकि तबै वाको सुख पैहै ॥
बरनै दीनदयाल मिलै नहिं बाहर हेरे ।
अंतरमुख ह्वै ढूंढ़ सुगंध सबै घट तेरे ॥७८॥

जंबुक ।

कैसो आयो काल यह गरजन लगे शृगाल ।
गाल बजाय कुटिल कहैं कहा केहरी माल ॥
कहा केहरी माल ससन के बीच बकैहै ।
पीछे निंदैं नीच मीच को नाहिं तकैहैं ॥
बरनै दीनदयाल कठिन दिन आयो ऐसो ।
ये बद हद मद करैं जंबुकन के गन कैसो ॥७९॥

सूकर ।

सुनि रे सूकर नीचतर कहा करै अभिमान ।
जीत्यो मैं यों बकत क्यों अति मृगपति बलवान ॥

अति मृगपति बलवान जगत जानै तिहि बल को।
तू मलीन मतिहीन सदा सेवै मल थल को ॥
बरनै दीनदयाल आपने बल को गुनि रे।
कहाँ प्रबल मृगराज कहाँ लघु सूकर सुनि रे ॥८०॥

शशक।

बांके सर नांके धरे करे भयानक भेख।
किते छप्यो तृन ओट मैं ससे खोलि दृग देख ॥
ससे खोलि दृग देख भाग आनँद घन बन मैं।
नातो तोकों सही हन्यो चाहत कोऊ छन मैं ॥
बरनै दीनदयाल कहा ह्वैहै दृग ढाँके।
डर छुटिहैं नहिं व्याध लिये सर आवत बाँके ॥८१॥

दोहा।

यह अन्योक्ति-सुकल्पद्रुम साखा दुतिय बखानि।
बिरची दीनदयालगिरि कवि द्विजवर सुखदानि ॥८२॥

इति श्रीकाशीवासी दीनदयालगिरिविरचिते अन्योक्तिकल्पद्रुमग्रन्थे द्वितीया शाखा समाप्ता।

मनुष्य जातिविशेष—ब्राह्मण।

हे पांड़े यह बात को को समुझै या ठाँव।
इतै न कोऊ हैं सुधी यह ग्वारन को गाँव ॥
यह ग्वारन को गाँव नाँव नहिं सूधे बोलैं।
बसैं पसुन के संग अंग ऐड़े करि डोलैं ॥
बरनै दीनदयाल छाँछ भरि लीजै भांड़े।
कहा कहो इत हास सुनै को इत हे पांड़े ॥१॥

क्षत्रिय ।

पैहो कीरति जगत में पीछे धरो न पाँव ।
छत्रीकुल के तिलक हे महासमर या ठाँव ॥
महासमर या ठाँव चलै सर कुंत कृपानैं ।
रहे बीरगण गाजि पीर उर मैं नहिं आनैं ॥
बरनै दीनदयाल हरखि जो तेग चलैहै ।
ह्वैहो जीते जसी मरे सुरलोकहिं पैहो ॥ २ ॥

वैश्य ।

वारे को तू बनिक है सौदा लै इहि हाट ।
चौमुख बनो बजार है बहु दुकान को ठाट ॥
बहु दुकान को ठाट कोऊ साँची कोऊ झूठी
आछी भाँति विचारि वस्तु लै बड़ी अनूठी ॥
बरनै दीनदयाल खोउ धन वृथा न प्यारे ।
घर आवेगो काम इते सब लूटनवारे ॥ ३ ॥

भारी भार भरयो बनिक तरिबो सिंधु अपार ।
तरी जरजरी फँसि परी खेवनिहार गँवार ॥
खेवनिहार गँवार ताहि पर पौन झकोरे ।
रुकी भवँर में आय उपाय चलै न करोरै ॥
बरनै दीनदयाल सुमिर अब तू गिरधारी ।
आरत जन के काज कला जिन निज संभारी ॥ ४ ॥

माली ।

माली तेरे बाग में चंदन लगो बिसाल ।
ताप करै किन दूरि तू खोजत कितै बिहाल ॥
खोजत कितै बिहाल तिहूँ गुन यामैं देखो ।
कटु अरु सीत सुगंध भली बिधि करो परेखो ॥

बरनै दीनदयाल भूलि भरमै कित खाली !
जाको बरनै वेद सोई यह चंदन माली ॥ ५ ॥

आली चंदन की न क्यों पाली माली कूर ।
मतवाली मति तो भई सींचत बेरि बबूर ॥
सींचत बेरि बबूर दुखद कंटक हैं ताके ।
सेवत क्यों नहिं अंध गंध मुदकर वर जाके ॥
बरनै दीनदयाल सबै श्रम जैहै खाली ।
पालत है किन तापसमन चंदन की आली ॥ ६ ॥

मालो नींब रसाल सँग लाय करी अनरीति ।
काग आम पिक नींव पै बैठारे बिपरीति ॥
बैठारे बिपरीति रीति तूं कछू न बूझै ।
स्याम स्याम सब एक नहिं ऐगुन गुन सूझै ।
बरनै दीनदयाल कौन यह तेरी चाली ॥
कोकिल तें करि ऊँच काग को मानत माली ॥ ७ ॥

कुलाल ।

कैसो मद मैं है भरो याकी करो पिछान ।
यहि कुलाल कों देखिए अहो प्रपंच-निधान ॥
अहो प्रपंच-निधान रंच काहू नहिं मानै ।
आपै बनै बिरंचि समो बहु रचना ठानै ॥
बरनै दीनदयाल समै अब आयो ऐसो ।
बिधि की समता करै कुलाल कूर यह कैसो ॥ ८ ॥

दरजी ।

दरजी सीवत तोहि गे दिन बहु बरनै कौन ।
कोन बीच बसि क्या करै अंधकार इहि भौन ॥
अंधकार इहि भौन आय के छाय रह्यो है ।
टूट गई है सुई सूत अरुझाय रह्यो है ॥

बरनै दीनदयाल लोग सब अपने गरजी ।
जामा जोरन भयो कहा अब सीवै दरजी ॥९॥

रजक ।

ए रे मेरे धोबिया तोसों भाखत टेरि ।
ऐसी धोनी धोइ जो मैलो होय न फेरि ॥
मैलो होइ न फेरि चीर इहि तीर न आवै ।
साबुन लाउ बिचार मैल जातें छुटि जावै ॥
बरनै दीनदयाल रंग चढ़ि है चहुँ फेरे ।
जो तू दैहै धोय भले जल उज्जल ए रे ॥१०॥

नट ।

धारत नट बहु स्वाँग हौ कला अनेक प्रवीन ।
कबहूँ करी न वह कला जहाँ कला सब लीन ॥
जहाँ कला सब लीन कला सफला है सोई ।
और कला जग चला जथा चपला घन होई ॥
बरनै दीनदयाल भागि जनि आगि निहारत ।
धरे सती को स्वाँग कहा पग पीछे धारत ॥११॥
राजा ह्याँ है आँधरो मूक बधिर अज्ञान ।
सभा सबै तैसी भरी ताने कहा बितान ॥
ताने कहा बितान अरे नट बुद्धि-बिहीने ।
लखै सराहै कौन सुनै गो दृगश्रुति हीने ॥
बरनै दीनदयाल सुनाट्य-कला सुर बाजा ।
ह्वैहैं बन के फूल भूल मति तू गुनि राजा ॥१२॥

दारुनटी (कठपुतली)

तेरी है कछु गति नहीं दारु चीर को मेल ।
करै कपट पट ओट मैं वह नट सबही खेल ॥

वह नट सबही खेल खेलि फिरि दूर रहै है ।
ह्वै बिन बनै प्रपंच कहो को कूर कहै है ॥
बरनै दीनदयाल कला वा पै बहुतेरी ।
जो जो चाहै नाँच कढ़ै सो सो गति तेरी ॥१३॥

नटी ।

नीकी बिधि चलि री नटी अति सूछम इह राह ।
राम राम मुख ध्यान पद ह्वैहै तबै निबाह ॥
ह्वैहै तबै निवाह सबै गो गोचर अपने ।
बस करिके चलि सूध नहीं चित चालै सपने ॥
बरनै दीनदयाल डिगै फिर खोजन जो की ।
ये सब देखनिहार न दैहैं उपमा नीकी ॥ १४ ॥

ग्वालिनी ।

बारि बिलोवै डारि दधि अरी आँधरी ग्वारि ।
ह्वैहै श्रम तेरो वृथा नहिं पैहै घृत हारि ॥
नहिं पैहै घृत हारि हँसैंगी सखी सयानी ।
तू अपने मन मान रही घर की ठकुरानी ॥
बरनै दीनदयाल कहा दिन योंही खोवै ।
पछतैहै री अंत कंत ढिग बारि बिलोवै ॥१५॥

किरातिनी ।

गुंजन को बन देखि कै मुकुतन दीनी त्यागि ।
अरी अबूझ किरातिनी धिक धिक तेरी लागि ॥
धिक धिक तेरी लागि न ऐगुन गुन पहिचानै ।
ऊपर ही के रंग ठगी मतिमूढ़ न जानै ॥
बरनै दीनदयाल परी यह तो सब कुंजन ।
कौड़ी याको मोल लाल लखि भूलि न गुंजन ॥१६

पनिहारिन ।

पनिहारी इहि सर परे लरति रही सब पाँह ।
रीतो घट लै घर चली उतै मारिहै नाह ॥
उतै मारिहै नाह काह तिहि उत्तर दैहै ।
रोय रोय पति खोय फेरि सर पै फिरि ऐहै ॥
बरनै दीनदयाल इतै हँसिहैं सब नारी ।
ख्वारी दुहुँ दिसि परी अरी ग्वारी पनिहारी ॥ १७ ॥

तमोलिनी ।

बौरी दौरी में धरे बिन सींचे मति भूल ।
फेरै क्यों न तमोलिनी ! सूखै सड़ै तमूल ॥
सूखै सड़ै तमूल बहुरि पीछे पछतैहै ।
ऐहै गाहक लैन कहा तब ताको दैहै ॥
बरनै दीनदयाल चूक जनि तू इहि ठौरी ।
आछी भाँति सुधारि वस्तु अपनी रखि बौरी ॥१८॥

किसान ।

आछी भाँति सुधारि कै खेत किसान बिजोय ।
नत पीछे पछतायगो समै गयो जब खोय ॥
समै गयो जब खोय नहीं फिरि खेती ह्वैहै ।
लैहै हाकिम पोत कहा तब ताको दैहै ॥
बरनै दीनदयाल चाल तजि तू अब पाछी ।
सोउ न, सालि सम्हालि बिहंगन तें बिधि आछी ॥१९॥

गढ़धनी ।

साथी पाथी भे सभे गढ़ी ढहै चहुँ फेरि ।
आनि बनी अरि की अनी धनी खोलि दृग हेरि
धनी खोलि दृग हेरि धवल धुज आय बिराजे ।
बोलन लगे नकीब डंक अब तो तिहुँ बाजे ॥

बरनै दीनदयाल साजि अब अपनो हाथी ।
हरि को टेर सहाय गये सब तेरे साथी ॥ २० ॥

चौपर-खेलारी ।

अहे खेलारी चूक मति पंजा बिखे सम्हाल ।
परो दाव तेरो खरो करि लै सारी लाल ॥
करि लै सारी लाल लाल निज चाल न छूटै ।
सनमुखही मुख राखि देख जुग कहूँ न फूटै ॥
बरनै दीनदयाल जीति बाजी इहि बारी ।
हारो मूढ़न संग बार बहु अहे खेलारी ॥ २१ ॥

चंग-उड़ायक ।

काँचे गुन छाड़ै नहीं अरे उड़ायक कूर ।
जैहै कर तें टूटि कै उड़ो गुड़ी कहुँ दूर ॥
उड़ो गुड़ी कहुँ दूरि लूटि लरिका सब लैहैं ।
तो को जानि गँवार हँसी करतारी दैहैं ॥
बरनै दीनदयाल माँजु गुन को बिन जाँचे ।
ह्वैहै गुनी प्रबीन छाँड़ि जनि तू गुन काँचे ॥२२॥

जौहरी ।

मैली थैली लखि न तू भ्रमै प्रेम करि खोलि ।
अहे जौहरी है खरी या में मनि अनमोल ॥
या में मनि अनमोल तोल करि ताको लीजै ।
कीजै कछू न खोटि कोटि धन तापै दीजै ॥
बरनै दीनदयाल यथा मजनू मन लैली ।
तैसे ही अनुरागि त्यागि मति मैली थैली ॥ २३ ॥

नीकी मुकुतन की लरी पै ह्याँ गाहक नाहिं ।
इत सबरी सबरी भरीं सगरी नगरी माहिं ॥

सगरी नगरी माहिं फिरनहारी कुंजन की ।
कबरी-भारनि रचैं आनि अवली गुंजन की ॥
बरनै दीनदयाल बूझ कैसी तबही की ।
अहे जौहरी जौन कौन पै बरनै नीकी ॥ २४ ॥

सौदागर ।

सौदागर तू समुझि कै सौदा करि इहि हाट ।
जैहै उठि दिन दोय मैं पछितैहै फिरि बाट ॥
पछितैहै फिरि बाट बस्तु कछु भली न लीनी ।
योंही लंपट होय खोय सब सम्पति दीनी ॥
बरनै दीनदयाल कौन विधि ह्वैहै आदर ।
गये आपने देस बिना सौदा सौदागर ॥ २५ ॥

चित्रकार ।

क्या है भूलत लखि इन्हैं अहे चितेरे चेत ।
ए तो अपने ऐन में रचे आपने हेत ॥
रचे आपने हेत चराचर चित्रहिं तूने ।
डरै भ्रमै मति मीत तोहि बिन ये सब सूने ॥
बरनै दीनदयाल चरित अति अचरज या है ।
रँगे आपने रंग तिनै लखि भूलत क्या है ॥ २६ ॥

पाहरू ।

सुनिये एहो पाहरू कहों तिहारे हेत ।
औरन को टेरत फिरो निज घर को नहिं चेत ॥
निज घर को नहिं चेत चोर चोरै धन जावैं ।
घर की आग बुझाय सबै बाहिरै बुझावैं ॥
बरनै दीनदयाल आपने ही चित गुनिये ।
बित हू जैहै लोग हँसैंगे सिगरे सुनि ये ॥ २७ ॥

छैल ।

ए जू छैल छबील मन तुमै कहौं समुझाय ।
यह काजर की ओबरी निकरो अंग बचाय ॥
निकरो अंग बचाय चातुरी तो जग जागै ॥
सिर पै चादर सेत बीच जो दाग न लागै ॥
बरनै दीनदयाल बोध यह बुधन दये जू ।
को न कुसंगति पाय कुलीन मलीन भये जू ॥ २८ ॥

बजंत्री ।

अहे बजंत्री हरिन-भ्रम कहा बजावै बीन ।
या ठठेर-मंजारिका सुर सुनि मोहैगी न ॥
सुर सुनि मोहैगी न सुने इन ठकठक बाजैं ।
किते थकै करि कला अजौं नहिं आवति लाजैं ॥
बरनै दीनदयाल कहा याके ढिग तंत्री ।
यातें होय निरास जाय घर अहे बजंत्री ॥ २९ ॥

मृदंग ।

सारंगी हित त्यागि कित रह्यो मृदंग दुराय ।
करिहै सिर पै थाप लै धिगधिग तू सिख पाय ॥
धिग धिग तू सिख पाय तबै कछु मधुर बोलिहै ।
सुघर बजंत्री जबहि पिंड गहि पटहि खोलिहै ॥
बरनै दीनदयाल ढूंढ़ि गुर सुर मिलि संगी ।
मिलो तहाँ चलि जहाँ बीन बाजत सारंगी ॥३०॥

शंख ।

जनमे हौ बरकुल विषे जग गुन गने असंख ।
बजे बिजै बहु बार पै रहे संख के संख ॥
रहे संख के संख संख तुम हौ भीतर तें ।
कहा करो अभिमान धरयो हरि जौ निज कर तें ॥

बरनै दीनदयाल बिमल छवि छाई तन में ।
ऊँच नीच मुख लगो कहा भो बर कुल जनमे ॥३१॥

पाषाण ।

मूरुख हृदय कठोर लखि हारे करि करि मान ।
तातें मज्जत जल विषे अहो सलज्ज पखान ॥
अहो सलज्ज पखान बड़ो तुम में गरुआई ।
जोरे तें जुरि जात अहै ये द्वै अधिकाई ॥
बरनै दीनदयाल किता करिये वह पूरुख ।
जुरे न लाये हेत होत अतिसै जो मूरुख ॥ ३२ ॥

बाण ।

हे सर परबस नहिं करो कुटिल धनुख सों संग ।
सूधे हो कहुँ फेकिहै टूटि जाहिंगे अंग ॥
टूटि जाहिंगे अंग अंग तासों निबहै नहिं ।
गुन पै राचे कहा कोटि रचना याके महिं ॥
बरनै दीनदयाल कहाँ कारिख कहँ केसर ।
तैसेई है संग बंक सूधे को हे सर ॥ ३३ ॥

अंग-विशेष—तत्र रसना ।

रसना ए तो दसन हैं सुनि द्विजनाम न मोहि ।
इन्है न पंडित मानिये खंडित करिहैं तोहि ॥
खंडित करिहैं तोहि रहो निज रूप बचाये ।
तोतें बहुत कठोर जोर इन चने चबाये ॥
बरनै दीनदयाल समुझि इनके संग बस ना ।
ऊपर उज्ज्वल रूप देखि मति मोहै रसना ॥ ३४ ॥

नयन ।

सपनेहूँ ब्रजराज छबि लखो न तुम हे नैन ।
तातें भटके फिरत हौ लहै कहूँ नहिं चैन ॥

लहै कहूँ नहिं चैन रूप जग के सेमल से ।
छले गये नहिं कौन सुमन सुक केते छल सं ॥
बरनै दीनदयाल गुनी तुम अंतर अपने ।
ढके पलक के खलक रूप ह्वैहैं सब सपने ॥ ३५ ॥

श्रवन ।

खोये दिन बहु श्रवण हे सुनत वृथा बकवाद ।
सुने न हरिहर मधुर जस जासु सुधासम स्वाद ॥
जासु सुधा सम स्वाद अमर पद देत सुने तें ।
थके धीर गुन गाय छके रस पाय न केते ॥
बरनै दीनदयाल काल तुम वादि बिगोये ।
अजहू सुनि करि प्यार कहा दिन डारत खोये ॥ ३६ ॥

दोहा ।

यह अन्योक्ति-सुकल्पद्रुम साखा तृतिय बखानि ।
विरची दीनदयालगिरि कवि द्विजवर सुखदानि ॥ ३७ ॥

इति श्रीकाशीवासी दीनदयालगिरिविरचिते अन्योक्तिकल्पद्रुमग्रंथे तृतीया शाखा समाप्ता ॥

कैवर्तक—(सिंहावलोकन)

तारे तुम बहु पथिन को यह नद धार अपार ।
पार करो इहि दीन को पावन खेवनिहार ॥
पावन खेवनिहार तजो जनि कूर कुबरनैं ।
बरनैं नहीं सुजान प्रेम लखि लेहु सुबरनैं ॥
बरनै दीनदयाल नाव गुन हाथ तिहारे ।
हारे को सब भाँति सुबनिहै पार उतारे ॥ १ ॥

पथिक—(सिंहावलोकन)

मारे जैहो पथिक हे या पथ है बटपार ।
पार होन पैहो नहीं मारि डारिहैं वार ॥
मारि डारिहैं वार भजो ये फिरैं अनेरैं ।
नेरैं तुमको कोपि तकैं ज्यों बाज बटेरैं ॥
टेरैं दीनदयाल सुनो हित हेत तिहारे ।
हारे परिहो सबै राख धन कहे हमारे ॥ २ ॥

राही खड़ असोक क्यों बकुलध्यान यह बेल ।
है डकैत छाया तजो लख्यो न याको खेल ॥
लख्यो न याको खेल सिरसि पा-फर बर चोटैं
कोऊ नहिं सहकार अकेला लगिहो लोटैं ॥
बरनै दीनदयाल जटे इन जटी सुकाही ।
जाहु चले या बेर कदम गहिपति लै राही ॥ ३ ॥

सोई देस विचारि कै चलिये पथी सुचेत ।
जाके जस आनंद की कबिबर उपमा देत ॥
कबिबर उपमा देत रंक भूपति सम जामैं ।
आवागौन न होय रहै मुदमंगल तामैं ॥
बरनै दीनदयाल जहाँ दुख सोक न होई ।
एहो पथी प्रवीन देस को जैये सोई ॥ ४ ॥

कोई संगी नहिं उतै है इतही को संग ।
पथी लेहु मिलि ताहितें सब सों सहित उमंग ॥
सब सों सहित उमंग बैठि तरनी के माहीं ।
नदिया नाव सँजोग फेर यह मिलिहै नाहीं ॥
बरनै दीनदयाल पार पुनि भेंट न होई ।
अपनी अपनी गैल पथी जैहैं सब कोई ॥ ५ ॥

ग्राहैं प्रवल अगाध जल यामें तीछन धार।
पथी पार जो तू चहै खेवनिहार पुकार॥
खेवनिहार पुकार वार नहिं कोऊ साथी।
और न चलै उपाव नाव बिन एहो पाथी॥
बरनै दीनदयाल नहीं अब बूड़े थाहैं।
रहे महामुख बाय ग्रसन को भारी ग्राहैं॥६॥

राही सोवत इत किते चोर लगैं चहुँ पास।
तो निज धन के लेन को गिनैं नींद की स्वास॥
गिनैं नींद की स्वास बास बसि तेरे डेरे।
लिये जात बनि मीत माल ये साँझ सबेरे॥
बरनै दीनदयाल न चीन्हत है तू ताही।
जाग जाग रे जाग इतै कित सोवत राही॥७॥

संबल जल इत लै पथी आगे नहीं निबाह।
दूर देस चलिबो महा मारू थल की राह॥
मारू थल की राह संग कोऊ नहिं तेरे।
सजग हाथ धन राख लगैं पथ चोर घनेरे॥
बरनै दीनदयाल कठिन बचिबो है कंबल।
सखे परैगी जानि उवै इत लै जल संबल॥८॥

जैयै गैल सुछैल बनि पथी सुपंथ बिचारि।
भ्रमो न ठगिनी मारिहै तुमैं ठगोरी डारि॥
तुमैं ठगोरी डारि छीनि सबही धन लैहै।
महा अंध बन कूप बीच या नीच छपैहै॥
बरनै दीनदयाल लाल निज माल बचैये।
अहै ठगन को पुंज कुंज इत गुनि कै जैये॥९॥

सपने पथी सराय परि कहा रचत है राज।
भोर भये छुटिहै यहू तोहि सराय समाज॥

तोहि सराय समाज छूटि साथी सब जैहैं ।
भठिहारी सों नेह करै मति तैं पछितैहैं ॥
बरनै दीनदयाल सोचि नीके चित अपने ।
मनोराज-पथ बीच कौन सुख पायो सपने ॥१०॥

मालिनी छंद ।

सुनहु पथिक भारी कुंज लागी दवारी ।
जहँ तहँ मृग भागे देखिये जात आगे ॥
फिरत कित भुलाने पाय ह्वैहैं पिराने ।
सुगम सुपथ जाहू बूझिये क्यों न काहू ॥११॥

बहुत दिवस बीते गैल में तोहि मीते ।
मुख रुख कुंभिलाने बैठि ले या ठिकाने ॥
अहह संग न साथी दूर है देस पाथी ।
बिलम नहिं भलो जू संबलै लै चलो जू ॥१२॥

बहुत बिध दुकानैं हैं लगीं तू न जानै ।
बनिक बहु बिधा के सोहते रूप जाके ॥
निपुन निरखि लीजै बस्तु मैं चित्त दीजै ।
पथिक नहिं ठगावै देखि तू रैनि आवै ॥१३॥

निपट निसि अँधेरी नाहिं सूझै हथेरी ।
बहु बिध ठग घेरें मीत कोऊ न तेरे ॥
पथिक इत न सोवै भूलि बित्तैं न खोवै ।
जगत रहि सुचेतै हौं कहों तोहि हेतै ॥१४॥

अभिनव घनस्यामैं ध्याउ आभा सु जामैं ।
बिसद बकुल-माला सोभती हैं बिसाला ॥
द्विजगन हरखावैं ध्यान के मोद पावैं ।
पथिक नयन दीजै ताप को सांत कीजै ॥१५॥

कुंडलिया ।

बीती सोवत रैनि सब होन चहै अब भोर ।
पथी चेत कर पंथ को चिरियन लायो सोर ॥
चिरियन लायो सोर देख चहुँ ओर घोर बन ।
चोर लगें बरजोर सखे यह ठौर राख धन ॥
बरनै दीनदयाल न गाफिल ह्वै इत भीती ।
सार्थी पाथी भये जाग अजहूँ निसि बीती ॥१६॥

हारे भूली गैल मैं गे अति पाय पिराय ।
सुनो पथी अब तो रह्यो थोरो सो दिन आय ॥
थोरो सो दिन आय रहे हैं संग न साथी ।
या बन हैं चहुँ ओर घोर मतवारे हाथी ॥
बरनै दीनदयाल ग्राम सामीप तिहारे ।
सूधे पथ को जाहु भूलि भरमो कित हारे ॥१७॥

चारो दिसि सूझै नहीं यह नद-धार अपार ।
नाव जरजरी भार बहु खेवनिहार गँवार ॥
खेवनिहार गँवार ताहि पर है मतवारो ।
लिये भौंर में जाय जहाँ जल-जंतु-अखारो ॥
बरनै दीनदयाल पथी बहु पौन प्रचारो ।
पाहि पाहि रघुबीर नाम धरि धीर उचारो ॥१८॥

देखो पथी उघारि कै नीके नैन विवेक ।
अचरजमय यह बाग में राजत है तरु एक ॥
राजत है तरु एक मूल ऊरध अध साखा ।
है खग तहाँ अचाह एक इक बहु फल चाखा ॥
बरनै दीनदयाल खाय सो निबल बिसेखो ।
जो न खाय सो पीन रहै अति अदभुत देखो ॥१६॥

देखो पथी अचंभ यह जमुनातट धरि ध्यान ।
महि मैं विहरैं कंज द्वै करैं मंजु अलि गान ॥
करैं मंजु अलि गान नील खंभा तहँ दो पर ।
पिक धुनि दामिनि बीच तहाँ सर हंस मनोहर ॥
बरनै दीनदयाल संख पै सोम बिसेखो ।
ता ऊपर अहितनै ताहि पर बरही देखो ॥ २० ॥

या बन में करि केहरी कूप गँभीर अपार ।
द्वै पहार के ओट में बसत एक बटपार ॥
बसत एक बटपार उभै धनु सर संधाने ।
ता पीछे इक स्याह नागिनी चाहति खाने ॥
बरनै दीनदयाल इनै लखि डरिये मन में ।
पथी सुपंथ विहाय भूलि जनि जा या बन में ॥ २१ ॥

फूली है सुखमामई नई लहलही जोति ।
छई ललित पल्लवनि तें लखि दुति दूनी होति ॥
लखि दुति दूनी होति चपल अलि या पै दो हैं ।
लगे गुच्छ द्वै बीच वहै जन को मन मोहैं ।
बरनै दीनदयाल पथिक है कित मति भूली ।
या तो मारक महा-छली विषवल्ली फूली ॥ २२ ॥

मोहै चंपक छविन तें पथिकन यह आराम ।
कुंद कली अवली भली लसत बिंब बसु जाम ॥
बसत बिंब बसु जाम कीर खंजन सँग मिलि के ।
सजैं भौंर तित लोल बोल बिलसैं कोकिल के ॥
बरनै दीनदयाल बाग यह पथ को सोहै ।
पथी गौन है दूरि देख बीचहि मति मोहै ॥ २३ ॥

चारो दिसि लहरी चलै बिलसै बनज बिसाल ।
चपल मीन-गति लसति अति तापर सजै सिवाल ॥

तापर सजै सिवाल हंस-अवली सित सोहै ।
कोक जुगल रमनीय निरखि सर मैं मति मोहै ॥
बरनै दीनदयाल मकरपति यामैं भारो ।
त्रास मानि हे पथी ग्रास करिहै लखि चारो ॥ २४ ॥

शांत-शृंगार-संयम ।

भूलै जोबन के न मद्द अरी बावरी बाम ।
यह नैहर दिन चार को अंत कंत सों काम ॥
अंत कंत सों काम तंत सबही तजि दै री ।
जातें रीझै नाह नेह नव तातें कै री ॥
बरनै दीनदयाल भूष भूषन अनुकूलै ।
चलि पिय गेह सनेह साजि लखि देह न भूलै ॥ २५ ॥

गौने को दिन निकट अब होन चहै पिय मेल ।
अजहूँ छुटो न तोहि री गुड़ियन को यह खेल ॥
गुड़ियन को यह खेल खेलि सब समै बिगारे ।
सिखे नहीं गुन कछू पिया-मन मोहनवारे ॥
बरनै दीनदयाल सीख पैहै पिय भौने ।
एरी भूषन साजि भटू दिन आवत गौने ॥ २६ ॥

तू मति सोवै री परी कहों तोहि मैं टेरि ।
सजि सुभ भूषण बसन अब पिया मिलन की बेरि ॥
पिया मिलन की बेरि छाँड़ अजहूँ लरिकापन ।
सूधे दृग सों हेरि फेरि मुख ना, दै तन मन ॥
बरनै दीनदयाल छमैगो चूकनहूँ पति ।
जागि चरन में लागि सभागिन सोवै तू मति ॥ २७ ॥

पिय तें बिछुरे तोहि री बिते बहुत हैं रोज ।
पिय पिय पपिहा जड़ रटै तू न करै पिय-खोज ॥

तू न करै पिय-खोज कितै दुरमति मैं भूली ।
होन लगे सित केस कौन मद मैं अब फूली ॥
बरनै दीनदयाल सुमिरि अजहूँ तेहि हिय तें ।
हैं सब तेरी चूक नहीं कछु तेरे पिय तें ॥ २८ ॥

औरी पिय सों सब तिया मिलीं महल में जाय ।
तू बौरी पौरी धरे बाहर ही पछिताय ॥
बाहरही पछिताय रही अपनी करनी तें ।
अली लगी अति देर चली कौनी सरनी तें ॥
बरनै दीनदयाल चूक तेरी इहि ठौरी
अब तो लगे कपाट भई यह बेला औरी ॥२९॥

मोहै नाहिं निहारि तू एरी नारि गँवारि ।
ये दूती हैं जार की तोहि बिगारनिहारि ॥
तोहि बिगारनिहारि कहैं मधुरी मृदु बातैं ।
तैं सुनिकै ललचाय लखै नहिं इनकी घातैं ॥
करिहैं दीनदयाल कंत सों तोहि बिछोहैं ।
अंत धरम बिनसाय कलंक लगाय बिमोहैं ॥३०॥

पति के ढिग जनि जार पै मार नयन के बान ।
जानत सब बिभिचार तव गुनत न नाह सुजान ॥
गुनत न नाह सुजान कृपामय मानि अपानी ।
बाँह गहे की लाज बिचारत स्वामि सुज्ञानी ॥
बरनै दीनदयाल बैन सुनि एरी मति के ।
है अपजस अघ अंत किये छल सनमुख पति के ॥ ३१ ॥

स्वामी सुंदर सीलजुत अपनो गुनी कुलीन ।
ताहि त्यागि पर-नाह सठ सेवति कहा मलीन ॥
सेवति कहा मलीन हीन मति कुलटा बौरी ।
सुधासिंधु तजि सुधा फिरै मृग जल को दौरी ॥

बरनै दीनदयाल अरी ह्वैहै बदनामी ।
जार गँवारहिं भजे तजे बर अपनो स्वामी ॥ ३२ ॥
औरे सब जग पुरुख को अपने पति परिवार ।
जैसो कैसो निज भलो दुहुँ कुल तारनिहार ॥
दुहुँ कुल तारनिहार सुजस गति तासों लहिये ।
इतर संग भय होय खोय कीरति दुख सहिये ॥
बरनै दीनदयाल सील लाजहुँ या ठौरे ।
राखि राखि री राखि छाड़ि जग के पति औरे ॥ ३३ ॥
तेरेही अनुकूल पिय किन बिनवै प्रिय बोलि ।
घट में खटपट मति करै घूंघट को पट खोलि ॥
घूंघट की पट खोलि देखि लालन की सोभा ।
परम रम्य बुधगम्य जासु छबि लखि जग लोभा ॥
बरनै दीनदयाल कपट तजि रहु प्रिय नेरे ।
बिमुख करावनिहार तोहि सनमुख बहुतेरे ॥ ३४ ॥
येरी जोबन छनक है सुनि री बाल अजान ।
निज नायक अनुकूल तें नहीं चाहिये मान ॥
नहीं चाहिये मान देख यह समै सजै है ।
द्विजगन के कल गान सुनो पिय पीय भजै है ॥
बरनै दीनदयाल सीख सुनि सुंदरि मेरी ।
बिहरि बिहारी नाह पाँहँ तेहि छाँहँ अयेरी ॥ ३५ ॥
बिछुरी तू बहु काल तें पौढ़ी पीतम पाहँ ।
कछु बीती निसि नींद में कछु कलहन के माहँ ॥
कछु कलहन के माहँ रही मुख फेरि कठोरी ।
पिय हिय लायो नाहिं मोद नहिं पायो बोरी ॥
बरनै दीनदयाल रही अब निसि ना कछु री ।
यह प्यारे परजंक पौढ़ि अजहू लों बिछुरी ॥ ३६ ॥

कासो पाती हों लिखों का पै कहों सँदेस ।
जे जे गे ते नहिं फिरे वहि पीतम के देस ।।
वहि पीतम के देस बड़ो अचरज या भासै ।
कहूं न तम को लेस तहाँ बिन भानु प्रकासै ।।
बरनै दीनदयाल जहाँ नित मोद-मवासो ।
जनमादिक दुखदुंद नहीं चर कहिये कासो ।। ३७ ।।

सती ।

पति की संगति री सती लै सुगती इहि आगि ।
धरे सिँधोरा कर परे अब दै डगमग त्यागि ।।
अब दै डगमग त्यागि भागि जनि चेति चिता कों ।
जरे मरे सिधि पाउ कलंक न लाउ पिता कों ।।
बरनै दीनदयाल बात यह नीकी मति की ।
सुजस लोक परलोक श्रेय लै संगति पति की ।। ३८ ।।

मोहविवेकादि वर्णन ।

जीवत हो यह जगत में देह मरे के अंत ।
अहो मोह अति सिद्ध हौ तुम मैं कला अनंत ।।
तुम मैं कला अनंत संत गुनि अचरज भाखत ।
सोक अनल के माहँ हृदय बारिज को राखत ।।
बरनै दीनदयाल नेह मैं नचो नटीवत ।
देखि परो नहिं ज्ञान दिव्य लोचन को जीवत ।। ३९ ।।

काम ।

हरतन धरि कोपागि जग जारत प्रलै कराल ।
तुम जारत जग-जनक मन अतन हँसत बिन काल ।।
अतन हँसत बिन काल ज्वाल ससि मुख तें व्यापी ।
वे लीने कर सूल फूल सर तातें तापी ।।

बरनै दीनदयाल जयो तेहि लीलापन करि ।
हारि रहे सब भांति लखत तव बल हर तन धरि ॥ ४० ॥

ह्यां मति आवो मार तुम मारे रथी अपार ।
यह हर-ईछन तीसरो तीछन बड़ो विचार ॥
तीछन बड़ो विचार तुम्हैं लै छार करैगो ।
सबही तो परिवार रोय बहु बार मरैगो ॥
बरनै दीनदयाल काम ह्वैहै तब क्या गति ।
उतै रहो कहुँ बहो प्रान लै आवो ह्यां मति ॥ ४१ ॥

क्रोध ।

जिहि मन तें उदभव भयो जिहि बल जग मैं सूर ।
तिहि निसि दिन जारत अहो दुसह कोपगति कूर ॥
दुसह कोपगति कूर बड़ो कृतघन जग मों है ।
प्रथम दहत है आप बहुरि दाहत सब को है ॥
बरनै दीनदयाल कोप तू सुनि सब जन तें ।
अजस होत जनि दहै भयो उदभव जिहि मन तें ॥ ४२ ॥

भाजत लै भा लपि तुमै इन नैनन के ईस ।
करत महा तम क्रोध तुम कौन करै तव रीस ॥
कौन करै तव रीस एक गुन मैं जग ल्यावत ।
अधर द्विजन भू नाक निमिष मैं सबै नचावत ॥
बरनै दीनदयाल घोर घन लों छन गाजत ।
एहो कोप प्रचंड कौन नहिं तुम तें भाजत ॥ ४३ ॥

लोभ ।

तुमरी लोभ कलानि कों अचरज कहैं प्रबीन ।
ज्यों ज्यों वय आसै जरा त्यों त्यों होत नबीन ॥
त्यों त्यों होत नवीन सकल जन को तुम देखत ।
खरे रहो सब तीर न कोऊ तो तन पेखत ॥

बरनै दीनदयाल अलख मति तो मति घुमरी ।
लही न पुरी बराट कला यह चूकति तुमरी ॥ ४४ ॥

अँचयो कुंभज नीरनिधि सो सिध बड़े कहात ।
तुम जगजीवन निधिनिकर सीकर सम चटि जात ॥
सीकर सम चटि जात लोभ तव प्यास न जाई ।
तुम अकास ऋपि रेनु कहा तिन केरि बड़ाई ॥
बरनै दीनदयाल लोक तिहुं प्रसि कै पचयो ।
तऊ भूख नहिं प्यास गई सत सागर अँचयो ॥ ४५ ॥

आसा की डोरी गरे बाँधि देत दुख पोभ ।
चित पितु को बंदर कियो अहो कलंदर लोभ ॥
अहो कलंदर लोभ छोभ दै नाच नचावत ।
जदपि निरादर चोट समुझि अतिसै दुख पावत ॥
बरनै दीयदयाल लोग सब लखैं तमासा ।
भरमावै घर घरहिं तऊ नहिं पूरति आसा ॥४६॥

दंभ ।

देखो कपटी दंभ को कैसो याको काम ।
बेचनिहारो बेर को देत दिखाय बदाम ॥
देत दिखाय बदाम लिये मखमल की थैली ।
बाहिर बनी बिचित्र बस्तु अंतर अति मैली ॥
बरनै दीनदयाल कौन करि सकै परेखो ।
ऊँची बैठि दुकान ठगै सिगरो जग देखो ॥४७॥

अभिमान ।

करनी जंबुक जून ज्यों गरजन सिंह समान ।
क्यों न डरै जग लखि तुमैं अहो बीर अभिमान ॥
अहो बीर अभिमान धरा को धीर धरैगो ।
कोप न करो प्रचंड सबै ब्रहमंड जरैगो ॥

बरनै दीनदयाल गिरा भट तो मति बरनी ।
धरनीधर लों गई नई यह अदभुत करनी ॥ ४८ ॥

विवेक ।

सुनिये बैन बिबेक जू हौ नृप धीरज धाम ।
जौ लगि जीवत काम यह तौ लगि होय न काम ॥
तौ लगि होय न काम बड़ो खल है रिपु दल मैं ।
याकी कला अनेक सकल जग जीते छल मैं ॥
बरनै दीनदयाल बिरति सों मिलि हित गुनिये ।
भनै जु मंत्री साधु सीख साची सो सुनिये ॥ ४९ ॥

करिये बेगि बिबेक जू शांति प्रिया की सोध ।
सकुल कृतारथ होहुगे उपजत पूत प्रबोध ॥
उपजत पूत प्रबोध बजैगी अनँद बधाई ।
धन्य कहैंगे धीर रहैगी कीरति छाई ॥
बरनै दीनदयाल जगत की जाल न परिये ।
मिलि नियमादि सखान शांति सों नित हित करिये ॥५०॥

सुनिये भूप विबेक तुम बासुदेव अवतार ।
किय मन पितु बसुदेव को बंधन तें उद्धार ॥
बंधन तें उद्धार कियो कामादि कंस हनि ।
जनकहिं दे आनंद कृतारथ कुलहिं किये धनि ॥
बरनै दीनदयाल सुमति सों नित हित गुनिये ।
जातें पूत प्रबोध प्रगट ह्वै सो सिख सुनिये ॥५१॥

विचार ।

सुनिये बैन विचार तुम या जग होते जौन ।
तो यह जीव मलीन को करत कृतारथ कौन ॥
करत कृतारथ कौन ख्वार इहि मारहि मारत ।
को करिके निरधारहिं सार असार विचारत ॥

बनै दीनदयाल बहै बिधि गुरुगम गुनियें ।
जातें होय प्रबोध उदै सो सम्मत सुनिये ॥५२॥

विराग ।

एहो त्याग मृगेस तुम बिन यह तन बनराज ।
करत स्यार कामादि अब ह्वै स्वतंत्र सिरताज ॥
ह्वै स्वतंत्र सिरताज फिरत कूकत कै फूले ।
किन गज्जत घननाद पराक्रम कित वह भूले ॥
बरनै दीनदयाल त्रास जौलों नहिं देहौ ।
तौलों नहिं ये कूर कढ़ैंगे हिय तें एहो ॥ ५३ ॥

संतोष ।

एहो तोख कुलोभ तम को तोलों है बास ।
जौलों नहिं रबि रूप तुम प्रगटत हृदै अकास ॥
प्रगटत हृदै अकास लाभ लघु मुद जुगुनू के ।
दुख दीनता मलीन उलूक रहैं ढिग ढूके ॥
बरनै दीनदयाल लोभ को कब भय देहो ।
तुम बिन सुख नहिं रंच सुनो संतोख अए हो ॥ ५४ ॥

क्षमा ।

बानी कटु सुनि कोप की छमा गहो न गलानि ।
कहा हानि मृगराज की भूकत जौ लषि स्वान ॥
भूकत जौ लषि स्वान हारि मानैगो आपै ।
बैठि रहो है बीर धीर तुम बोलत कापै ॥
बरनै दीनदयाल बात बुध बिमल बखानी ।
कीजै कछू न सोच सठन की सुनि कटु बानी ॥ ५५ ॥

मन ।

हे मन ये कामादि तव तनै नरक की खानि ।
तुम जानत सुखदानि हैं ये निसि दिन दुखदानि ॥

ये निसि दिन दुखदानि मीत बनि प्रीति प्रकासैं ।
अंतर अरि हैं अंत छीनि तो निज धन नासैं ॥
बरनै दीनदयाल संग इनके है छेम न ।
सुतबिबेक तें आदि करी तिन तें हित हे मन ॥५६॥

हे मन बद मद मार को कछु न करो इतबार ।
ये तो दैतन दैत हैं सुभ गुन भच्छनिहारि ॥
सुभ गुन भच्छनिहार कुमति रजनी मैं गाजैं ।
होय प्रबोध प्रभात नहीं तब तें खल राजैं ॥
बरनै दीनदयाल जगत मैं तौ लगि छेम न ॥
जौ लगि नहिं ये क्रूर कढ़ैंगे हिय तें हे मन ॥५७॥

प्रबोध प्रशंसा ।

भारी भूपति जीव यह रह्यो अखिल को ईस ।
भयो भूल बस कीटसम निज पद परयो न दीस ॥
निज पद परयो न दीस ताहि सुर सीसहि चाढ़यो ।
हे प्रबोध तुम धन्य जगतसरि बूड़त काढ़यो ॥
बरनै दीनदयाल बेद तव है जसकारी ।
चिदानंद संदोह दियो सिंहासन भारी ॥५८॥

अपर प्रसंग वर्णन ।

करनी बिधि की देखिये अहो न बरनी जाति ।
हरनी को नीको नयन बसै बिपिन दिन राति ॥
बसै बिपिन दिन राति बरन बर बरही कीने ।
कारी छबि कलकंठ किये फिरि काक अधीने ॥
बरनै दीनदयाल धीर धन तें बिन धरनी ।
बल्लभ बीचि बियोग बिलोकहु बिधि की करनी ॥५९॥

आयें काम न सांकरे रच्छक खरे अपार ।
रतनाकर अरु चंद के हुते सकल हितकार ॥
हुते सकल हितकार बिबुध बर बीर बांकुरे ।
और सूलधर ईस गदाधर धीर ठाकुरे ॥
बरनै दीनदयाल रहे सब सखा सुहायें ।
कुंभजात अरु राहु ग्रसत कोऊ काम न आयें ॥ ६० ॥

द्वैज दिवस के चंद को बंदत सबै सप्रीति ।
कहत कलंकी पूर ससि अहो कूर जग रीति ॥
अहो कूर जग रीति बढ़ै पर चौगुन दूषैं ।
मिलै कुटिल कबहूक ताहि महिमा करि भूषैं ॥
बरनै दीनदयाल न प्रापति है दिन द्वय के ।
तबै करैं बहुमान जथा ससि द्वैज दिवस के ॥ ६१ ॥

जाको खोजत सो मिलै यामें संसय नाहिं ।
बिरचे माखी मधु सुधा भीषन बन के माहिं ॥
भीषन बन के माहिं सिंह गजराज बिदारैं ।
मुकुता मिलै मराल मिलिंद सरोज बिहारैं ॥
बरनै दीनदयाल स्वातिजलऊ पपिहा को ।
मिलै भली बिधि आय जौन जग खोजत जाको ॥ ६२ ॥

भूप-कूप-श्लेष ।

कूपहि आदर उचित है नहीं गुनिन को हेय ।
अंतर गुन को ग्रहन करि फिर फिर जीवन देय ॥
फिर फिर जीवन देय गुनी गुन वृथा न जावैं ।
अति गंभीर हिय दुहू झुके तें अमृत लखावैं ॥
बरनै दीनदयाल न देखत रूप कुरूपहि ।
जो घट अरपन करै ताहि तें ममता कूपहि ॥ ६३ ॥

सज्जन-ढेकुल-श्लेष ।

गुन को गहि यहि खेत में नमैं सुबंसज दोय ।
कुसितन जीवन देत हैं पीछे गुरुता होय ॥
पीछे गुरुता होय कूप तें आदर पावैं ।
ऊँच कहैं सब कोय अमृत घट पुन्य सुहावैं ॥
बरनै दीनदयाल धन्य कहिये जग उन को ।
सहि दुख सुख दैं सबै सरल अति हैं गहि गुन को ॥६४॥

सूक्ष्माऽलंकार ।

कासों हनिये कोप को कापैं पैये ज्ञान ।
गुरू मौन मैं नहिं कह्या छिति छ्वैके धरि कान ॥
छिति छ्वैके धरि कान दसन रवि फेरि लखाए ।
देखि केस की ओर सुनै न कपाट लगाए ॥
बरनै दीनदयाल सिख्य गुरु की करुना सों ।
समुझि लई सब सैन बैन तिन कह्यो न कासों ॥६५॥

मुद्राऽलंकार ।

कोई सारस नहिं मिलै मदन बान के बीच ।
मीन केतु की कीच फँसि कुंद भई मति नीच ॥
कुंद भई मति नीच निवारी जाय नहीं है ॥
जुही समग्री स्याम जपा करनाम सही है ।
जाती दीनदयाल बिमल बेला सब्बोई ।
ताहि चेतकर-बीर धीर बरने सब कोई ॥ ६६ ॥

सो नाहीं नर सुवर है जो न भजे श्री रंग ।
पारावार अपार जग बूड़त भौंर कुसंग ।
बूड़त भौंर कुसंग ठौर ता महि नहिं पावै ।
सीसहु देत डुबाय भलो हाथहुँ न उठावै ॥

बरनै दीनदयाल रूप हरि को तिहि माहीं ।
ध्यान धरै दृढ़ नाव जानि बूड़त सो नाहीं ॥ ६७ ॥

व्याजस्तुति ।

कासी हाँसी मुनि करैं सुनि करनी तव एक ।
दासी तपसी एक सी दै गति बिना बिबेक ॥
दै गति बिना बिबेक एक या और कुचाली ।
अरपै कोऊ कोटि तिन्हैं लै करो कपाली ॥
बरनैं दीनदयाल काय तिहुँ तिन की नासी ।
परे सरन जे आय कहा यह कीनी कासी ॥ ६८ ॥

सुर धुनि वंकित किमि चलै चकित सुकवि इहि हेत ।
अहो होति लज्जित नहीं खलन ईस पद देत ॥
खलन ईस पद देत नहीं परिनाम बिचारें ।
बाँधै गहि लै जटा न वे उपकार निहारें ॥
बरनै दीनदयाल परी सब तो सिर पै सुनि ।
करी अकरनी जौन भोग ताको री सुर धुनि ॥ ६९ ॥

प्रेम पंचक सवैया ।

छल बंचक हीन चले पथ याहि प्रतीत सुसंबल चाहनो है । तहं संकट वायु वियोग लुवैं दिल को दुख-दाव में दाहनो है ॥ नद सोक विषाद कुग्राह ग्रसैं करि धीरहि तें अवगाहनो है । हित दीनदयाल महा मृदु है कठिनो अति अंत निबाहनो है ॥ ७० ॥

सजि सेज सुबारि विलूलन की तहँ मीत मतंग सो आवनो है । वरु नीर रखै सिकता घट में मकरी पट सिंह फँसावनो है ॥ सुगमै बरु बारिधि पैरिबो है पय ऊपर तारिबो पाहनो है । हित दीनदयाल महा मृदु है कठिनो अति अंत निबाहनो है ॥ ७१ ॥

रसना अहि की गहिवी सुगमै बन कंटक गौन उबाहनो है । गिरि तें गिरबो भिरबो गज तें तिरबो बड़वागि को थाहिनो है ॥ रन

एक अनेकनि तें जु लरै तिमि ताहि न सूर सराहनो है। हित दीन-दयाल महा मृदु है कठिनो अति अंत निबाहनो है ॥ ७२ ॥

पछ्रत्त तुरीन के हैं सुगमैं नख नाहर को हठि गाहनो है। विष नीर की पीर कौ धीर सहै चढ़ि चीर सरीरहि दाहिनो है ॥ मरु कूप के बीच फँसे सुगमै बरु मीच तें बैर बिसाहनो है। हित दीनदयाल महा मृदु है कठिनो अति अंत निबाहनो है ॥ ७३ ॥

खल निंदक सूकर भैं जहँ है गरजैं गज मत्त उराहनो है। कुल-कानि अपार पहार जहाँ गुन लोग सँकोच कुथाहनो है ॥ जल भीर भरी विपदा की सरी तहँ पंक कलंकहि गाहनो है। हित दीनदयाल बड़ो बन है कठिनो अति अंत निबाहनो है ॥ ७४ ॥

दोहा।

पंचक यह है प्रेम को रंचक चित जो देइ।
छल बंचक बंचै न तिहि दीनदयालु जु सेइ ॥ ७५ ॥

ग्रन्थान्ते मङ्गलम्।

मेटनहारे विघन के बिघन बिनायक नाम।
रिधि सिधि विद्या उदर ते लंबोदर अभिराम ॥
लंबोदर अभिराम सकल सुभ गुन हिय धारे।
और गहन के हेत देत मनु दंत पसारे ॥
बरनै दीनदयाल भर्‌यो अजहूँ लों पेट न।
वक्रतुंड करि काह चहत ब्रह्मंड समेटन ॥ ७६ ॥

दोहा।

यह अन्योक्तिसुकल्पद्रुम साखा बेद बखानि।
विरची दीनदयालगिरि कविद्विजबर सुखदानि ॥ ७७ ॥
कुंडलिया सु घनाच्छरी सुखद सु दोहा वृत्त।
हरै सवैया मालिनी मिलि पंचामृत चित ॥ ७८ ॥

यह कलपद्रुम ग्रंथ में मधुर छंद सुचि पंच ।
पंचामृत हिय पान करि जड़ता रहै न रंच ॥ ७६ ॥
कर छिति निधि ससि साल में माघ मास सित पच्छ ।
तिथि बसंत जुत पंचमी रबि बासर सुभ स्वच्छ ॥ ८० ॥
सोभित तिहि औसर बिषे बसि कासी सुखधाम ।
बिरच्यो दीनदयाल गिरि कलपद्रुम अभिराम ॥ ८१ ॥
अभिमत फलदातार यह विविध अर्थ को देत ।
जौ धुनि गुनि कवि मुदित मन पढ़िहैं प्रेम समेत ॥ ८२ ॥
उपालंभ अरु नीति जुत प्रीति रसहु सुबिराग ।
बिविधि भांति सुमनस लसैं यामे सुमन सराग ॥ ८३ ॥
सोभित भ्रतिमतिथल सु यह सुमन सहित सब काल ।
अरप्यो दीनदयालगिरि बनमालिहि सुरसाल ॥ ८४ ॥

इति श्रीकाशीवासी दीनदयालगिरिविरचिते अन्योक्तिकल्पद्रुमे चतुर्थी शाखा समाप्ता ।

इति ।